ॐ

श्रीअभय जैन ग्रन्थमाला पुष्प ७ वां

युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरि

लेखक :

अगरचन्द नाहटा

भंवरलाल नाहटा

प्रकाशक :

नाहटा ब्रदर्स

४ जगमोहन मल्लिक लेन, कलकत्ता

द्वितीयावृत्ति १०००]   वि० सं० २०२६   [मूल्य २.००

प्राप्ति स्थान :

(१) श्री रामलालजी लूनिया
नया बाजार, अजमेर

(२) राजरूपजी टांक
जौहरी बाजार, जयपुर

(३) अगरचन्द नाहटा
नाहटा गवाड़, बीकानेर

मुद्रक :
वैशाली प्रिंटिंग प्रेस, जौहरी बाजार, जयपुर ।

महामहोपाध्याय रायबहादुर पण्डित गौरीशंकरजी हीराचंदजी ओझा महोदय की

सम्मति

सत्रहवीं शताब्दी के जैन समाज के आचार्यों में एक श्री जिनचन्द्र सूरिजी नामक बड़े ही प्रभावशाली आचार्य हो चुके हैं; जिनका उपदेश उस समय के तत्कालीन मुगल बादशाह अकबर ने सुनकर अपने साम्राज्य में से हिंसावृत्ति को बहुत कुछ रोक दी थी। उनकी तपस्या और त्याग वृत्ति ने बादशाह का चित्त जैन धर्म की ओर खींच लिया था, जिससे जैन धर्म का विकास होकर उस तरफ उत्तरोत्तर आस्था बढ़ती जाती थी। फलतः बादशाह अपने यहां प्रायः जैन साधुओं को बुलाकर उनसे उपदेश ग्रहण किया करता था। वह जैन समाज के लिये स्वर्ण युग था और कर्मचन्द्र बच्छावत जैसे श्रावक उसमें मौजूद थे। इतिहास से स्पष्ट है कि अकबर के समय के जैन आचार्यों ने इस प्राचीन धर्म की संरक्षा के लिये कठिन तपस्या की थी। वास्तव में देखा जाय, तो मध्यकालीन युग के भारत के इतिहास को सुरक्षित रखने का बहुत कुछ श्रेय जैन साधुओं को भी है, जिन्होंने कई ग्रन्थ निर्माण कर संस्कृत साहित्य को जीवित रखने का बड़ा प्रयत्न किया है।

हिन्दी संसार अभी तक ऐसे साहित्य-रक्षकों से अपरिचित है, अतएव इस कमी को पूरी करने के लिये बीकानेर निवासी श्री अगरचन्दजी नाहटा और श्री० भंवरलालजी नाहटा को बड़ी लगन है। उनकी प्रथम कृति 'युगप्रधान श्री जिनचन्द्र सूरि' मेरे सामने है।

पुस्तक उपयोगी है और प्राचीन पुस्तकों, पट्टावलियों, शिलालेख आदि के आधार पर लिखी गई है, जिससे उस समय की परिस्थिति और आचार्य श्री जिनचन्द्र-सूरिजी के जीवन की खासी झांकी होती है।

श्री० अगरचन्दजी नाहटा और श्री० भंवरलालजी नाहटा खोज के बड़े प्रेमी हैं। श्री अगरचन्दजी नाहटा द्वारा लिखित 'विधवा-कर्त्तव्य' और श्री भंवरलालजी नाहटा लिखित 'सती मृगावती' अपने विषय की अच्छी पुस्तक है, और मैं उनके उत्साह की प्रशंसा करता हूँ।

गौरीशंकर हीराचन्द ओझा

अजमेर,
ता० १७ सितम्बर, १९३५

कविवर समयसुन्दरोपाध्याय कृत

युगप्रधान श्रीजिनचन्द्र सूरि अष्टक

एजी संतन के मुख वाणि सुणी, जिनचन्द्र' मुणिद महन्त यति।
तप जप करै गुरु गुर्ज्जर में, प्रतिबोधत है भवि कुं सुमति॥
तब ही चित चाहन चूंप भई, 'समयसुन्दर' के प्रभु१ गच्छपति।
पठइ२ पातशाहि अज्जब३ की छाप, बोलाए गुरु गजराज गति॥१॥

एजी 'गुज्जर' तें गुरुराज चले, विच४ में चौमास 'जालोर' रहे।
'मेदनीतट' मन्त्री मंडाण कियो, गुरु 'नागौर' आदर मान लहै॥
मारवाड 'रिणी' गुरु वन्दन को, तरसै 'सरसै' विच वेग बहै।
हरख्यो संघ 'लाहोर' आये गुरु, पातिशाह अकबर पाँव गहे॥२॥

एजी शाहि 'अकबर' बब्बर के, गुरु सूरति देखत ही हरषै।
हम योगी यति सिद्ध साधु व्रती, सबही षट दर्शन के निरखै॥
तप जप्प दया धर्म धारण को, जग कोइ नहीं इनके सरखै।
'समयसुन्दर'६ के प्रभु धन्य गुरु, पातिशाह 'अकबर' जो परखै॥३॥

एजी७ अमृतवाणी सुणी सुलतान, ऐसा पातिशाह हुकम किया।
सब आलम मांहि अमारि पलाइ, बोलाय गुरु फरमाण दिया॥
जग जीव दया धर्म दाखण तें, जिन शासन में जु सोभाग लिया।
'समयसुन्दर' कहै गुणवन्त गुरु, दृग देखी हरषित होत८ हीया॥४॥

---

१ गुरु २ भेजे ३ अकब्बरी ४ अधविच ५ में ६ टीपीविशऽमावस चन्द उदय, भज तीन बताय कला परखै (मुद्रितमें पाठान्तर) ७ गुरु ८ भव्य

एजी९ श्रीजी गुरु धर्म गोठ१० मिलै,सुलताण 'सलेम' अरज्ज करी ।
गुरु जीव दया नित चाहत११ है, चित्त अंतर प्रीति प्रतीति धरी ॥
'कर्मचन्द' बुलाय दियो फुरमाण, छोडाइ 'खंभाइत' की मच्छरी ।
'समयसुन्दर' कहै सब लोकनमें,जु१२ खरतरगच्छकी ख्याति खरी॥५॥

एजी श्री 'जिनदत्त' चरित्र सुणी, पातिशाह भयो गुरुराजिय१४ रे ।
उमराव सबै कर जोड़ि खडे, पभणै अपणै मुख हाजिय रे ॥
युगप्रधान१३ किये गुरु कुं, गिगडदूं धुंधुं वाजिय रे ।
'समयसुन्दर' तू ही जगत गुरु, पातिशाह 'अकबर' गाजिय रे ॥६॥

एजी ज्ञान विज्ञान कला सकला, गुण देख मेरा मन रीझिये जी ।
हिमायुं को नन्दन एम अखै, मानसिंह 'पटोधर' कीजिये जी ॥
पतिशाह हजूरि थप्यो 'सिंहसूरि',मंडाण मंत्रीश्वर१५ वींजियैजी ।
'जिणचन्द्र'१६ अने'जिनसिंहसूरि', चन्द्रसूरज ज्युं प्रतपीजियैजी ॥७॥

एजी 'रीहड' वंश विभूषण हंस, खरतर गच्छ-समुद्र शशि ।
प्रतप्यो'जिनमाणिकसूरि'के पाट१७, प्रभाकर ज्युं प्रणमो उलसी ॥
मन शुद्ध 'अकबर' मानतु है, जग जाणत है परतीति इसी ।
जिणचन्द्र मुणिन्द चिरं प्रतपो, 'समयसुन्दर' देत आशीस इसी ॥८॥



---

९ इम १० ध्यान ११ प्रेम वरै १२ जु १३ चामर छत्र मुरा तव भेट १४ रीझियै १५ कीजियैजु १६ पटे १७ पट्ट ।

वक्तव्य



सतरहवां सैका भारत का स्वर्णयुग था। इससे पहिले की कई शताब्दियोंकी तुलना करनेसे इस समयमें युगान्तर सा ज्ञात होता है। उस समय जैन धर्मकी अवस्था बड़ी उन्नत थी। आचार्यदेवकी आज्ञा भक्तोंके लिये शाही आज्ञा से भी कहीं अधिक उपादेय समझी जाती थी, इसी कारण प्रत्येक गच्छ और समुदाय का संगठन इतना सुदृढ़ था कि उसके सामने बड़ी-बड़ी सत्ताएं भी टकरा कर पीछे हट जातीं और सिर झुकाती थीं। भक्तिवाद का साम्राज्य इस समय बड़े जोरों से था। जैन धर्ममें ही नहीं बल्कि अन्य धर्मों में भी भक्ति रसका पोषण इस समय प्रचुर प्रमाणमें हुआ था। हमने हमारे चरित्र नायकके गुणानुवादकी, तत्कालीन लिखी हुई १०८ गहूंलियां (भक्तिकाव्य) संग्रहकी है, जिनको पढ़नेसे उस समयके विद्वानोंकी आचार्य देवके प्रति कितनी अगाध भक्ति थी, इसका अच्छा परिचय मिल जाता है।

हिन्दी-भाषाका अधिकाधिक प्रचार और सुव्यवस्थित रूपसे गठन भी इस शताब्दीसे प्रारम्भ हुआ है। इस शताब्दीके रचित और लिखित ग्रन्थों की संख्या बहुत विशाल है। अतः साहित्यक युगके नाते भी यह शताब्दी विशेष उल्लेखनीय है।

सम्राट् अकबर आदि उस समय के राज्य शासक स्वयं विद्या-विलासी थे, अतः प्रत्येक धर्म-प्रचारक विद्वानकी, विद्वत्ता और आचार ही सर्वोच्च कसौटी थी, इस कसौटी पर जैन विद्वानोंने उत्तीर्ण होकर राज्यशासकों एवं अन्य विद्वानोंपर भी अपना असाधारण प्रभाव जमा लिया था। जिसके फलस्वरूप इस समय ऐसे कई काम हुए जो सदाके

लिये चिरस्मरणीय हैं। अकवर के शासनकाल में प्रजाको जो शान्ति प्राप्त हुई, इसमें जैनाचार्यों और विद्वानों का सतत उपदेश ही प्रधान कारण है।

जैनाचार्योंने इसके पहले और पीछे भी, समय समयपर राजसभाओंमें वहुत सन्मान प्राप्त किया है एवं जैनधर्मकी महान् सेवा और अत्यधिक प्रचार करके शासनकी परम प्रभावना की है। आर्य्य नृपतियोंकी राजसभाओंमें उनकी विद्यमानताके प्रमाण मौजूद हैं। उन्होंने अपनी प्रखर मेधा और असाधारण पाण्डित्यका परिचय देकर अजैन विद्वानों पर भी अपनी विद्वत्ता एवं उत्कृष्ट चारित्रका गहरा प्रभाव डाला है।

राजसभाओंमें खरतर-गच्छाचार्य।

खरतर गच्छ के विद्वानों का नृपतियोंकी सभाओंमें वड़ा ही गौरवास्पद स्थानथा। "खरतर" विरुद प्राप्तिसे लगाकर जिन-जिन आचार्योंने राज सभाओं में अपना प्रभाव फैलाकर सन्मान प्राप्त किया है, उनके कतिपय नाम ये हैं :—श्रीजिनेश्वर-सूरिजी ने गुर्जराधीश दुर्लभ राज+की सभामें, श्रीजिनवल्लभसूरिजीने धारानरेश नरवर्मकी सभामें, श्रीजिनदत्तसूरिजी का अजमेरके अर्णोराज और त्रिभुवनगिरिके कुमारपाल का प्रतिबोध* मणिधारी श्रीजिनचन्द्रसूरिजीका दिल्ली के राजा मदनपाल पर प्रभाव× और श्रीजिनपति सूरिजीका अन्तिम हिन्दू सम्राट पृथ्वीराजकी सभामें तथा राजा जयसिंह

+सड्डिय दुल्लह राए सरसइ अंको वसोहिए सुहए।
मज्झे रावसहं पविसिऊण लोयागमाणु मयं॥ ६६॥

(गणधर सार्ध शतकम्)

* इन सव वातोंके लिये "गणधर सार्धशतक वृहद्वृत्ति" देखना चाहिये

× यह सम्वन्ध युगप्रधानाचार्य प्राचीन गुर्वावली में है।

एवं आशिका नरेश भीमसिंह की सभा में वादियों को शास्त्रार्थ में परास्त कर सम्मानित होना, इतिहाससे भली भांति सिद्ध है÷।

आर्य-संस्कृतिके विनाशक मुसलमान बादशाहोंपर भी उनका प्रभाव विशेष उल्लेखनीय है। क्योंकि भिन्न जाति, भिन्न प्रकृति और भिन्न विचारवाले मुसलमान बादशाहोंपर प्रभाव जमाना, देशी नरेशों की अपेक्षा अति कठिन कार्य था। वे लोग हरएक पर जरा-जरासी बातोंमें बिगड़ जाते और यद्वातद्वा दण्ड दे डालते थे। उन मुसलमान सम्राटोंपर सर्वप्रथम प्रभाव जमाने का श्रेय भी खरतर गच्छ के आचार्योंको ही है।

कलिकाल केवली श्रीजिनचन्द्रसूरिजी (सं १३४९–७६) ने सुलतान कुतुबुद्दीनको चमत्कृत किया ×। उसके पश्चात् श्री जिनप्रभ सूरि जी÷ ने सं० १३८५ पोष शुक्ला २ (८) शनिवारके सन्ध्या समय महमूद तुगलक बादशाहसे मिलकर इतना जबरदस्त प्रभाव डाला कि

÷देखें 'ऐतिहासिक जैन काव्यसंग्रह' के पृष्ठ ९ में:—

"पामिउ जेमु छत्तीस विवादहि, जयसिंह पुहविय परषदइ ए।
बोहिय पुहवी पमुह नरिन्दह, निमुणिय वयणि जिण धम्मु करइ ए ॥१६॥
इन शास्त्रार्थोंका विस्तृत और मनोरंजक वर्णन प्राचीन गुर्वावली में है।

खरतर गच्छके और भी कई आचार्योंने नृपतियों द्वारा सम्मान प्राप्त किया है, जिसका उल्लेख प्राचीन गुर्वावली आदि में है।

× कुतुबुद्दीन सुरताण राउ, रंजिउ स मणोहरू।
जगि पयडउ जिणचन्दसूरि, सूरिहि सिर सेहरू॥
(जिनकुशलसूरि रास, ऐ. जै. का. सं० पृ० १६)

÷इनके विषय में 'विविध तीर्थ कल्प'—कन्यानय तीर्थ कल्पादय और पं० लालचन्द्र भगवानदास गांधीका लेख 'जैन' पत्र के रौप्यमहोत्सवांक, और गीतत्रय ए. जै. का. सं० पृ० ११ से १४ में देखने चाहिये।

प्रभाव देशी नरेशों तक ही सीमित न होकर, मुसलमान वादशाहों पर भी यथेष्ट था।

हम ऊपर बतला चुके हैं कि खरतरगच्छाचार्यों का प्रभाव आर्य्य नरपतियों पर खूब जमा हुआ था, यहां तक कि वे उन्हें अपना धर्म-गुरु मानते थे—बीकानेर, जैसलमेर, जोधपुर, जयपुर आदि नरेशों से तो अविछिन्न सम्बन्ध रहा है, जिसके फलस्वरूप आज भी ताम्र पत्र, पट्टे, परवाने, खास-रूक्के आदि विपुल परिमाण में उपलब्ध हैं।

प्रयुक्त सामग्री की प्रामाणिकता—

हमने सूरिजी के जीवन चरित्र की प्रायः सभी बातें तत्कालीन लिखित विश्वसनीय प्रमाणों के आधार से ही लिखी हैं। विहार पत्र, गहूंलियें आदि अधिकांश सामग्री हमारे संग्रह में मौजूद है।

छट्ठा प्रकरण "अकबर आमन्त्रण" प्रायः 'अकबर प्रतिबोध रास' के आधार पर ही लिखा है, जिसकी मूल प्रति, कर्त्ता की स्वयं लिखित उ० श्रीजयचन्द्र जी गणि के भण्डार (बीकानेर) में है और इसे "ऐ० जैन काव्य संग्रह" में हमने प्रकाशित कर दिया है। कर्मचन्द्रवंश प्रबन्ध वृत्ति* से हमने पूर्णतः सहायता ली है, क्योंकि उस में भी विशेष सामग्री है—वह सबसे अधिक प्राचीन, (रचना संवत् १६५०-५५) विश्वसनीय और सूरिजी के साथ ही लाहौर जाने वाले परम गीतार्थ विद्वान की रचना है, अतएव इसमें सन्देह को तनिक भी स्थान नहीं है। 'अकबर प्रतिबोध' और 'युग प्रधान पद प्राप्ति' नामक प्रकरण द्वय इसी ग्रंथ के मुख्याधार से लिखे गये हैं। इनके अतिरिक्त अनेकों शिलालेख, प्रशस्तियों, प्राचीन पट्टा-वलियाँ, हस्तलिखित ग्रन्थ आदि प्रामाणिक साधनों द्वारा इस ग्रंथ का संकलन हुआ है।

चित्र और फरमान पत्र—

सूरिजी के अकबर मिलन का चित्र* इस पुस्तक में दिया गया है। उसका ब्लॉक हमें "श्री जिनकृपाचन्द्र सूरि ज्ञान भण्डार" इन्दौर से प्राप्त हुआ है, एतदर्थ हम उक्त ज्ञान भण्डार के संरक्षक चाँदमलजी को धन्यवाद देते हैं। ऐसे प्राचीन चित्र कई जगह उपलब्ध है, (देखें पृष्ठ ११० की फुटनोट) एवं दादाजी के मन्दिरों की दीवारों पर भी चित्रित पाये जाते है। सूरिजी के विराजे हुए और उनके समक्ष सम्राट अकबरादि हाथ जोड़े खड़े है—ऐसा चित्र कलकत्ते में सुप्रसिद्ध राय बद्रीदास बहादुर के मन्दिर में लगा हुआ है। चरित्र नायक का एक स्वतन्त्र फोटो सेढूजी के मन्दिर (बीकानेर) में भी है। पंचनदी साधते समय का एक और चित्र श्री पूज्यजी श्री जिनचारित्र सूरिजी के पास है।

सूरिजी की मूर्ति, जो कि श्री ऋषभदेवजी के मन्दिर में है और जिसका शिला लेख पृ० १५८ में छपा है, उसका सुन्दर फोटो इस पुस्तक में दिया गया है, किन्तु उस स्थान की विषमता के कारण फोटो में शिलालेख की प्रतिकृति न आ सकी।

आषाढ़ी अष्टान्हिकाका मूल फरमान जो कि हमें पं० प्र० यतिवर्य सूर्यमलजी की कृपा से प्राप्त हुआ है। उसका फोटो इसके परिशिष्ट में लगा दिया है। लखनऊ के भण्डार से प्राप्त करने में

---

* श्रीमान् हीरविजय सूरिजीका भी ऐसा ही फोटो कई ग्रन्थोंमें प्रकाशित हुआ है, पर उसकी प्राचीनता और प्रमाणिकता के विषय में पुरातत्वविद श्री विद्याविजय जी से पूछने पर, मिती फाल्गुन शुक्ला १० (वी० सं० २४६१) पाटण से दिये हुए कार्डमें आप इस प्रकार लिखते हैं :—

१ हीर वि० सू० और अकबर के मिलन का चित्र बनावटी है। मैंने लखनऊ में बनवाया था।

हम यतिजी का आभार मानते हैं । दूसरा शत्रुन्जय तीर्थ विषयक फरमान (मूल) खोज करने पर भी न मिला । उसका अनुवाद बीकानेर ज्ञान भण्डारस्थ पत्र से नकलकर परिशिष्ट में प्रकाशित किया है ।

सूरि जी ने सं० १६५४ में भी शत्रुंजय की यात्रा की थी एवं वहां मोटी टुंक (विमलवसही) के समक्ष सभा मण्डप में दादा श्री जिनदत्त सूरिजी और श्री जिनकुशल सूरिजी की पादुकाए प्रतिष्ठित की थीं । उन दोनों के लेख सरीखे हैं । अतः पाठकों के अवलोकनार्थ एक लेख यहां देते हैं :—

सं० १६५४ वर्षे जेठ सुदि ११ रवौ दिने श्री वृहत्खरतरगच्छे श्री जिन कुशल सूरिजी पादुका श्री युगप्रधान श्री जिनचन्द सूरिभिः प्रतिष्ठितं च सं० सोना पुत्र मन्ना जगदास पुत्र सं० ठाकरसिंह पुत्र संघवी सामल का० सपरिवारेण ।

शत्रुंजय पर शिवा सोम जीकी टुंकमें श्रीजिनचन्द्र सूरिजी और श्री जिनसिंह सूरि जीकी पादुकायें श्री जिनराज सूरिजीकी प्रतिष्ठित हैं, जिनके लेख क्रमशः इस प्रकार हैं :—

संवत् १६८१.............................युगप्रधान श्री जिनचन्द्र सूरिश्वराणां पादुके कारिते डोसी गोत्रीय सं० फ०...............श्रीकमललाभोपाध्याय पं० लब्धिकीतिगणिः पं० राजहंस गणि पं० वा । मरुदेव विजयादि युतेन उ० (प?) देशन तव श्रेयसे शुभं भवतु प्रतिष्ठितं वृहत्खरतर गच्छाधिराजः श्री जिनराज सूरिभिः*

सं० १६९५ वर्षे वैशाख सुदि १३ शुक्रे कानुमाराव (काश्मीराद्य) नार्य देश वोध विहारादी प्रचार प्रथार मारि प्रवर्त्तक सर्वविधान

---

* सं० १६७४ में प्रतिष्ठित सूरिजी की चरणपादुकाएं जेसलमेर में हैं । देखें जेसलमेर लेख संग्रह, लेखांक २५०० ।

नर्त्तकी नर्त्तक जहांगीर नूरद्दीन पातिसाहि प्रदत्त युगप्रधान पद श्री जिनसिंह सूरीणां पादुके प्रतिष्ठिते श्री जिनराज सूरिभिः सकल सूरि राजाधिराजैः ॥

इनके अतिरिक्त और भी तत्कालीन अनेक विद्वानोंकी चरण पादुकाएं वहां प्रतिष्ठित हैं, जिसके प्रकाशित होनेसे वहुतसा इतिहास प्रकाशमें आ सकता है।

द्वितीयावृत्ति—

पाठकों को यह जानकर वड़ी प्रसन्नता होगी कि इस ग्रंथ का विद्वत जगत और जनसाधारण में वड़ा आदर हुआ है। स्वर्गीय पूज्य लब्धि मुनिजी ने इस ग्रंथ के अनुवाद रूप में यु० जिनचन्द्र सूरि चरित्र नामक संस्कृत काव्य वनाया जो कलकत्ते से प्रकाशित भी हो चुका है। इसी प्रकार गुजराती अनुवाद भी स्वर्गीय पूज्य बुद्धि मुनिजी के सम्पादित महावीर स्वामी देहरासर वम्बई से सं० २०१८ में प्रकाशित हो चुका है।

प्रस्तुत ग्रंथ के छपने के वाद युग-प्रधान जिन दत्त सूरि, मणि-धारी जिनचन्द्र सूरि, दादा जिन कुशल सूरि इन तीनों दादा गुरुदेवों के चरित्र हमारे लिखे प्रकाशित हुए और उनके भी संस्कृत काव्य एवं गुजराती अनुवाद प्रकाशित हो चुके हैं। यह चारों दादा साहव की अचिन्त्य महिमा और महान प्रताप का ही सुफल है।

चौथे दादा गुरुदेव का हिन्दी में लिखा हुआ हमारा प्रस्तुत ग्रंथ वहुत वर्षों से अप्राप्य था। अभी-अभी यु० जिनचन्द्र सूरि के पावन स्वर्गस्थल-विलाड़ा की दादावाडी के जिर्णोद्धार और प्राचीन चरण पादुका स्थापन एवं प्रतिष्ठा होने जा रही है। इस शुभ प्रसंग से यह संक्षिप्त द्वितीयावृत्ति प्रकाशित की जा रही है। समय कम

था और ग्रंथ काफी बड़ा था, अतएव इतने समय में पूरा ग्रंथ छपना कठिन था।

अतः पीछे प्रकरणों, परिशिष्टों और प्रस्तावना आदि को कम करके आवश्यक अंश ही छपवाया गया है।

इस द्वितीयावृत्ति की प्रकाशन व्यवस्था के लिये हम श्री रामलाल जी लूनिया तथा श्री राजरूप जी टाँक के विशेष आभारी हैं।

विनीत :

अगरचन्द भंवरलाल नाहटा

अनुक्रमणिका

ग्रन्थ-प्रवेश

चित्र-सूची

* ॐ *

युग-प्रधान श्रीजिन-चन्द्रसूरि

पहला प्रकरण

परिस्थिति



रतवर्ष का प्राचीन-इतिहास अतिशय उज्ज्वल और गौरवमय है। क्या धार्मिक, क्या सामाजिक और क्या राजनैतिक सभी क्षेत्रों मे इस देश का अतीत गौरव—सर्वोपरि है! भगवान महावीर और बुद्ध जैसे प्रातः स्मरणीय परम तत्त्ववेत्ता महापुरुष इसी रत्नगर्भा भारत-वसुन्धरा में अवतीर्ण हुए हैं। जिनके गहन तत्वज्ञान के अध्ययन से विज्ञान और शिक्षा के सर्वोपरि धुरंधर पाश्चात्य विद्वान भी चकित और मुग्ध हो जाते है। जिन आधुनिक आविष्कारों को गहन तत्त्व-चिन्तन और निरन्तर परिश्रम से पाश्चात्य विद्वानों ने आविष्कृत कर समस्त संसार को चमत्कृत किया है, उनका अस्तित्व, भारत के प्राचीन साहित्य में हजारों वर्ष पहिले ही से इस देश में होने के प्रमाण मिलते है। अध्यात्म-तत्त्व की चिन्ता में यह देश

इतना समुन्नत था कि जिसकी समता करने का सौभाग्य किसी भी देश को अद्यावधि प्राप्त नहीं हुआ है। आज भी उस विषय का भारतीय साहित्य इतना विपुल और गहन है कि जिसको पूर्णतः समझने के लिये पाश्चात्य धुरन्धर विद्वान् भी असमर्थ से ज्ञात होते हैं।

आध्यात्मिक एवं धार्मिक तत्त्व-चिन्ता की इतनी समुन्नति के साथ-साथ यहां का सामाजिक उत्कर्ष भी किसी प्रकार न्यून नहीं था। शिशु पालन, शिक्षा, गृहस्थ-जीवन, कौटुम्बिक सम्बन्ध, पारस्परिक व्यवहार और सामाजिक संगठन बहुत ही सुव्यवस्थित था। मानव जीवन की सफलता के प्रत्येक अङ्गों का सौन्दर्य-पूर्ण विकसित था। आचार विचारों की पवित्रता आदि भारत की सामाजिक उन्नति का उज्ज्वल अतीत गौरव इतिहास के पृष्ठों में स्वर्णाक्षरों से अङ्कित है।

राजनैतिक क्षेत्र में भारत-भूमि के उज्वल रत्न सम्राट चन्द्रगुप्त, अशोक, सम्प्रति, विक्रमादित्य, भोज, कुमारपाल आदि प्रजावत्सल नृपतियों का उच्च स्थान है। कौटिल्य के अर्थ-शास्त्र आदि भारतीय प्राचीन राजनैतिक ग्रन्थों में राज्यमर्य्यादा, राजनीति, राज्यव्यवस्था, युद्ध नीति, अधिकारियों का कर्त्तव्य, जन समुदाय के सुख के प्रति लक्ष्य आदि राजकीय सभी अङ्गों के सुव्यवस्थित होने के उल्लेख पाये जाते हैं।

"किसी के सब दिन सरखे न होई" यह कहावत भी भारतवर्ष पर पूर्णतः चरितार्थ हुई। काल चक्र के प्रबल झकोरों ने पारस्परिक फूट आदि दुर्गुण पैदाकर इस देश की उन्नति को दिनोदिन हीयमान करना प्रारम्भ किया और क्रमशः देश की शक्ति इतनी क्षीण हो गई कि जिससे उस पर विदेशी लोगों ने आक्रमण कर अपना आधिपत्य जमा लिया।

जब से रत्नगर्भा भारत-वसुन्धरा की राज्य सत्ता आर्य्य-शासकों से नष्ट होकर यवनों के हाथ चली गई तबसे भारत की प्राचीन संस्कृति में विकृति सूचक गहरा परिवर्त्तन होने लगा। मुसलमान बादशाहों ने अपनी कठोर राजनीति और असहिष्णुवृत्ति से भारत की अनुपम स्थापत्य कला और विशिष्ट-विशाल साहित्य पर कल्पनातीत वज्राघात के साथ-साथ भारतवासी लोगों को असह्य यंत्रणाएं देना प्रारम्भ कर दिया था।

इस्लाम धर्म की एकमात्र वृद्धि के अभिलाषी अत्याचारी म्लेच्छोंने अपनी अन्याय प्रवृत्तिको चरमसीमा तक पहुँचा दिया था। इस्लाम धर्म अस्वीकार करने वाले आर्यों पर नाना प्रकार के कर लगा दिये गये थे। उनमें से जजिया नाम का कर बड़ा ही भयानक और अन्यायपूर्ण था। इस कर को न देने वाली आर्य्य-प्रजा के प्राण तक ले लिये जाते थे। जगह-जगह पर मुसलमानों ने आर्य्यों के देव-मन्दिरों को तुड़वा कर उनके स्थान पर* मस्जिदें स्थापन कर आर्य्य प्रजा के हृदय में मार्मिक वेदना उत्पन्न कर दी थी।

जिस साहित्य के बिना समाज की अवस्थिति भी संदेहपूर्ण है, उस सैकड़ों वर्षों से संचित प्राचीन साहित्य और धर्म-ग्रन्थों को इतनी प्रचुर-संख्या में जलाकर व कुओं में डाल कर नष्ट कर दिया कि जिनके नाम भी अवशेष नहीं रहे। साहित्य प्रेमियों से यह छिपा नहीं है कि सैकड़ों ग्रन्थों के अस्तित्व के प्रमाण मिलने पर भी वे ग्रन्थ अब नहीं मिलते।

आदर्श और उन्नत शिल्प कला के आगार हजारों देव मन्दिर तुड़वाकर छिन्न-भिन्न कर दिये गये। जिनका ध्वंसावशेष अब भी

---

* इसके प्रमाण स्वरूप आज भी बड़े मस्जिदोंके पास में मन्दिरों के खंडहर-पत्थर, और स्तम्भ-शिलाओंमें शिलालेख लगे हुवे पाये जाते हैं।

कहीं-कहीं अपनी प्राचीन गौरव गाथा का परिचय दे रहा है। उनके धाराशायी होने के एकमात्र कारण मुसलमान अधिकारी ही थे। यह अन्याय प्रवृत्ति पठान शासकों के समय में तो बहुत ही बढ़ चुकी थी, जिसका वर्णन श्रीयुत बंकिमचन्द्र लाहिड़ी अपनी पुस्तक "सम्राट अकबर" में इस प्रकार करते हैं :—

अर्थात्—पठानों के अत्याचार से भारत श्मसान अवस्था को प्राप्त हो गया, जो साहित्य वाटिका सर्वदा नये-नये पुष्पों के सौन्दर्य और सुगन्धि से प्रफुल्लित रहती थी वह भी सूख गई। स्वदेश-हितैषिता, निःस्वार्थ परायणता, ज्ञान और धर्म ये सब भारतवर्ष से अलग हो गये। सारा देश विषाद और अनुत्साह की काली घटाओं से आच्छादित हो गया।

एक तो आर्य्य लोग पठानों के त्रास से त्रस्त हो ही चुके थे दूसरे तैमूरलङ्ग के भयंकर आक्रमण से तो भारतवर्ष को इतनी क्षति पहुँची कि जिसका वर्णन किया जाय तो एक छोटा-मोटा ग्रन्थ बन जाय।

संक्षेप में इतना कहना ही पर्याप्त होगा कि उन्होंने अपनी पाशविक काम और लोभ वृत्ति को पूरी करने के लिये जनहत्या, लूटपाट, और स्त्रियोंका सतीत्व भंग आदि अमानुषिक दुष्कृत्य करके भारतीय प्रजाको अत्यन्त कष्ट पहुंचानेमें कोई कसर नहीं रखी। तैमूरके इस उपद्रवसे पठानोंकी राज्य-सत्ताको धक्का अवश्य ही पहुँचा, किन्तु तो भी उन्होंने अपना जाति-स्वभाव न छोड़ा।

सिकन्दर लोदी आदि बादशाहों ने मन्दिरों को नष्ट करने का काम चालू ही रखा। कविवर लावण्यसमय ने क्या ही मार्मिक शब्दों में कहा है:—

जिहां जिहां जाणइ हिन्दू नाम, तिहां तिहां देश उजाडइ गाम ।
हिन्दू नो अवतरियउ काल, जू चालि तू करि संभाल ॥
(सं० १५६६ में रचित "विमल प्रबन्ध")

उसके पश्चात् मुगल बादशाहों के समयमें भी यह अत्याचार ज्योंका त्यों बना रहा। सन् १५३० ई० में बाबरका देहान्त होजाने से उसका पुत्र हुमायूं बाईस वर्षकी अवस्थामें दिल्लीकी राज-गद्दी पर बैठा, किन्तु अभागे भारत में तो अशान्ति ही रही। और तो दूर रहा स्वयं हुमायूं भी कितने ही वर्षों तक पदच्युत होकर देश-विदेश में भटकता फिरा। इस प्रवासमें उसके एक तेजस्वी पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसका नाम उसने "जलालुद्दीन अकबर" रखा। कुछ समयके पश्चात् हुमायूं ने युद्ध करके दिल्लीका राज्य फिरसे ले लिया। उसकी मृत्यु के पीछे अकबर राज-गद्दी पर बैठा, परन्तु इसकी बाल्यावस्था होनेके कारण कुछ वर्षों तक तो राज्यमें अशान्ति ही रही। क्योंकि उसके विश्वस्त पुरुष बैरम खां के हाथोंमें ही राज्य व्यवस्थाकी सारी बागडोर थी। वह बड़ा क्रूर और अन्यायी था, इससे प्रजाको सुख मिलना तो दूर ही रहा, स्वयं अकबर ही के विरुद्ध उसने षडयंत्रकी रचना की थी, परन्तु अकबरको मालूम हो जाने से उसने अपने सेनापति मुनीम खां को युद्धके लिये पंजाब भेजकर सन् १५६० ई० में बैरम खां को कैद करवाया।

अब दिल्लीका निष्कण्टक राज्य अकबरके हाथ आ गया। वह लगभग बारह वर्षों तक युद्ध करके अधिकांश भारतका स्वामी होकर सुखपूर्वक राज्य करने लगा। शताब्दियों के कष्टसे ऊबी हुई भारतीय जनताको इस समय कुछ शान्ति मिली।

भारतकी मध्यकालीन राजनैतिक परिस्थिति के विषयमें ऊपर संक्षिप्त प्रकाश डाला गया है। राजनैतिक और सामाजिक विषयमें परस्पर घनिष्टता होनेके कारणसे उस समयकी सामाजिक

परिस्थिति भी अति शोचनीय और विकट हो गयी थी। अपने पूर्वजों के गौरव की रक्षा करना तो दूर रहा, किन्तु अपना जीवन निर्वाह भी करना आर्य्य प्रजाके लिये दुष्वार हो गया था। साहित्य रचनादिका कार्य तो मन्द गतिसे होता ही रहा, लेकिन आचार-विचारों में वह प्राचीन पवित्रता न रह सकी। अपने-अपने धन, कुटुम्ब और धर्मकी रक्षामें ही जब वे समर्थ न हो सके, तब पारस्परिक प्रेम, संगठन, शिक्षादि आवश्यकीय बातोंका ह्रास होना स्वाभाविक ही था। बाल-विवाह, पर्देकी प्रथा आदि कतिपय घातक कुरीतियाँ भी इसी समयमें प्रचलित हुई थीं, जिनका स्रोत अद्यावधि अविच्छिन्न गतिसे चलता आ रहा है।

इस संकटावस्थामें वास्तविक धार्मिकता मुरझा गयी थी। ऊपरोपरि कष्टोंको सहन करते समय आध्यात्मिक-तत्व-चिन्ताका तो अवकाश ही कहां था ? धार्मिक* फिर्काबन्दियोंने बेहद सत्ता जमा ली थी। शुष्क क्रियाकाण्ड और व्यर्थके आडम्बरोंमें सच्ची धार्मिकता समझी जाने लगी। साधुओंके कठिन आचार-विचारोंमें भी क्रमशः शिथिलताने प्रवेशकर अपना अड्डा जमा लिया था।

अवनतिके पश्चात् उन्नतिका होना, यह सहज स्वाभाविक नियम है; इसी अटल नियमके अनुसार समय-समयपर विकृतपरिस्थितिको सुधारनेके लिये महापुरुषोंका जन्म हुआ करता है। आवश्यकतानुसार उस समय भी कई महापुरुष अवतीर्ण हुए, जिनमें प्रातः

*श्रीयुक्त मोहनलालजी देसाई बी० ए० एल-एल० बी० ने अपने 'जैन साहित्य नो संक्षिप्त इतिहास' में इस प्रकार लिखते हैं :—

एकंदरे दरेक दर्शन मां—सम्प्रदाय मां भांग तोड़—भिन्नता-विच्छिन्नता थएलछे। मुसलमानीकाल हतो, लोकमां अनेक जात ना खलभलाट वधु वधु थया करता, राजस्थिति, व्यापार, रहणी करणी विगेरे बदलाया।

स्मरणीय, पूज्यपाद, महोपकारी असाधारण प्रतिभासम्पन्न हमारे चरित्र-नायक स्वनामधन्य श्रीजिनचन्द्रसूरिजी महाराजका एक उल्लेखनीय अग्र-स्थान है।

आर्य-प्रजाके सुखके हेतु ही आपका मङ्गलमय जन्म हुआ था। आपने मात्र नौ वर्षकी अवस्थामें वैराग्यवासित होकर, भागवतीदीक्षा ग्रहण की; सतरह वर्षकी अवस्थामें गच्छनायक आचार्य-पद प्राप्तकर शीघ्र ही क्रिया-उद्धार करके दुष्कर चरित्रपालकोंमें अग्रणीय हुए। सूरीश्वरने अपने अमित प्रभावसे खरतर गच्छके साधुओंकी शिथिलताको दूर हटाकर दूसरोंके लिये आदर्श-मार्ग प्रकाशित किया।

जैन शासनकी प्रभावनाके हेतु सम्राट अकबरके विनीत-आमन्त्रणसे सूरि महाराज लाहौर पधारे, वहां सम्राटपर अपने सदुपदेशों से अलौकिक प्रभाव डालकर समस्तभारतीय प्रजाको सुखी बनाया। सम्राटके द्वारा अमारि फरमान प्रकाशित कराकर हिंसाप्रधान यवन राज्यमें अहिंसा धर्मका अकथनीय प्रचार करके मूक प्राणियोंका हित-साधन किया, बिचारे जलचर और स्थलचर पशु भी निर्भय होकर सूरि महाराजका अन्तरङ्ग भावोंसे यशोगान करने लगे।

आपने अपने लोकोत्तर प्रभावके कारण उस बिगड़े हुए समयमें युगान्तर-सा उपस्थित कर दिया; इसीसे आपके सद्गुणोंपर मुग्ध होकर सम्राट अकबरने आपको "युग-प्रधान" पदसे अलंकृत किया। जैन तीर्थोंकी रक्षाके निमित्त सम्राट्से फरमान पत्र प्रकाशित करवाकर जैन-शासनकी अनुपम सेवाकी। आपके जीवनकी उल्लेखनीय घटना एक यह भी है कि सं० १६६९ में सम्राट जहांगीरने जब साधु विहार-प्रतिबन्धक एक फरमान जारी किया, तब आप ही ने आगरे पधारकर उस घातक फरमानको रद्द करवा के जैन शासनकी अभूतपूर्व प्रभावना की थी। पाठकोंको इन सब बातोंका परिचय आपकी इस **जीवनीमें** भली भांति मिल जायगा।

दूसरा प्रकरण

×सूरि-परम्परा



गवान महावीर की अविच्छिन्न परम्परा में प्रभावक आचार्य श्री उद्योतन सूरिजी हुए। कहा जाता है कि एक समय उत्तम मुहूर्त देखकर आपने अपने पास में रहे हुए चौरासी शिष्योंको एक ही समय में आचार्यपद दिया। उन चौरासी आचार्योंसे चौरासी गच्छोंकी स्थापना हुई। सूरिजीके विनयी शिष्य श्री वर्द्धमान सूरिजी थे। उन्होंने सं० १०५५ में उपदेशपद टीका बनाई और गिरराज आबूपर मन्त्रीश्वर विमल शाहके कराये हुए भव्य मन्दिरों की सं० १०८८ में प्रतिष्ठा की।

×इस प्रकरणमें सूरि-परम्परा बहुत ही संक्षिप्त लिखी गयी है, क्योंकि इसका हेतु केवल चरित्र-नायककी गुरुपरम्परा बतलानेका ही है। अतः इस प्रकरणमें उल्लिखित आचार्यों का विशेष परिचय "खरतरगच्छपट्टावली संग्रह", से कर लेना चाहिये। श्री वर्द्धमानसूरिजीसे श्रीजिनदत्तसूरिजी पर्य्यंत का सविशेष वर्णन 'गणधरसार्द्ध-शतक बृहद्वृत्ति' में है, इसी ग्रन्थसे उद्धृत श्री जिन वल्लभ सूरिजी और श्रीजिनदत्त सूरिजीका जीवनचरित्र 'अपभ्रंश काव्यत्रयी' में विशेष ज्ञातव्यके साथ प्रकाशित हो चुका है। श्री जिनदत्त सूरिजीके पश्चात् श्री जिनचन्द्र सूरिजीसे जिनपद्म सूरिजी तकका प्रामाणिक विस्तृत-जीवन हमें उपलब्ध ८६ पत्रकी पट्टावलीमें है। उस ग्रन्थसे सार मात्र परिचय हमारे तरफ

आपके जिनेश्वर सूरिजी और बुद्धि सागर सूरिजी नामक दो विद्वान शिष्य थे। एक समय आप अपने शिष्य-मण्डलके साथ अणहिल्लपुर पत्तन में पधारे। वहां* चैत्य-वासियों का विशेष प्राबल्य था, सुविहित साधुओंको वहां ठहरनेके लिये स्थान तक नहीं मिलता था। सूरिजी समुदाय सहित राज पुरोहितके यहां ठहरे, किन्तु वहां भी उन्हें न ठहरानेके लिये चैत्यवासियोंने राजाज्ञा प्राप्त की। सूरिजीके पाण्डित्य और सद्गुणोंसे राज पुरोहितजी मुग्ध हो

से प्रकाशित 'ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह' में देखना चाहिये। श्रीजिन भद्र-सूरिजीका विशेष परिचय 'विज्ञप्ति-त्रिवेणी' और 'जेसलमेर-भाण्डागारीय-ग्रन्थानां सूचि' में प्रकाशित हो चुका है। नवाङ्गीवृत्ति कारक श्री अभयदेव सूरिजी का जीवन-चरित्र प्रभावक चरित्र में भी पठनीय है। भाषाग्रन्थोंमें श्री जिनदत्त सूरि जीवन-चरित्रके दो भाग और 'गणधरसार्द्धशतक भाषान्तर' रत्नसागर भाग दूसरा, 'जैन-गूर्जरकविओ' भाग दूसरा आदि ग्रन्थभी खरतर गच्छके आचार्योंके चरित्र जाननेमें सहायक है।

इस प्रकरणमें उल्लिखित आचार्योंके 'पदस्थापना' और स्वर्गवास संवत् आदि कई बातोंमें पाठान्तर पाये जाते हैं, लेकिन हमने ऐतिहासिक दृष्टिसे जिसे तथ्य समझा है उसे ही लिखा है। विशेष उहापोह और उचित संशोधन भविष्यमें खरतर गच्छके विशाल इतिहास सम्पादनके समय करने की शुभाकांक्षा है।

भगवान महावीरसे श्री उद्योतनसूरिजी तकके आचार्योंके विषय में गणधरसार्द्ध-शतक बृहद् वृत्ति और पट्टावलियोंमें देखना चाहिये। इस परम्पराके आचार्योंके नाम, क्रम और संख्यामें पाठान्तर होनेके कारण हमने नहीं लिखा है। विद्वान लोग इसे विशेष खोज-शोध करके उद्योतन सूरिजी तककी परम्परा में उचित संशोधन करें।

*जिन मन्दिरोंमें ही रहनेवाले, देवद्रव्य उपभोगी, पान खाना आदि शास्त्राचारसे विपरीत आचरण करनेवाले थे। इनके विशेष परिचयके लिये देखो संघ-पट्टक वृत्ति और सम्बोध सत्तरी प्रकरण।

चुके थे। अतः उन्होंने दुर्लभ राजाको सूरिजीके कठिन सध्वाचारका वर्णन करते हुए उनके गुणोंसे परिचित कराया। नृपवर्य्यने वास्तविक साधुताका निर्णय करनेके लिये चैत्यवासियोंके साथ सूरि महाराज का शास्त्रार्थ कराना निश्चय किया।

सं० १०७०-८० के बीच राजसभा में जिनेश्वर सूरिजीका चैत्यवासियोंके साथ शास्त्रार्थ हुआ। फलतः चैत्यवासियोंकी पराजय हुई, क्योंकि शास्त्रोक्त विधिको पालन करनेमें वे असमर्थ थे, उनका चरित्र जैनागमों से विरुद्ध और दूषित था और सत्यकी विजय सब काल में सुनिश्चित है। इससे महाराजा दुर्लभ ने 'श्रीजिनेश्वर सूरिजी का पक्ष 'खरा' अर्थात् सत्य प्रमाणित किया, तभीसे उनका समुदाय* खरतर गच्छके नामसे प्रसिद्ध हुआ।

जिनेश्वर सूरिजी और बुद्धिसागर सूरिजी कठिन चरित्रवान् होनेके साथ-साथ प्रकाण्ड विद्वान भी थे। श्रीजिनेश्वरसूरिजीने हरिभद्र सूरिकृत अष्टककी वृत्ति (रचना सं १०८० जालोर) और प्रमालक्ष्य सवृत्ति, कथा-कोष, लीलावती, पंचलिङ्गी प्रकरण, षट् स्थानक प्रकरण आदि ग्रन्थों की रचना की और बुद्धिसागराचार्यने सं० १०८० में पंच-ग्रन्थी नामक व्याकरण ग्रन्थ बनाया।

जिनेश्वर सूरिजीके पट्टधर श्रीजिनचन्द्रसूरिजी हुए, जिन्होंने "संवेग रंग शाला" "श्रावक विधि"* पंचपरमेष्टि नमस्कार फल-

* खरतर गच्छकी उत्पत्तिका समय कई लोग सं० १२०४ लिखते हैं, लेकिन सं० ११६८ में रचित पार्श्वनाथ चरित्र (देवभद्रसूरिकृत) की प्रशस्ति (जेसलमेर भण्डारमें ताड़पत्रीय ग्रन्थांक २६६) और सं० ११७० की लिखित पट्टावलीमें जिनेश्वर सूरिजीको खरतर विरुद्ध मिलनेका स्पष्ट उल्लेख है। इस विषयपर विशेष विचार हम एक स्वतन्त्र निबन्धके रूपमें प्रगट करेंगे।

* यह कुलक बीकानेरके उपाध्याय जयचन्द्रजीके ज्ञान-भण्डारमें सुरक्षित है।

कुलक आदि ग्रंथ बनाए। आपके स्वर्गवासके अनन्तर आपके कनिष्ट गुरु भ्राता श्रीअभयदेवसूरिजी पट्टधर हुए, जिन्होंने नव अंगोंकी वृत्ति (रचना समय ११२०-२८), पंचाशक वृत्ति, उववाई वृत्ति प्रज्ञापना तृतीय पद संग्रहणी, पट्स्थान भाष्य, आराधनाकुलक आगम-अप्टोत्तरी जयतिहुअण वीर स्तव आदि ग्रंथों की रचना की और श्रीस्थंभनक पार्श्वनाथ प्रभुकी सातिशय प्रतिमा प्रकट की। उनके पट्टधर विद्वत् शिरोमणि श्रीजिनवल्लभ सूरिजी हुए, जिन्हें श्रीअभयदेव सूरिजीकी आज्ञासे देवभद्र सूरिजीने सं ११६७ आषाढ़ शुक्ल ६ को चित्तौड़में आचार्य पद दिया। वागड़ देशमें विहार करके आपने १०,००० दस हजार अजैनोंको प्रतिबोध देकर जैन धर्मोपासक बनाये। आपने अपने तेजोमय चरित्र-बलसे चित्तौड़में चामुण्डा देवीको प्रतिबोध दिया। एवं पिण्ड-विशुद्धि प्रकरण षड़-शीति कर्म-ग्रंथ, संघ-पट्टक, सूक्ष्मार्थ-विचारसार, पौषध-विधि प्रकरण, धर्मशिक्षा, द्वादश कुलक, प्रश्नोत्तर शतक, प्रतिक्रमणसमाचारी, अष्टसप्ततिका, शृंगार शतक और स्वप्नाष्टक विचार आदि ग्रंथों और बहुतसे स्तोत्रोंकी रचना की, जिनसे आपका प्रकाण्ड विद्वान् होना भलीभाँति सिद्ध है। धारानगरी के राजा नरवर्म को अपनी लोकोत्तर प्रतिभासे आपने ही रंजित किया था। सं० ११६७ के कार्तिक कृष्णा १२ की रात्रिके चौथे प्रहर में आपका देह विलय हुवा।

आपके पट्टधर प्रकट-प्रभावी दादा श्रीजिनदत्त सूरिजी हुवे। जिन्होंने अनेक अजैनोंको जैन बनाकर जैन शासनकी महत्ती प्रभावना की। आपका चरित्र सर्वत्र सुप्रसिद्ध है अतः विशेष यहां न लिखकर उनकी जीवनी, हमारी स्वतन्त्र पुस्तकमें छपी है उसेदेखनेका अनुरोध है। आपने संदेहदोलावली, गणधरसार्धशतक, गणधर सप्तति, काल-स्वरूप-कुलक चैत्यवन्दन-कुलक× अवस्था (?) कुलक, उपदेश रसा-

---

× सम्भवतः यह व्यवस्था कुलक ही होगा, जो श्री जिनचन्द्रसूरिजी कृत जैसलमेर और बीकानेरके भण्डारमें उपलब्ध है।

यन विंशिका और चर्चरी आदि अनेक ग्रंथों की रचना की थी। आपका स्वर्गवास सं० १२११ आषाढ़ शुक्ला ११ को अजमेरमें हुवा। अपने पट्टपर नरमणि मण्डित-भालस्थल श्रीजिनचन्द्र सूरिजीको आपने स्थापित किया था। वे 'मणिधारीजी' नामसे प्रसिद्ध हुवे। छोटी उम्रमें ही आप बड़े प्रतिभाशाली आचार्य हुवे हैं। आपका स्वर्गवास दिल्लीमें सं० १२२३ में भादवा वदी १४ को हुवा। श्रीतीर्थ पावापुरीजी के शिलालेख और कई पट्टावलियोंसे ज्ञात होता है कि आप ही ने महतियाण जातिकी स्थापना की थी। इस जातिकी वहुत उन्नति हुई, पूर्वदेशीय पावापुरीजी, राजगृह आदि तीर्थोंके मन्दिर इसी भाग्यशाली महतियाण संघ द्वारा वनाये व जीर्णोद्धार कराये गए थे। आपने व्यवस्था कुलक (चतुर्विध संघ शिक्षा) गा० ६९, नामक ग्रंथ की रचना की थी।

आपका प्रभाव-शाली शुभनाम खरतर गच्छमें सदा अमर रखनेके लिये चतुर्थ पाटपर यही नाम देनेकी प्रथा प्रचलित की गई। श्रीजयदेवाचार्यने आपके स्वर्गवासके अनन्तर श्रीजिनपतिसूरिजीको पट्टधर आचार्य वनाया। विद्वतामें आपकी प्रतिभा वहुत वढ़ी-चढ़ी थी। छत्तीस ३६ शास्त्रार्थोंमें आपने विजय प्राप्त की थी। वादियों को युक्ति व प्रमाण पुरस्सर निरुत्तर करनेमें आप साक्षात् "सरस्वती पुत्र" ही थे। आपकी* जीवनी विस्तार पूर्वक आपके शिष्य विद्वद्रत्न श्रीजिनपालोपाध्यायने बनाई है। जिसको पढ़कर आपकी

* बीकानेरके श्रीक्षमाकल्याणजी ज्ञानभण्डारमें प्राचीन पट्टावली पत्र ८६ की है, उसी गुर्वावलीमें यह जीवनी है। इसके अतिरिक्त उसमें श्रीजिनपद्म सूरिजी तकका ऐतिहासिक वर्णन है। ऐतिहासिक साहित्यमें इस गुर्वावलीकी समता करने वाला कोई भी ग्रन्थ देखनेमें नहीं आया। इस प्रमाणिक युग० गुर्वावली को मूल रूप में सिंघी ग्रन्थमाला में एवं हिन्दी अनुवाद श्रीजिनचन्द्र सूरि सेवासंघ से प्रकाशित कर दिया गया है।

अपूर्व मेधा और पाण्डित्यका परिचय मिलता है। आपनेसंघपट्टक वृत्ति, वादस्थल और समाचारी आदि ग्रंथों की रचना की।

संवत् १२७७ आषाढ़ शुक्ला १० को पाल्हणपुर में आपके स्वर्गवासी होनेके पश्चात् मरोट वास्तव्य धर्मिष्ट भान्डागारिक नेमिचन्द्र (षष्टिशतक व जिनवल्लभ गीत कर्त्ता) के पुत्र श्रीजिनेश्वर सूरिजी पट्टाधिकारी हुवे। आपने अनेक शिष्यों को दीक्षा दी और जिनालयोंमें जिन बिम्बोंकी प्रतिष्ठायें की। आपने सं० १३१३ में पाल्हणपुर में "श्रावक धर्मविधि" नामक ग्रन्थ बनाया। सं० १३३१ आश्विन कृष्णा ६ के दिन आपका स्वर्गवास हुवा।

आपके पट्टपर श्रीजिनप्रबोध सूरिजी हुवे। सं० १३२८ में कातंत्र व्याकरण पर 'दुर्ग-पद-प्रबोध' नामक वृत्ति रची। उनके पट्टधर श्री जिनचन्द्र सूरि हुवे जिन्होंने कई राजाओंको प्रतिबोध देकर "कलिकाल केवली विरुद" प्राप्त किया और सम्राट कुतुबुद्दीनको अपने गुणोंसे रञ्जित किया। सं० १३७६ में आपका स्वर्गवास होजाने से श्रीराजेन्द्राचार्यजी ने सं० १३७७ ज्येष्ठ कृष्णा ११ को श्रीजिन कुशल सूरिजीको आपका पट्टधर बनाया। उन्होंने भी सिन्धु और मारवाड़ देशमें विहार करके जैन धर्म की महती प्रभावना की। सं० १३८९ फाल्गुणकृष्णा पंचमीयां १५ को देरावरमें आपका स्वर्गवास हुवा, आप दादाजी के नामसे सर्वत्र सुप्रसिद्ध हैं। सं० १३८३ में आपने चैत्यवंदन कुलक वृत्ति भी रची थी। आपको चरण-पादुकायें हजारों स्थानोंमें बड़े भक्ति भावसे पूजी जाती हैं। आप बड़े चमत्कारी और भक्तों की मनोवाञ्छा पूर्ण करनेमें सुरतरु के समान है। आपके समय में खरतर गच्छ में ७०० साधु और २४०० साध्वियां आपके आज्ञानुवर्ती होनेका उल्लेख धर्मकलश कृत "श्रीजिनकुशलसूरि रास" में मिलता है। आपके पट्टपर षडावश्यकबालावबोध कर्त्ता श्रीतरुणप्रभ सूरिने लघुवयस्क श्रीजिनपद्मसूरिजी को सं० १३९० ज्येष्ठ शुक्ला ६

के दिन स्थापित किया। वाल्यावस्था में ही आपके पुण्य प्रभावसे सरस्वती देवी प्रसन्न हुई, जिससे आपकी "वाल-धवल-कूर्चालि सरस्वती" विरुदसे प्रसिद्धि हुई। आपका स्वर्गवास सं० १४०० के वैशाख शुक्ला १४ के दिन पाटणमें हुवा। आपकी कृतियोंमें "स्थूलि-भद्र फाग" उपलब्ध है। आपके पट्टधर वयोवृद्ध जिन लब्धि सूरिजी हुए।

उनके पश्चात् गच्छनायक श्रीजिनचन्द्र सूरिजी हुवे। सं० १४१५ में स्थंभनक तीर्थमें आपका स्वर्गवास हुआ। आपके पट्टपर श्रीतरुण प्रभाचार्यने जिनोदयसूरिजीको स्थापित किया। इन्होंने अनेक जिनालयोंमें जिन-बिम्बोंकी प्रतिष्ठायें की और कई स्थानोंमें अमारि-उद्घोषणा कराके जैन-शासनकी महती प्रभावना की।

उनके पट्टधर श्रीजिनराज सूरिजी हुवे, जो न्याय-शास्त्रके पकाण्ड विद्वान थे। श्रीस्वर्णप्रभाचार्य, भुवनरत्नाचार्य और *सागर-चन्द्राचार्यको आचार्य पद भी आप ही ने दिया था। सं० १४६१ में देवलवाड़ामें आपका स्वर्गवास हुवा। आपके पट्टपर नारचन्द्र टिप्पन कर्त्ता ? सागरचन्द्राचार्यने× श्रीजिनवर्द्धन सूरिजी को स्थापन किया, जिनपर दैवी प्रकोप हो जानेके कारण संघकी आज्ञासे गच्छस्थिति रक्षणार्थ सं० १४७५ में श्रीजिनभद्र सूरिजीको गच्छनायक वनाया।

श्रीजिनभद्रसूरिजी एक प्रतिभाशाली विद्वान व जैन साहित्य की रक्षा और अभिवृद्धि करनेमें अग्रगण्य आचार्य हुवे हैं। आपनें

---

*इनकी परम्परामें यतिवर्य्य सुमेरमलजी शिष्य और ऋद्धिकरणजी आदि हैं।

×खरतर गच्छकी पिप्पलक शाखाके स्थापक आप ही थे। आपकी सं० १४७४ में रचित सप्तपदार्थी वृत्ति और दूसरा ग्रन्थ वाग्भटालङ्कार वृत्ति भी मिलती है। सप्त पदार्थी वृत्ति अहमदाबाद से प्रकाशित हो चुकी है।

जेसलमेर, जालोर, देवगिरि, नागोर, पाटण, मांडवगढ़, आशापल्ली, कर्णावती, खम्भात आदि स्थानों पर हजारों प्राचीन ग्रंथ और हजारों नवीन ग्रंथ लिखा करके भण्डारोंमें सुरक्षित किये, जिनके लिए केवल जैन समाज ही नहीं किन्तु सारा साहित्य-संसार भी चिर कृतज्ञ रहेगा। आपने जिन-बिम्बोंकी प्रतिष्ठा प्रचुर प्रमाणमें की थी, उनमें से सैकड़ों अब भी विद्यमान् हैं।

इनका बनाया हुआ जिनसत्तरीप्रकरण (गा २२०) प्राकृत भाषा का उपलब्ध है। इनकी हस्तलिखित "योग-विधि" की सुन्दर प्रति श्रीपूज्यजी (बीकानेर) के संग्रहमें है। सं० १५०१ में तपारत्न कृत षष्टिशतक-वृत्ति का आप ही ने संशोधन किया था।

श्रीभावप्रभाचार्य और कीर्तिरत्नाचार्य को आपने ही आचार्य पदसे अलंकृत किया था। सं० १५१४ मिसगर कृष्ण ६ को कुम्भलमेरमें आपका स्वर्गवास हुआ।

आपके पट्टपर श्रीकीर्तिरत्नाचार्य* ने श्रीजिनचन्द्रसूरिजीको स्थापित किया। श्रीधर्मरत्नसूरि, गुणरत्नसूरि आदिको इन्होंने ही आचार्य पद दिया। सं० १५३० में जैसलमेरमें आपका स्वर्गवास हुआ। इन्होंने अपने पट्टपर स्वहस्तसे श्रीजिनसमुद्रसूरिजीको स्थापन किया। उन्होंने पञ्च-नदी साधन आदि करके खरतर गच्छकी उन्नति की। सं० १५३६ में जैसलमेरके श्रीअष्टापदप्रासादमें प्रतिष्ठा की। सं० १५५५ अहमदावादमें इनका स्वर्गवास हुआ। इनके पश्चात्

*आचार्य पद प्राप्ति के पूर्व आपका नाम कीर्तिराज उपाध्याय था। सं० १४९५ (?) में आपने "नेमिनाथ महाकाव्य" बनाया। आपकी जीवनी के विषय में हमारी ओरसे प्रकाशित "ऐतिहासिक-जैन-काव्य-संग्रह" देखें! आपकी परम्परा में परम गीतार्थ वयोवृद्ध आचार्य श्रीजिनकृपाचन्द्र सूरिजी आदि विद्यमान हैं।

गच्छनायक श्रीजिनहंससूरिजी हुए, जिन्होंने सं०१५७३ में वीकानेर में "आचारांग दीपिका" वनाई। सिकन्दर लोदी वादशाहको चमत्कृत कर पांचसौ (५००) वन्दीजनोंको कारागारसे मुक्त करवाया था। इनका स्वर्गवास सं० १५८२ में पाटणमें हुआ। अपने पट्टपर इन्होंने श्रीजिनमाणिक्यसूरिजीको स्थापित किया। जिनका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है:—

इनका जन्म सं० १५४९ में कूकड़ चोपड़ा गोत्रीय संघपति राउलदेकी धर्म-पत्नी रयणादेवीकी कुक्षिसे हुआ। सं० १५६० में दीक्षा ग्रहण करके शास्त्राभ्यास किया। इनकी विद्वत्ता और योग्यता को देखकर गच्छनायक श्रीजिनहंससूरिजीने सं०१५८२ मिती माघ शुक्ला ५ को वालाहिक गोत्रीय शाह देवराज कृत नन्दी-महोत्सव पूर्वक आचार्य पद देकर अपने पट्टपर स्थापन किया। इन्होंने गुर्जर, पूर्व, सिन्धु-देश और मारवाड़में विहार किया। सं० १५९३ माघ शुक्ला १ गुरुवारको वीकानेरके मन्त्रीश्वर कर्मसिंहके वनवाये हुए श्रीनमिनाथ स्वामीके मन्दिरकी प्रतिष्ठा की। सिन्धु देशमें शाह धनपति कृत महोत्सवसे पञ्च नदीके पांच पीर आदिको साधन किया।

उस समय गच्छके साधुओंमें शिथिलाचार वढ़ गया था। आपको यह असह्य हुआ और परिग्रह त्यागकर क्रियोद्धार करने की तीव्रउत्कण्ठा आपके हृदयमें जागृत हुई। वीकानेरके मन्त्रीश्वर संग्राम-सिंहजी वच्छावतको भी गच्छकी इस परिस्थितिसे महान् असन्तोष था, इसलिये उन्होंने भी सूरि-महाराजको वीकानेर पधारकर गच्छ

की सुव्यवस्था करनेके लिये विनती-पत्र*भेजा। मन्त्रीश्वरकी इस नम्र-प्रेरणा ने सोनेमें सुगन्धका-सा काम किया। श्री जिनमाणिक्यसूरिजी ने भावसे क्रियोद्धार करके यह सोचा कि पहले देरावर जाकर दादा श्री जिनकुशलसूरिजी की यात्रा करके समस्त परिगृह त्याग करूंगा और मेरे आज्ञानुयायी साधु-वर्ग को भी शुद्ध साध्वाचार पालन करने को वाध्य करूंगा। प्रकट प्रभावी दादा कुशलसूरि जी मुझे इस कार्यमे सफलता दें। इस हेतुसे देरावर पधारे, वहां गुरु-दर्शन कर जैसलमेर की ओर वापिस आते हुए मार्गमें पिपासा-परिसह उत्पन्न हुआ, उस दिन आपके पञ्चमीका उपवास था। किन्तु उस प्रान्तमें जलका बहुत अभाव होनेके कारण कहीं भी

*आपके आज्ञानुवर्ती उपाध्याय कनकतिलक जी आदि ने सं० १६०६ में क्रिया-उद्धार किया था। परन्तु इससे गच्छ के अन्य साधुओं पर प्रभाव न पड़ा। अतः संग्रामसिंह मन्त्री ने सारे गच्छ की स्थिति सुधारने के लिये ही सूरिजी को विनती पत्र भेजा था।

श्री कनकतिलकोपाध्यायजी का क्रियोद्धार-नियम-पत्र हमें उपलब्ध हुआ है। जिसका आवश्यकीय अंश इस प्रकार है :—

'संवत् १६०६ वर्षे दीवाली दिने श्री विक्रमनगरे ए सुविहित गच्छ साधु मार्ग नो स्थिति सूत्र उपरि कीधो, ते समस्त ऋषिश्वरे प्रमाण करवी ॥'

'उपा० कनक तिलक वा० भावहर्षगणि वा० श्रीशुभवर्द्धनगणिइ बइसी साध्वाचार कीधौ छैं।'

इसके बाद बावन बोलों का वर्णन है, जिसमें साध्वाचार की कठिन क्रिया व्यवस्था लिखी है। उन बोलों को अमान्य करे, उसे 'पासत्था' नाम से सम्बोधन किया है। यह पत्र जर्जरित होकर, एवं कई स्थानों में कटकर नष्ट हो गया है, इससे यहां सम्पूर्ण नकल न दे सके। यह जीर्ण पत्र माल्हू सास शाह गोपा परमसुश्रावक के पठनार्थ लिखा गया था और हमारे संग्रह में है।

जल न मिला। सन्ध्या हो गई, उसके पश्चात् थोड़ा-सा जल मिला। लोगों ने कहा महाराज ! इसे ग्रहणकर अपनी पिपासा शान्त करें ! उत्तर में आपने दृढ़ताके साथ कहा—वर्षों तक किये हुए चउविहार व्रतको क्या एक दिनके लिये भङ्ग कर दूं ? यह कदापि नहीं हो सकता। आयुष्य घटाने-बढ़ानेकी शक्ति तो किसीमें भी नहीं है, जो भावी-भाव सर्वज्ञ प्रभुने देखा है, वही होगा।

इस प्रकार शुभ अध्यवसायों द्वारा व्रत भङ्ग न करके स्वयं अनशन कर लिया। सं० १६१२ मिती आषाढ़ शुक्ला ५ को उपवासके दिन गुरु महाराज स्वर्ग पधारे। जिस स्थानमें आपका अग्नि-संस्कार हुआ, वहांपर जैनसङ्घने एक सुन्दर स्तूप* बनवाया था, जिसका अब कुछ पता नहीं चलता।

हमारे चरित्रनायक श्री जिनचन्द्रसूरिजी आप के ही शिष्य-रत्न थे। जिनका यथाज्ञात जीवन-चरित्र अगले प्रकरणोंमें लिखा जायगा।



* इस स्तूप का उल्लेख पद्मराज कृत "पंच नदी साधन जिनचन्द्रसूरि गीत" में है सो आगे के प्रकरण में दिया जायगा। एक पट्टावली में आपका स्वर्गवास देरावरसे २५ कोस लिखा है। अतः इस स्थान की खोज-शोध करने की आवश्यकता है।

तीसरा प्रकरण

सूरि-परिचय



रवाड़ प्रान्तके जोधपुर राज्य में खेतसर* नामक एक रमणीय ग्राम है। वहां ओसवाल जातीय रीहड़ गोत्रवाले श्रीवन्तशाह नामक श्रेष्ठि निवास करते थे। उनकी सुशीला धर्मपत्नीका नाम श्रियादेवी था। आनन्द पूर्वक श्रावकधर्म पालन करते हुये, श्रिया देवीकी रत्नगर्भा कुक्षिमें एक पुण्यवान् जीव उत्तम गतिसे च्यवन करके अवतीर्ण हुआ। गर्भकाल व्यतीत होनेपर सम्वत् १५९५ के मिती*चैत्र कृष्णा १२ के दिन शुभ

---

* खरतर गच्छ की अधिकांश पट्टावलियों में श्रीवन्त शाहका निवास-स्थान तिमरी के पार्श्व-वर्त्ती बड़ली ग्राम लिखा है, किन्तु उनसे भी अधिक प्राचीन, कवि कनकसोमकृत "श्रीजिनचन्द्रसूरि गीत," जो कि सं० १६२८ में कवि के द्वारा लिखित उपलब्ध है; उसमें इस प्रकार लिखा है—"मारवाड़ि देश उदार, जहां धरम को विस्तार, तिहां खेतसर मंझारि। ओस वंश कउ सिणगार, सिरवन्तशाह उदार, तसु सिरिय देवी नार ॥२॥ सुख विलसतां दिन-दिन्न, पुण्यवन्त गरभ उत्पन्न नव मास जिहां पड़िपुन्न जनमिया पुत्र रतन्न, तिहां खरचिया बहु धन्न, सब लोक कहइ धन धन्न ॥३॥

इसमें खेतसर नाम स्पष्ट लिखा है। प्राचीन होने से हमने भी खेतसर का ही उल्लेख किया है।

* विहार पत्र नं० २ में मिती वैसाख शुक्ला १२ लिखा है।

लग्नमें कामदेवके सदृश रूप-लावण्य वाला, सूर्यके समान तेजस्वी, शुभ लक्षणयुक्त एक पुत्ररत्न जन्मा। इस शुभ अवसरके उपलक्षमें श्रेष्ठिने बहुतसा द्रव्य व्यय करके आनन्द उत्सव मनाया। दसवें दिन उस बालकका नाम "सुलतान कुमार"+रखा गया। वे "सुलतान कुमार" दिन पर दिन शुक्ल पक्षके चन्द्रमाकी भांति बढ़ने लगे। माता-पिताने उन्हें बाल्यकाल ही में सकल कलाओंका अभ्यास कराके निपुण बनाया।

वि० सं० १६०४×में खरतर-गच्छनायक श्रीजिनमाणिक्यसूरिजी महाराज अपने शिष्य-समुदायके साथ वहां पधारे। उनके पधारनेसे खेतसरमें धर्मकी अच्छी जागृति हुई। वहांके श्रावक दत्त-चित्त होकर धर्मकार्यमें प्रवृत हुए। उनका उपदेश-वचनामृत श्रवण कर "सुलतान-कुमार"के निर्मल चित्तमें वैराग्य भावना जागृत हुई। वे संसारके सुखोंकी असारताको जानने लगे और उन्होंने सच्चे सुखको देनेवाले चारित्र धर्मका पालन करनेके लिये दीक्षा लेनेका दृढ़ निश्चय कर लिया।

अब सुलतान कुमार माताके पास आकर दीक्षा लेनेकी आज्ञा मांगने लगे। उन्होंने निवेदन किया "माताजी! यह संसार असार है। समस्त पौद्गलिक सुख क्षणभंगुर हैं; इसलिए सच्चा आत्मिक सुख प्राप्त करनेके लिए मैं श्रीजिनमाणिक्यसूरिजी महाराजके पास दीक्षा लेकर साधु हूंगा। अतएव आप कृपा कर अनुमति दीजिये!" माताने कहा—"बेटा अभी तुम बालक हो! यौवनावस्थामें प्रवेश

+ नाम थापना सुलतान, नित नित चढतइ वान, जगमें अमली मान।
(सं० १६२८ लि० कनकसोम कृत जिनचन्द्रसूरिगीत)

× विहार-पत्र नं० २ में सं० १६०२ लिखा है, किन्तु रत्ननिधान कृत गीत, युग प्रधाननिर्वाण रास आदि में सर्वत्र ही सं० १६०४ लिखा है, अतः यही ठीक है। सं० १६०२ लेखक की भूल से ही लिखा गया ज्ञात होता है।

करना है; चरित्रका पालन करना महान् दुद्धर्ष है; बड़े होकर पीछे चारित्र ले लेना," इत्यादि वचनोंसे साधु मार्गको कठिनता वतलाई और दीक्षा लेनेकी मनाही की; किन्तु वैराग्य वासित हृदयवाले सुलतानकुमार कव माननेवाले थे। उन्होंने युक्तियोंसे माताके कथनों का उत्तर देकर अन्तमें अनुमति ले ही ली।

सुलतान कुमारने सं० १६०४ में श्रीजिनमाणिक्य सूरिजी के पास दीक्षाली। उनका दीक्षा-नाम गुरुमहाराजने 'सुमतिधीर' रखा। उस समय उनकी अवस्था केवल ९ ही वर्ष की थी, किन्तु विलक्षण बुद्धिवाले और गुरुभक्त होनेके कारण वे अल्पकाल ही में ११ अंगादि पढ़कर सकल शास्त्रोंके पारंगत हुवे। शास्त्रवाद, व्याख्यान कलादिमें निपुण होकर अपने गुरु श्रीजिनमाणिक्यसूरिजी के साथ देश-विदेशमें विचरने लगे।

देराउरसे जैसलमेर आते हुए सं० १६१२ मिती आपाढ़ शुक्ला पञ्चमी को श्री जिनमाणिक्य सूरिजी का देहान्त हो जानेसे अन्य साधुओंके साथ विहार करके श्री सुमतिधीरजी जैसलमेर पधारें। अन्त समयमें श्री जिनमाणिक्य सूरिजी के साथ २४ शिष्य थे परन्तु वे संयोगवश किसीको अपने पट्ट पर स्थापित न कर सके थे। जैसलमेर आनेके पश्चात् इस विषयमें परस्पर मतभेद हुवा, अन्तमें समस्त संघ और वहांके रावल श्रीमालदेवजी (राजकाल सं० १६०७ से १६१८ तक) ने वेगड़ गच्छके श्रीपूज्य* श्रीगुणप्रभ सूरिजी की

* श्री गुणप्रभसूरि—खरतर गच्छ की वेगड़ शाखा के श्रीजिनमेरुसूरिके शिष्य थे। इनके विषय में उक्त शाखा की पट्टावली में निम्नलिखत वर्णन लिखा है :—

तत्पट्टे ६१वां श्रीगुणप्रभसूरि; तेपिण महागीतारथ थया, सवा करोड़ रुपीया खरची- गांगा गुणदत्त राजसीह पद ठवणो कियो, याचकां नें चूड़ा नें चूनड़ी पहिराया, पांच सोनेरी पुस्तक, पांच रुपेरी पुस्तक लिखावी गुरों

भला नहीं छइ। हिवणां इज। राजनगर थी राजा पामइ ब्राह्मण १ सांवलदास रउ मूकिउ लहणा लेवा भणी आयोछइ तियइ कहिउ। सांवलदासइ अहम्मदावाद रा भट्टारकिया श्रावक तेड़ि नइ कह्यो। गच्छ भेलो करउ, सु गच्छ भेलउ करिस्यइ। आ वात थे पण सांभलि हुस्यइ। अत्र लिखी नहीं सु किम। इस्यां वातां भल्यां नहीं, तुरत विनति करिस्यइ। चउमास उतरी पछइ जोरावरी करी तुहा नइ राख्या तउ कुण आडौ आवस्यइ। ते भई आ पिण तत्र आवी विरूप कीधउ तउ किम थास्यइ। विचार पहिलउ कीजइ तउ भला छइ। मारवाड़ी मांहें। कोई एक श्रावक पद ठवणा कराविवा वालउ मिलाइज करिस्यइ। चउमास मांहे नहीं वोलइ। चउमास उतरी तुरत विरुप करिस्यइ। थांरा भाग्य छइ, भला थास्यइ। परं अम्हा-नइ घणा मामला पड्या छइ। म्हे वीहां छां। तथा सूरि मन्त्र कियइ पासि तत्र लेस्यउ। अश्वकीय (?) भट्टारक। आचार्य। इयां पासइ आपां नइ लेतां भलउ नहीं। वीजउ कुण देस्यइ। ते पिण समाचार देज्यो। विधि लिखतां वेला काइ नहीं लागती॥ विधिप्रपा माँहे विधी वात रूप लिखी छइ॥ डौढ पत्र छइ॥ पं० हर्षसोम योग्यम्। पण्डित होज्यो। जउ जोरावरि मांडइ तउ ठाणा २२ श्री पूज्यां भणी चलाइ देज्यो। पछइ थे चालिज्यो। रखे ढीला थाउ। इतरा सीम आवज्यो। तथा थे लिख्या जे फागुण चौमासा पछी आदेश देस्यां। तत्रार्थे। अत्र आयां पछी जोग्य विचारी आदेशरी वात करज्यो। पं० भाव प्रमोद भणी तेड़ाविज्यो। ते सर्व रूड़ी परइ जाणिइ छइ। मइ पिण कागल दीधउ छइ। जाणां छां पारणइ तुहां पासि आव-स्यइ। सदा वंदना जाणिज्यो॥ सावचेत रहिज्यो॥ तथा तुहां नइ गच्छ मांहे जियइ यति रउ कागल नथी आव्यउ। जियइ संघ रउ पिण नहीं आयो। ते लिखिज्यो। मारवाड़ि वेगा पधारिज्यो। काग-लरा समाचार उत्तर सहु लिखिज्यो। सर्वोपि साधुवर्गोऽनुनम्यः॥ गुजरात रा जती गुजरात मांहिज राखिज्यो। साथि मत आणउ॥ संघाड़ा ७ छै॥

चरित्रनायक के हस्ताक्षर

विजयदेवसूरि रचित नेमिनाथ रास–शीलरास का अन्तिम पत्र

सं० १६११ में आचार्य पद प्राप्ति से पहले का लिखा हुआ

आचार्यपद प्राप्तिके अनन्तर हमारे चरित्र नायक सुमतिधीर जी श्रीजिनचन्द्रसूरि नामसे प्रसिद्ध हुवे । जिसदिन उन्हें आचार्यपद मिला उसी रात्रिको उनके गुरु श्री जिनमाणिक्य सूरिजीने स्वप्नमें प्रत्यक्ष दर्शन दिया और समवसरणकी● पुस्तकमें रहे हुए सम्नाय सूरि मंत्र पत्रकी ओर संकेत करके अदृश्य हो गये । सं० १६१२ का चतुर्मास जैसलमेर हुआ । मंत्री श्री संग्रामसिंह बच्छावत ने सूरिजी को बीकानेर पधारनेके लिये विनती भेजी ।

चतुर्मास पूर्ण हो जानेसे सूरिजी जैसलमेरसे विहार करके बीकानेर पधारे । सं १६१३ का चतुर्मास वहीं किया । बीकानेर का प्राचीन× उपाश्रय शिथिलाचारी यतियोंके द्वारा रोका हुवा देखकर मंत्रीश्वर ने अपनी अश्वशालामें ही सूरिजी का चतुर्मास कराया। यह स्थान आजकल रांघड़ी-चोकमें बड़ा उपाश्रयके नामसे प्रसिद्ध है।

सूरि जी गच्छमें फैले हुवे शिथिलाचारको देखकर सहम गये । जिस आत्म-सिद्धिके उद्देश्यसे चारित्र धर्मका वेष ग्रहण किया गया, उस आदर्शको यथावत् न पालना यह लोक-वञ्चनाके साथ-साथ आत्म-वञ्चना भी है। गच्छका सुधार करनेके लिये गच्छनायक को क्रिया-उद्धार करना अनिवार्य है। इत्यादि विचार करते हुवे उनमें आत्मबल और चरित्रकी अमोघ शक्तियों का उल्लास होने लगा। अन्त में उनके हृदयमें क्रियोद्धार करनेकी प्रबल भावना जाग्रत हुई, उन्होंने सोचा त्यागके बिना सफलता नहीं है। शुद्ध चारित्र पालन करनेसे ही इष्ट ध्येयकी सिद्धि हो सकती है। परिग्रह-धारी रहनेवाला व्यक्ति

● देखो [illegible] ।

× यह उपाश्रय, बाजारमें श्री चिन्तामणिजी के मन्दिर के पास था, जहां [illegible] निवास करते है। कहा जाता है कि (१) चिन्तामणिजीके मन्दिर (२) उपाश्रय और (३) बीकानेरके पुराने किलेकी नींव एक साथ डाली गई थी।

चौथा प्रकरण

पाटणमें चर्चा-जय



टण नगर गुजरात प्रान्तकी प्राचीन राधानी है। इस नगरको वसानेका श्रेय नरपति वनराज चावड़ाको है। गुजरातके इतिहासमें इस नगरका वहुत उंचा स्थान है। धर्मिष्ट महाराज दुर्लभराजके समक्ष श्रीजिनेश्वर-सूरिजी ने चैत्य-वासियोंको शास्त्रार्थमें जीत कर "खरतर" विरुद भी इसी नगरमें प्राप्त किया था, जिसका वर्णन दूसरे प्रकरण में किया जा चुका है। सम्वत् १६१७ में हमारे चरित्र नायक श्रीजिन-चन्द्र सूरिजी महाराज ने पाटणमें चातुर्मास किया। उस समय तप गच्छीय कदाग्रही शिरोमणि, और उग्र-स्वभावी उ० धर्मसागरजी*

---

* श्री मोहनलाल द० देसाई B.A.L.L.B अपने ग्रन्थ "जैन साहित्य नो संक्षिप्त इतिहासके पृ० ५६२ में इस प्रकार लिखते हैं:—"तेओ घणा विद्वान पण अति उग्र स्वभावी अनै दृढ़ आग्रही (प्रखर स्वसम्प्रदायी) हता।" धर्मसागरे तपा गच्छ साचो नै वीजा गच्छो खोटा जणावी तेमना पर घणा प्रहारो उग्र-भाषा मां ग्रन्थोनामे तत्वतरंगिणी, प्रवचन परीक्षा—कुमति मत कुद्दाल रची कर्या खरतरो साथे पाटण मां सं० १६१७ मां अभय-देव सूरि खरतर गच्छना न हता—एवोप्रवल वाद कर्यो ते वर्षे तेमने श्वेताम्बर सम्प्रदाय ना जुदा जुदा गच्छना आचार्यो ए उत्सूत्र प्ररूपणा ना कारणे जिन शासन थी वहिष्कृत कर्या। तपागच्छ ना नायक विजयदान सूरि ए 'कुमति-

ने लोगोंके समक्ष कहा कि नवाङ्गी-वृत्ति कर्त्ता श्रीअभयदेव सूरिजी खरतर गच्छमें नहीं हुए हैं, इस गच्छकी तो उत्पत्ति ही सं० १२०४ में हुई है।" उन्होंने केवल यह कहा ही नहीं वल्कि खरतर गच्छ वालोंको उत्सूत्र-भाषी सिद्ध करनेके लिये "औष्ट्रिक-मतोत्सूत्र दीपिका" व "तत्व-तरङ्गिणी वृत्ति" (कुमति-कंद-कुद्दाल) आदि खंडनात्मक विषैला-साहित्य वना कर जैन-शासनमें कलहका विष वीज अंकुरित किया।

इससे पहले* किसीने यह वात नहीं सुनी थी कि अभयदेवसूरि जी खरतर गच्छमें नहीं हुए। धर्मसागरजी के इस कुचेष्टा-पूर्ण अभूत-पूर्व प्रतिपादनसे सारे जैन-शासनमें भारी हलचल मच गई। चारों तरफसे इसके प्रतिवाद होने लगे, सवके हृदयमें इस विष-वृक्षको उच्छेद करनेकी महत्वाकांक्षा लगी, ताकि भविष्यमें भगवान वीरकी सन्ततिमें परस्पर द्वेष, कलह और असन्तोष न फैले। . . .

हमारे चरित्र-नायक श्रीजिनचन्द्र सूरिजी पर खरतर गचछका सारा उत्तरदायित्व था, अतः खरतर गच्छके प्रति किये हुए, धर्मसागरके अनुचित आक्षेपोंका निराकरण करना उन्हें परमावश्यक जान पड़ा। क्योंकि ऐसे प्रसङ्गमें मौन रहनेसे भविष्यमें विशेष अहित होना सुनिश्चित् था। इसीलिये मिती कार्तिक शुक्ला ४ के

मत-कुद्दाल' नें जल-शरण कराव्यो अने जाहिरनामु काढ़ी सात बोलनी आज्ञा काढ़ी। एक वीजा मत वालाने वाद विवादनी अथडामण करता अटकाव्या" "धर्म सागरे सूरि श्री नें चतुर्विध संघ समक्ष मिच्छामि-दुक्कड़ आप्यो, तेमनी माफी मांगी।"

* उस समय तक श्री अभयदेव सूरिजीको "खरतरगच्छीय" ही सव गच्छवाले मानते थे। दूसरों की वात ही क्या? स्वयं तपा-गच्छीय आचार्योंने ही अपने ग्रन्थोंमें श्री अभय देव सूरिजी को स्पष्ट खरतर गच्छीय सम्बोधित कर गुणावदात गाये हैं। यथाः—

गया, किन्तु वे नहीं आये, उपाश्रय के द्वार वन्द करके× छिप गये।

मिती कार्तिक शुक्ला ७ शुक्रवार को फिर सभा एकत्र हुई, धर्मसागरजी को बुलाया गया किन्तु "चोर रा पग कच्चा हुवे" की कहावतके अनुसार वे कब आनेको थे! आखिर एकत्र महानुभावोंके समक्ष श्रीजिनचन्द्र सूरिजी ने यह प्रश्न रखा कि "अभयदेव सूरिजी किस गच्छमें हुवे हैं? आपलोग निर्णय करें! उपस्थित विद्वत् मण्डलीने ४१ प्राचीन ग्रन्थोंके प्रमाण से यही निश्चय किया कि जिन महान् प्रभावक आचार्यको चौरासी गच्छ वाले पूज्य दृष्टिसे देखते हैं, वे नवाङ्गी वृत्ति-कर्त्ता व स्थम्भनक पार्श्वनाथ प्रतिमा प्रकट करने वाले श्री अभयदेव सूरिजी खरतर गच्छमें ही हुए हैं।"

इस निर्णयका एक मत-पत्र लिखा गया, जिसमें समस्त आचार्यों तथा मुनियों के हस्ताक्षर हुए। मिती कार्तिक शुक्ला १३

संवत सोल सतोतरइ, पाटण नयर मझार।
मेलि दरशन सहु सम्मत, ग्रन्थनी साखि साधार ॥५॥
पूरव विरुद्ध उजवालियउ, साखि दाखइ सहु लोकरे।
तेज खरतर सहगुरु तणउ, ऋषिमति ते थयउ फोकरे ॥६॥
ऋषि मति जे हुंतो कंकली, बोलतौ आल पंपाल रे।
पष्ट कीधी खरतर गुरे, जाणइ बाल गोपाल रे ॥७॥
(जिनचन्द्र सूरि गीत गा० ६ से)

पाटण सोल सतरोतरइ च्यार असी गच्छ साखिरे।
खरतर विरुद्ध दीपावियउ आगाम अक्षर दाखिरे ॥७॥

× पाटण मांहि पंचासरउ, पाड़ा पाखलि जे पोसाल।
पौल देइ पैसी रह्यउ, जे मुखि लावत आल पंपाल ॥१०॥
गच्छ चौरासी मेलवी, पंच शास्त्र नी साखि उदार।
जीत्यउ खरतर राजियउ, एस हु को जाणइ संसार ॥११॥
(विधिस्थानक चौपाई गा० १७ से)

ो मव गच्छवालों ने मिलकर धर्मसागरजी को असत्य, उत्सूत्र-
ापी समझ कर निन्हव प्रमाणित किया, और वे जैन संघसे
हिष्कृत कर दिये गये ।

उपरोक्त आशयके मत-पत्र की नकल यहां दी जाती है, जिससे
इन बातों का भलीभांति परिचय मिल जायगा ।

॥ मत-पत्रमिदम् ॥ *

स्वस्ति श्री संवत १६१७ वर्षे कार्तिक सुदी ७ सप्तमी दिने
शुक्रवारे श्री पाटण महानगरे श्री खरतर गच्छ नायक वादि-कंद
कुद्दाल भट्टारक श्रीजिनचन्द्रसूरिजी चउमासी कीधी (रह्या हुंता)
तिवारइ ऋषिमती धर्मसागरे कूडी चरचा मांडी जउ श्रीअभयदेव
सूरि नवाङ्गी-वृत्ति कारक श्री स्थंभना-पार्श्वनाथ प्रकटकर्ता, ते
खरतर गच्छि न हुवा । एहवी वात सांभली तिवारइ खरतर श्री
जिनचन्द्र सूरि, (ए विचारी वात) समस्त दर्शन एकठा कीधा पछइ
समस्त दर्शन नइ पूछ्यो जे श्री अभयदेव सूरि नवाङ्गी-वृत्तिकर्त्ता
स्थम्भणइ पार्श्वनाथ प्रकट-कर्त्ता कियइ (किसइ) गच्छइ हुवा ?
तिवारइ समस्त दर्शन मिली अनइ घणा ग्रन्थ जोई पछइ (ए वात

---

* इसी प्रकार स्तम्भतीर्थ (खंभात) में भी इसी आशयका एक मत-पत्र लिखा गया था । जिसकी नकल इस प्रकार है:—

स्वस्ति श्री स्थम्भनाधीशं नत्वा श्री स्थम्भ तीर्थ मध्ये समस्त दर्शन लिखितं श्रीअभयदेव सूरि नवांगी-वृत्तिकारक श्री स्थंभणउ पार्श्वप्रगटकारक खरतर गच्छि हुवा । केइ एक एम नथी सद्दहता, राग द्वेष ना वाह्या कुबुद्धि लागा (वाह्या) ते बापड़ा गाढा दुखिया थास्यै (हुस्यैं) सही सही १०८

सिद्धान्त नइ मेलि नवाङ्गी वृत्ति नइ मेलि वृद्ध सम्प्रदाय अनुसारइ (नइ मेलि) जेह न मानइ ते घणा कूड़ा पड़ै छै ।

विचारि नइ) इम कह्या जे श्री अभयदेवसूरि (नवाङ्गी-वृत्तिकारक, स्थम्भणइ पार्श्वनाथ प्रकट-कारक) खरतर गच्छे हुवा। सही। सत्यं समस्त दर्शन घणा ग्रंथ जोइ नइ सही कीधी। सहीरवार१०८

अत्र साखि भट्टारक कर्म्मसुन्दरसूरि मतं १
,, ,, सिद्धान्तिया वड़गच्छा श्री थिरचन्द्र सूरि मतं २
,, ,, जावड़िया गच्छे श्री हर्षविनय मतं ३
,, ,, निगमिया तपा गच्छे श्री भ० कल्याणरत्नसूरि मतं ४
,, ,, वृहत् तपा गच्छे श्रीसिद्धसूरि मतं ५
,, ,, विवंदणीक वारेजिया खड़खड़ता तपा गच्छे श्रीपरमाणन्दसूरि मतं ६
,, ,, (सिद्धान्तिया) वड़ गच्छा श्रीमहीसागरसूरि मतं ७
,, ,, काछेला पुनमिया गच्छे श्रीउदयरत्नसूरि मतं ८
,, ,, पीपलिया गच्छे त्रिमलचन्द्र सूरि मतं ९

समस्त दर्शन (जैन) वड़सी नवांगीवृत्ति प्रशस्ति जोइ वृद्ध सम्प्रदाय जोइ नइ बीजा पणि विचारक सही कीधी । जे श्री अभयदेव सूरि खरतर गच्छि हुवा सही सही ।

अत्र साख ओसवाल गच्छे पं० सींहा मतम् १
,, ,, अञ्चल गच्छे पं० लक्ष्मीनिधान मतम् २
,, ,, वृद्ध शालीय तपा गच्छनायक श्री सौभाग्यरत्नसूरि मतम् ३
,, ,, वड़ा गच्छे उ० विनयकुशलमतम् ४
,, ,, कोरंटवाल गच्छे प० पद्मशेखर मतम् ५
,, ,, पूर्णिमा गच्छे पं०रत्नवीर मतम् ६
,, ,, भरुअच्छा (तपागच्छे) पं० रत्नसागर मतम् ७
,, ,, मलधार गच्छे क्षमासुन्दर मतम् ८
,, ,, अञ्चलिया पूर्णचन्द्र मतम् ९
,, ,, संडेरा समयरत्न मतम् १०

अत्र साखि त्रांगड़िया पुनमिया गच्छे श्रीविद्याप्रभ सूरि मतं १०
,, ,, ढंढेरिया पुनमिया गच्छे श्रीसंयमसागरसूरि मतं ११
,, ,, कुतवपुरा तपागच्छे श्रीविनयतिलकशरि मतं १२
,, ,, वोकड़िया गच्छे श्रीदेवानन्द सूरि मतं १३
,, ,, सिद्धान्तिया गच्छे पन्यास प्रमोदहंस मतं १४
,, ,, पाल्हणपुरा गच्छे वा० विनयकीर्ति मतं १५
,, ,, पाल्हणपुरी साखा तपा गच्छे वा० रंगनिधान मतं १६

अत्र साख आगमिया गच्छे ऋषि रामा मतम् ११
,, ,, सुधर्मघोष गच्छे ऋषि रत्नसागर मतम् १२
,, ,, कडुआमती पोमसी मतम् १३

श्री खरतर गच्छ अभयदेव सूरि सं० ११११ श्री स्थम्भणउ पार्श्वनाथ प्रगट कीधउ। स० ११२० वर्षे नवागीवृत्ति कीधी। स० १२०४ रुद्रपल्लीय अभयदेवसूरिजी बीजा हुवा। म मानइ ते अभागीया (उत्सूत्र-भाषी कूड़ा थका धर्मनिगमी संसार मध्ये रूलस्यै सही सही) खोटुं बोली नइ चारित्र गमाड़ छै। तथा केई कदाग्रही इम कहे जे श्री अभयदेवसूरि नवांगी वृत्ति कर्त्ता श्रीस्यम्भणउ पार्श्व प्रकट कारक खरतर गच्छे न हुवा ते महा उत्सूत्र-वादी जाणवा। जिणे कारणे तपागच्छनायक श्रीसोमसुन्दर सूरि नी कीधो उपदेश सत्तरी ते मांहें बारमइ उपदेशि, ते कालना गीतार्थ संवेगी हुवा तिणइ खरतर गच्छी कह्या छइ ते हुण्डी लिखीजइछे (इसके बाद संस्कृतके २१ श्लोक उपरोक्त ग्रंथसे उद्धृत किये हैं, उन्हें यहां अनावश्यक समझकर हमने नहीं लिखा)

इत्यादि वृतान्त जाणी करी जे सम्वेगी गीतार्थ छइ ते समस्त सूधा कहिस्यै। उत्सूत्र थी बीहता थका बीजाइ पूर्वाचार्य अनेरइ गच्छे हुवा तेही इम कह्या जे श्री अभयदेव सूरि नवांगी-वृत्तिकर्ता स्थम्भना पार्श्वनाथ प्रकट करणहार जयतिहुअण बत्तीसी कारक श्रीखरतरगच्छि हुवा सही सही ।। सन्देह नहीं ।।

अत्र साखि अंचल गच्छे पण्डित भावरत्न मतं १७
,, ,, छापरिया पुनमिया गच्छे पण्डित उदयराज मतं १८
,, ,, साधु पुनमिया गच्छे वा० नगामतं १९
,, ,, मलधारा गच्छे पण्डित गुणतिलक मतं २०
,, ,, ओसवाल गच्छे पणित रत्नहर्ष मतं २१
,, ,, धवल पर्वीया आंचलिया (आगमिया) पण्डित रंगा मतं २२
,, ,, चित्रवाल गच्छे वा० क्षेमा मतं २३
,, ,, चिन्तामणियापाड़ा वा० गुण माणिक्य मतं २४
,, ,, आगमिया उ० सुमतिसेखर मतं २५
,, ,, वेगड़ा खरतर पण्डित पद्ममाणिक्य मतं २६
(उ०धर्म मेरु मतं)
,, ,, वृहत्खरतर वा० मुनिरत्न मतं २७
,, ,, चित्रवाल जोगीवाड़इ पं०राजा मतं(मुनि जयराज मतं)२८
,, ,, कोरण्टवाल गच्छे चेला हांसा मतं २९
,, ,, विवन्दणीक खिरालुआ (चेला मोकल) मतं ३०
,, ,, आगमिया मोकल मतं ३१
,, ,, खरतर उपाध्याय जयलाभ मतं ३२

एवं काती सुदि ४ दिने (काती सुदि ७ शुक्रवारे) सर्व दर्शन मिलि (सर्व सङ्घ समुदाये) मजलस कीधी। धर्मसागर ऋषि-मती तेडाव्यउ,पुणि धर्मसागर दर्शन माँहिन आव्यउ वार तीन मजलस करी तेड़ाव्यो पछइ छिपि रह्यो (ते श्याम मुख करनइ) पण नावइ। तिवारइ काती सुदि १३ दिने सर्व-दर्शन मिलि नइ चर्चायइ खोटो (कूडो, भूठउ) जाणीनइ (सर्वथा) निन्हव थाप्यो। जिन दर्शनि वाहिर कीधउ। सही सही १०८ सर्व दर्शन सम्मत श्री अभयदेवसूरि

नवाङ्गी वृत्तिकर्ता स्थभणा पार्श्व प्रकट कर्ता ते खरतर गच्छइ हुवा। पत्तनीय समस्त दर्शन विचारी मतं लिखतं ॥●

अथ ग्रन्थ×साक्षि लिख्यते—

१ श्री तपागच्छीय श्री हेमहंससूरि कृत कल्पान्तर वाच्ये।

२ भावड़हरा कृत गुरुपर्व प्रभावक ग्रन्थे।

३ तपागच्छीय कृत आचारप्रदीपे।

४ तपागच्छीय कृत लघुशालीय पट्टावल्याम्।

५ सन्देह दोलावली खरतर ग्रन्थ प्रामाण्य साधकत्वेन।

६ कुमारगिरि स्थित तपा सामग्री साधु पट्टाल्याम्।

७ श्रीजिनवल्लभसूरि कृत सार्द्ध शतक (डोढसया) कर्मग्रन्थ मध्ये

८ चित्रवाल गच्छीय धनेश्वरसूरि कृता वृत्ति परम्परा साधकत्वेन

९ तपा कल्याणरत्नसूरि कृत चरित्र टिप्पनकद्वये। (कल्याणरत्नसूरि प्रबन्ध ग्रन्थ)

१० छापरिया पुनमिया पट्टावल्याम्।

११ साधुपुनमिया पट्टावल्याम्।

१२ गुरु पर्वावली ग्रन्थे।

● महोपाध्याय श्रीजयसोमजी कृत "प्रश्नोत्तर-विचारसार" और महोपाध्याय श्रीसमयसुन्दरजी कृत "समाचारी शतक" से यहां प्रकाशित किया गया है। इस मत-पत्रमे उस समयके गच्छ और आचार्यों के विषय में अच्छा ज्ञातव्य मिलता है।

× इन ग्रन्थोंमेंसे अभी कई ग्रन्थ अनुपलब्ध है। उनकी खोज-शोधकी पूर्ण आवश्यकता है।

१३ प्रभावक चरित्र १५ (१३) सर्ग श्लोक ५५ थी ६५ पर्य्यन्त श्रीअभयदेवसूरि चरित्रे।

१४ पल्लीवाल गच्छीय भ० आमदेवसूरिकृत प्रभावक चरित्रे (गद्यमये)।

१५ पीपलिया उदयरत्नसूरि प्रारम्भेण जीवानुशाशन वृत्तिः।

१६ तथा श्रीसोमसुन्दरसूरि राज्ये कृतोपदेश-सत्तरी ग्रन्थे।

किम्बहुना ४१ ग्रन्थ मध्ये हुण्डी, खरतर गच्छीय श्रीअभयदेव सूरि नवाङ्गीवृत्ति-कारक स्थंभना पार्श्वनाथ प्रकटकर्त्ता थया (वभूव) मूलगा (लि) खत सर्व दर्शनि (जैन रा मता) पाटण रा भण्डार मांहि मूक्या छै। ते उपरि ए परत लिखि छइ, जे न मानै ते निन्हव जाणिवा।

उस समयके तप-गच्छके आचार्य श्रीविजयदानसूरिजी भी परस्पर पूर्ववत् गच्छोंमें प्रेम बना रहे, और उत्सूत्र-प्ररूपणाकी वृद्धि न हो इसलिये धर्मसागरजीके बनाये हुए उत्सूत्र-कंद-कुद्दाल और तत्वतरङ्गिणी ग्रन्थोंको जलशरण करवाया। और धर्मसागरजीको अपने गच्छसे वहिष्कृत कर दिया।

उन ग्रन्थोंको अमान्य ठहरानेके लिये सात वोल सर्वत्र प्रसिद्ध कर दिये, जिससे भविष्यमें कोई भी उन ग्रन्थोंको प्रमाणिक न समझे।

ग्रन्थोंको जल शरण करनेका उल्लेख तपगच्छकी पुस्तकोंमें इस प्रकारहै :—

"संवत सोल सतोतरइ निसुणो अवदात रे।"

"धर्मसागर ते पण्डित लगइ, कर्यो नवो एक ग्रन्थ रे।
नाम थी कुमति कुद्दालड़ो, मांडी अभिनवउ पन्थ रे ॥१५५॥
आप वखाण करइ घणो निन्दइ पर तणउ धर्म रे।
एम अनेक विपरीत पणु, ग्रन्थ मांहि घणा मर्म रे ॥१५६॥
मांडी तेणइ तेह परुपणा, सुणी गच्छपतिरायरे।
वीसलनयरि विजयदानसूरी, आवी करइ उपाय रे ॥१५७॥
पाणि आणि कहइ श्री गुरु ग्रन्थ बोलावउ (डूबाओ) एह रे।
नयर बहु सङ्घनी साखि मुं, ग्रन्थ बोलियउ तेह रे ॥१५८॥
श्रीगुरू आण लही सही सरचन्द्र पन्यास रे।
हाथिस्युं ग्रन्थ जलि बोलियउ, राखि परम्परा अंश रे ॥१५९॥
ग्रन्थ बोलि सागर वहनइ (कन्हइ?) लीधुं लिखित तम एक रे।
नवि एह ग्रंथ प्ररूपणा, नवि धरवी धरि टेक रे ॥१६०॥"

(दर्शनविजय कृत विजयतिलकसूरि रास)

मुण्यो सरइ न पोतइ सागर, रांक तणी परि रोलया।
कुमति-कुद्दाल नइ तत्व तरङ्गिणी, संघि पाणी मांहे बोलया ॥२४॥

(सिंहविजय कृत सागर-बावनी सं १६७४)

उ० धर्मसागरने भी स्वयं उन बोलोंको स्वीकार करके अपनी की हुई उत्सूत्र-प्ररूपणाका "मिच्छामि-दुक्कडम्" देकर अपने ग्रन्थ कुमति (उत्सूत्र) कंद कुद्दाल को अश्रद्धेय, अमान्य, अप्रमाणिक रूपसे प्रसिद्धि की थी। उस पत्र की नकल मासिक 'जैन युग' वर्ष ५, पृ० ४८३ से लेकर यहां उद्धृत करते हैं:—

"स्वस्ति श्री शान्ति जिनं प्रणम्यः ॥ तिरवाडा नगरतः परम गुरु श्रीविजयदानसूरि सेवी उ० श्रीधर्मसागर गणि लिखति समस्त नगर साधु-साध्वी श्रावक श्राविका योग्यम् ॥ आज पछी अमे पांच निन्हव न कहउ पांच +निन्हव कह्या हुइ ते "मिच्छामि दुक्कड़म्" ॥ उत्सूत्र-कंद-कुद्दाल ग्रन्थ न सद्दहउ, पूर्वइ सद्द्यउ हुई ते "मिच्छामि–दुक्कड़म्"। षट्-पर्वी। चतुः पर्वी आश्री जिम श्री पूज्य आसि (आदेश) देइ छइ ते प्रमाण ॥छः॥ सात बोल जिम भगवन आनि द्यइ छइ ते प्रमाण ॥ चतुर्विध संघ नी आसातना कीधी हुई ते "मिच्छामि-दुक्कड़म्" ॥ आज पछी पांच ना चैत्य वांदवा ॥ तिरवाडा माँहि श्री पूज्य परम-गुरु श्रीविजयदानसूरि नइ "मिच्छामि-दुक्कड़म्" ॥ दीधउ छइ संघ समक्ष ए बोल आश्री जिणइ खोटो सद्द्यउ हुवइ ते "मिच्छामि दुक्कड़म्" देज्यो ॥छः॥"*

विजयदानसूरिजीके पट्टधर श्री हीरविजय सूरिजी ने भी धर्मसागरके उत्सूत्रका निराकरण करनेके लिये १२ बोल निकाले थे, उसमें भी १० वां बोल यह है:—

"तथा श्रीविजयदानसूरि बहुजन समक्ष जलशरण जे कीधु

+ पूनमिया, खरतर, आंचलिया, साढ पूनमिया और आगमिया ये पांच (देखें ऐतिहासिक रास संग्रह भा ४ पृ० ७)

* धर्म सागरके अप्रमाणिक ग्रन्थोंका आश्रय लेकर आज भी कई महा कदाग्रही गच्छोंमें परस्पर वैमनस्य-वृद्धि कर रहे हैं, यह एक परम दुःखकी बात है। उस समयके प्रभावक तपागच्छीय आचार्य श्रीविजयदानसूरि, श्री हीरविजयसूरि, विजयसेनसूरि आदिने जिन ग्रन्थोंको सर्वथा असद्दहनीय, अमान्य, अप्रमाणिक सिद्ध कर दिया था और स्वयं धर्मसागरने जिसे स्वीकृत कर "मिच्छामि-दुक्कडम्" (दुष्कृतको मिथ्या स्वीकारकर उसकी आलोचना करना) दिया था, आज उन्हींकी परम्परावाले उन ग्रन्थोंको क्यों उपादेय समझ प्रकाशित कर कलङ्कित हो रहे हैं!!!

उत्सूत्र कंद-कुद्दाल ग्रन्थ तेह माँहिलु जे असम्मत अर्थ वीजा कोई ग्रन्थ माँहि आण्यउ हुवइ; तउ ते तिहाँ अर्थ अप्रमाण जाणिवउ।"

और श्रीविजयसेनसूरिने भी १० वोल प्रकट किये थे, जो कि "जैनयुग" में छप चुके है।

इस प्रकार पाटणमें उ० धर्मसागरको परास्तकर श्रीजिनचन्द्रसूरिजीने खरतर गच्छकी महान् सेवा की। इसी चातुर्मासमें आपने "पौषध-विधि प्रकरण" पर एक विशिष्ट वृत्ति रची, जिससे आपकी प्रकाण्ड-विद्वताका भली भांति परिचय मिलता है। उक्त ग्रंथकी प्रशस्तिका आवश्यक अंश यह है:—

आदि:—

गोलक्ष्मलक्ष्य मुपलक्षित भाव लक्ष्मं,
जाग्रत् प्रभावं विदितं कनकावदातम् ।
दान्तेन्द्रिय द्विरद वृन्दममंद वाघं,
वाचंयमेन मनिशं स्मरतादि देवं ॥१॥

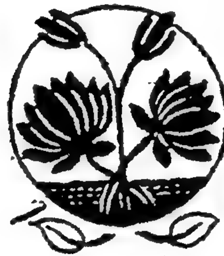
× × ×

अंत्य प्रशस्ति:—

तेषां गुरूणा शिष्येण, श्रीजिनचन्द्रसूरिणा
श्री पौषध विधेर्वृत्ति श्चक्रे स्वेष्ट प्रसादतः ॥२४॥
संयोज्य वृत्ति चूर्णी समाचारी विलोक्य सद्युक्त्या
पुनरपि तरगास्त्र भावं मत्वानल्पप्रदायमपि ॥२५॥
श्री पुण्यसागर महोपाध्यायैः पाठकेन्द्रधनराजैः
पपि साधुकीर्ति गणिना, गुणोधिना शोधं दृष्टेयम् ॥२६॥

मुनि शशि विद्यादेवी प्रमिते वर्षेऽणहिल्लपुर नगरे ।
आश्विन विजयदशम्यां सुमुहूर्ते पुण्य संयोगेन ।।२७।।
प्रत्यक्षर गणनेन त्रिसहस्त्री पञ्चशतक संयुक्ता ।
चतुरधिकैः पंचाशत् श्लोकैरस्याः प्रमाणमिदम ।।२८।।
इति पौषध विधि प्रकरण वृत्ति समाप्ता ग्रं० ३५५४ पत्र ६७

(तत्कालीन प्रति, बीकानेर बृहत्ज्ञानभण्डारान्तर्गत श्रीजिनहर्षसूरि भण्डारे)



पांचवां प्रकरण

विहार और धर्म-प्रभावना



भात संघके मुख्य श्रावक, बच्छराजका पुत्र कम्मा शाह आदि सूरिजीको चतुर्मास खंभात में करनेके लिये आमन्त्रित करने आये। उनके विशेष आग्रहसे सूरि-महाराज खंभात पधारे, स्तम्भतीर्थकी यात्रा की और संघ-आग्रहसे सं० १६१८ का चतुर्मास खम्भातमें किया, वहांकी धर्म-प्रभावनाका वर्णन कवि "कुशललाभ" ने अपने "श्रीपूज्य वाहण गीत" में इस प्रकार किया है—

"धर्ममार्ग उपदेशतां करतां विधइ विहार रे।
आव्याजी नगर त्र्म्बावती श्रीसंघ हर्ष अपार रे॥ ३५॥
पूज्य आव्या ते आशा फली, श्री खरतर गच्छ गणधार रे।
श्रीजिनचन्द्र सूरि वांदियइ साथइ साधु परिवार रे॥३६॥

× × ×

"प्रभु पाटि ए चउवीसमड, श्री पूज्य जिनचन्द्रसूरि।
उद्योतकारी अभिनयउ, उदयउ पुण्य अंकुर॥ ५५॥

शाह (श्रावक) भण्डारी वीरजी, शाह रांका नइ गुरु राग।
वर्द्धमान शाह विनयइ घणउ, शाह नागजी अधिक सोभागरे॥५३॥

शाह वच्छा शाह पदमसी, देवजी नइ जैत शाह।
श्रावक हरखा हीरजी, भाणजी अधिक उच्छाह ॥५७॥
भण्डारी मांडण नइ भगति घणी शाह जावड़ नइ घणउ भाव।
शाह मनुवा नइ शाह सहजिया, भंडारी अमियउ अधिक उच्छाह ॥५८॥
नित मिलइ श्रावक श्राविका, संभलइ पूज्य वखाण।
हियड़उ उल्लटइ उल्लसइ एम जीयउ जनम प्रमाण ॥५९॥
आग्रह देखि श्रीसंघ नउ पूज्यजी रह्या चउमास।
धर्म नउ मारग उपदिसइ इम पहुंती मननी आश ॥६०॥
प्रतिमा प्रतिष्ठा थापना दीक्षा दियइ गुरु राज।
इम सफल नर भव तेहनउ जे करइ सुकृत ना काज ॥ ६१॥"

इस प्रकार खंभातमें जिन बिम्ब-प्रतिष्ठा, शिष्य-दीक्षा आदि बहुतसे धर्मकृत्य हुए।

बाद विजयकर वहांसे ग्रामानुग्राम विहार करते हुए सम्वत् १६१९ में श्री जिनचन्द्र सूरिजी महाराज "राजनगर" पधारे। वहां एक महाविद्वान् भट्ट अपनी विद्वताके अभिमानमें चूर हुआ फिरता था। उसे मंत्रीश्वर "सारंगधर सत्यवादी" * उपाश्रय में सूरि महाराजके पास लाया। सूरिजीने उसकी समस्या पूर्ण कर पराजित किया, जिसका वर्णन बीकानेर ज्ञान भण्डारकी एक १८वीं शताब्दी में लिखित पट्टावलीमें इस प्रकार है:—

"वली सं० १६१९ राजनगरइ एक भट्ट महा विद्यावन्त नगर मइ फिरइ, माथे अंकुश पेटइ पटो बांध्यउ, एक चाकर रै माथे घड़ो पाणी रौ बीजा रै माथि खड़ रौ पूलो एहवउ अहङ्कार धरी नइ फिरइ। तरइ सत्यवादी सारंगधर मन्त्री उपासरइ लेइ आयउ,

---

*इनका नाम जयसोमजी कृत प्रश्नोत्तर ग्रंथमें आता है, ये खरतर गच्छ के परमभक्त और प्रतिभाशाली पुरुष थे। इनको संघपतिकी पदवी थी।

पहिली जतियां सु वादकी, वोल्यां थाग न लाभइ; तरइ समस्या कहीः—

* "मक्षिका पादघातेन कम्पितं जगतः त्रयम्"

एह समस्या नउ अर्थं (पूर्ति) भाग्य नइ जोगइ युगप्रधानजी ए कह्यो :—

÷ "समभित्तौ लिखितं चित्रं, वारिणा कुण्ड पूरितम्"
मक्षिका पादघातेन, कम्पितं जगतः त्रयम् ॥

एम कही भट्ट नइ हरायउ (भट्ट) पगे लाग्यउ ।

वहांसे विहार करके सूरि महाराज पाटण पधारे, सं० १६१६ का चतुर्मास वहीं किया। सं० १६२० में आपका चातुर्मास वीसल नगर* हुआ। वहां से, वीकानेरके मन्त्रीश्वर श्री संग्राम सिंह वच्छावतके आग्रहसे वीकानेर पधारे। सं० १६२१ का चातुर्मास वीकानेरमें किया।

वीकानेरके श्रीवासुपूज्यजीके मन्दिरमें श्री सुपार्श्वनाथजी की पञ्चतीर्थी धातु प्रतिमा सं०१६२२ वैशाख शुक्ला ३ के दिन सूरिजीके कर कमलोंसे प्रतिष्ठित है जिसके लेखकी नकल इस प्रकार है :—

---

* "मक्षिकाके पैरों के आघात से तीन जगत कांपने लगा।"

÷ "समान भीत (दिवार) पर तीन जगतको चित्रित करके, उसके नीचे जलसे भरा हुआ कुण्ड-पात्र रखा। उसमें त्रि-जगतके चित्रकी छाया पड़ने लगी, उस पानीके ऊपर मक्षिका के बैठनेसे पानी हिलने लगा। पानी हिलनेके साथ-साथ तीन जगत की प्रति-छाया (प्रति बिम्ब) भी हिलने लगी, इससे "मक्षिका" के पैरों के आघात से तीन जगत कांपने लगा।"

* विहार पत्र नं० २ में वीसलनगरके स्थानपर वीकानेर लिखा है, किन्तु हमें वीसलनगर ही ठीक प्रतीत होता है।

मुगलां नउ कटक मारग थकी चूकउ, बीजी ठामि गयउ। सर्वलोक आप आपणा घरे आव्या संघ मिली ऊपासरइ आवि देखइ तउ गुरुजी ध्यान करइ छइ। संघ वांदी, पूजी स्तवना करिवी मांडी, सर्वलोक हर्षित थयऊ ठाम ठाम शोभा थई।

वहांसे विहार करके सूरिजी वापड़ाउ (? वापेउ, बीकानेर से ४४ मील) पधारे। सं० १६२५ का चातुर्मास संघके विनीत आग्रह से वहीं किया। चातुर्मास पूर्णकर वहांसे ग्रामानुग्राम विचरते हुए बीकानेर पधारे। सं० १६२६ का चातुर्मास बीकानेर किया। सं० १६२७ का चातुर्मास महिम किया, वहां से साधु-विहार करते हुए मेवात देशमें होकर आगरा पधारे। विहारपत्रों में लिखा है:—"सं० १६२७ महिम—शां० कु० अ० म० थूभ। चन्द्र० मू० स्थु० नेमि चैत्य विचि सौरीपुर यात्रा, चन्द्रवाडि हथिणाउरि पछइ आव्या।" इससे हस्तिनापुर में शान्तिनाथ, कुन्थुनाथ, अरिनाथ और मल्लिनाथजी के स्तूपों की और चन्द्रवाड़में श्री चन्द्रप्रभु भगवानकी यात्रा करना निश्चित है।

आगरेमें बहुतसे धर्मकार्य हुए। वहां १ महीने का मास-कल्प स्थिति करके आप सौरीपुर पधारे। वहां पर श्रीनेमिनाथ स्वामीकी यात्रा की,और चन्द्रवाड़ि एवं हस्तिनापुरकी यात्रा करके वापिस आगरे पधारे। वहांसे चातुर्मास करने के लिये ग्वालेर जाते थे परन्तु आगराके श्रीसंघके विशेष आग्रहसे सं० १६२८ का चातुर्मास वहीं किया। प र्युषणा पर्व, धर्म ध्यान करते हुए सुख पूर्वक व्यतीत हो जानेके पश्चात् सूरिजी ने एक पत्र "सांभलि-नगर" के संघको दिया। यह असली-मूल पत्र हमारे संग्रहमें है, इसमें उपरोक्त तीर्थ पर्य्यटन, विहार और धर्म कार्योंका भी थोड़ा वर्णन है। उस पत्र की नकल इस प्रकार है:—

॥६०॥ स्वस्तिश्री शान्ति जिनं प्रणम्यः श्रीआगरा नगरात्.....

श्री जिनचन्द्र सूरयः पं० अणंदोदय गणि पं० वीरोदय मुनि पं० भक्तिरंग गणि पं० सकलचन्द्र गणि पं० नयविलास मुनि पं० हर्ष विमल पं० कल्याणमल पं० महिपराज पं० समयराज पं० धर्म-निधान पं० रत्ननिधान श्रीपाल प्रमुख साधु १९ विहितोपास्तयः श्री सांभलि स्थाने श्रीदेव गुरु भक्तिकारकं श्री जिनाज्ञा प्रतिपालकं सा० मूला० सा० सामीदास सा० पुरू सा० पदू मा० वस्तू सा० गांगू नाथू धम्मू पुरू लखू प्रमुख श्रीसंघ समुदायकं सादरं धर्मलाभ पूर्वकं समादिशंति श्रेयोत्र श्रीदेव गुरु प्रसादात्। उपदेशो यथा ॥ धम्मो मंगल मुक्किठं, अहिंसा संजमो तवो। देवावि तं नमंसंति जस्स धम्मे सयामणो ॥१॥ इत्यादि धर्मोपदेश जाणी धर्मोद्यम करतां लाभ छइ तथा महिम हुंती विहार करी साधु विहार करतां मेवात देश माँहि थइ नइ अत्र आव्या घणा धर्म ना लाभ थया। पछइ मास कल्प क.........(री नइ ?) सौरीपुर श्रीनेमिनाथनी यात्रा करी नइ अत्र आ.........(व्या) पछइ चउमासि उपरि ग्वालेर नइ चालता हुंता प.........(रं श्रीसं) घनइ आग्रहइ अत्रेज रह्या। धर्म ध्यान करतां करावतां श्री प पणा पर्व आव्यइ सा० श्रीवच्छ स० लक्ष्मीदासादि सपरिवारइ विधि पूर्वक पुस्तक वंचाव्या वाचना प्रभावनादि धर्म करणी घणी हुई पोसहता १५१ हुया बीजाइदान शील तप भावनादि धर्म करणी हुइ एव जाणी तुह्रे अनुमोदिवा। आं सामग्री साधु साध्वी विशेषइ चिंता करवी। तथा तुम्हारा कागल आव्या समाचार परीछ्या। तुह्रे उत्तम सुश्रावक छउ सवली सामग्री आवइ तउ राखेज्यो ज्युं धर्म निर्वहइ एवं समस्त संघ माँहि धर्मलाभ कहेज्यो। एवं परीछ.........पारणइ पूर्व दिशइ तीर्थ यात्रा भणी विहार.........(करवाना भा ?) व छइ वली वर्तमान जोगि जाणिस्यइ ॥ समस्त श्रावक श्राविका नइ धर्मलाभ कहेज्यो ॥

इस पत्रके अनुसार यदि चातुर्मास पूर्णकर सूरिजी पूर्व-देशीय तीर्थोंकी यात्रा करने गये हों तब तो यथा-संभव सम्मेत शिखरजी,

पावापुरीजी, चंपापुरीजी, राजगृह आदि तीर्थोंके दर्शनकर आये होंगे। तत्पश्चात् सं० १६२६ का चातुर्मास रुस्तक (रोहतक, दिल्लीके निकटवर्ती) किया। चातुर्मास पूर्णकर सूरि-महाराज ग्रामानुग्राम विचरते हुए वीकानेर पधारे। यहां के श्री ऋषभदेव भगवानके मन्दिरमें सूरिजी के कर कमलोंसे प्रतिष्ठित श्रीअजितनाथ स्वामीकी धातु-प्रतिमा विद्यमान है; जिसपर निम्नोक्त लेख हैं:—

"संवत् १६३० वर्षे माह सुदि १०दिने श्री उपकेश वंशे छाजहड़ गोत्रे सा० छठा चा (?) तत्पुत्र सा० अमरसीकेन कारितं श्री अजित-नाथ विम्वं प्रतिष्ठितं खरतर गच्छे श्री जिनचन्द्र सूरिभिः।"

फाल्गुन मासमें "नयणा" नामक श्राविकाने सूरिजीसे वारह व्रत ग्रहण किये थे। तव साधुवर्द्धन के शिष्यने वारह व्रत रास वनाया जिसमें लिखा है.—

"खरतर गच्छ रउ राजियउ, जिनचन्द्र सूरि मुनि राय।
तासु पासइ ए विरति लेइ, श्राविका नयणा आय ॥४॥
संवत सोल त्रीसोत्तरइ, फागुण मासि विशाल।
साधुवर्द्धन पसाउलइ, रची विरतवंध रसाल ॥५॥
जिम शशि रवि ध्रू अछइ, वरणीधर सुप्रसिद्ध।
तिमि अविचल होज्यो सही, एह विरत सम्वन्ध ॥६॥

[अन्तिम पत्र, श्रीपूज्यजी के संग्रहमें]

सूरिजीके वीकानेर पधारनेसे विम्व-प्रतिष्ठा, व्रत ग्रहण आदि खूब धर्म कार्य होने लगे। लाभ जानकर सूरि-महाराज ने सं० १६३१ और १६३२ का चातुर्मास वीकानेर ही किया। वहां से विहारकर फलौदी पधारे, वहां श्री पार्श्वनाथ प्रभु के प्राचीन भव्य मन्दिर पर द्वेष-वश तपगच्छ वालों ने ताले लगा दिये। सूरि-महाराज प्रभु

दर्शनार्थ पधारे, किन्तु मन्दिर पर ताले लगे देखकर उन्होंने हाथका स्पर्श किया तब उनके प्रभावसे विना-चावी लगाये ही ताले खुलकर पड़ गये ❀।

सूरिजी तीर्थ दर्शनकर वहांसे विहार करके जैसलमेर पधारे। सं० १६३३ का चातुर्मास वहां किया, मिती माघ शुक्ला ५ के दिन श्राविक वींझूने सूरिजीसे १२ व्रत ग्रहण किये, जिसका वर्णन वीकानेर ज्ञान भण्डार (महिमाभक्ति विभाग पोथी नं० ६३) में गा० ५५ के बने हुए रासमें है:—

"शुभस्थान जेसलमेरु नयरइ, सुकृति करी हित कारणइ।
संवत सोल तेतीस बरसइ, माह सुदि पंचम दिणइ॥
गच्छराय श्रीजिनचन्द्रसूरि गुरु, सइ मुखइ संभामु ए।
श्राविका वींझू सुव्रत पालइ, धरि मनि उल्हासु ए॥४५॥

इसी वर्षमें मिती फाल्गुन कृष्णा ५ को श्राविका-गेलीने सूरिजीसे १२ व्रत ग्रहण किए थे जिसका उल्लेख एक बारह व्रत रासकी प्रशस्ति❀में इस प्रकार है :—

❀ देखो! क्षमाकल्याणजी कृत खरतर गच्छ पट्टावली और विहार पत्र आदि। एक प्राचीन पट्टावली में भी लिखा है:—
फलोधी वीतराग देहरा नउ तालउ बिण कूंची हाथ उपरि मूंकि उघेल्यउ
(वीकानेर ज्ञान भण्डार, पट्टावली पत्र ७)

❀ यह प्रशस्ति हमने "जैन-गूर्जर-कविओ भा० १" मे उद्धृत की हैं। इस ग्रंथ में यह रास श्रीजिनचन्द्रसूरिजी की कृतियों में नोंध किया है, किन्तु इस प्रशस्ति से यह सूरिजी की कृति होने का कोई प्रमाण नहीं मिलता। यथा-सम्भव अन्य बारह व्रत रासो की तरह यह रास भी किसी दूसरे कवि ने रचा होगा।

"सम्वत सोलसय तेतीसइ, फागन वदि पञ्चमि उल्लासि ।
खरतर गच्छि गरूयउ गुरु राजइ, श्रीजिनचन्द्रसूरि गुरू पासइ ॥६२॥
श्राविका गेली ए व्रत लीवा, कीधा नरभव सफल आज ।
पांस पसायइ ए विधि करतां, पामिस शिवनगरी नो राज ॥६३॥
बारह व्रत सूधा पालेवा, एम कहइ परिग्रह-परिमाण ।
लीलविलास सदा सुख पामइ, वाधइ दिन-दिन कलाविनाण ॥६४॥

इति श्री इच्छा परिमाण टिप्पनके सं० १६३३ वर्षे फाल्गुन वदि ५ दिने श्रीमच्छ्री खरतर गच्छाधिराज श्रीजिनमाणिक्यसूरि पट्टालङ्कार श्रीजिनचन्द्र सूरि राजानां स्वहस्तेन गेली सुश्राविकया ग्रहीतम् ॥

(इसकी प्रति आमोदके यति चन्द्रविजयजी के पास है)

वहांसे विहार करके सूरिजी देराउर पधारे वहां श्रीजिनकुशल सूरिजीके "स्वर्गस्थान" का दर्शन करके सं० १६३४ का चातुर्मास वहीं किया। इसके पश्चात् सं० १६३५ में जैसलमेर, सं० १६३६ में वीकानेर, सं० १६३७ में सेरूणा (वीकानेरसे २८ मील पूर्व), सं० १६३८ में वीकानेर, सं० १६३९ में जैसलमेर और सं० १६४० आसनीकोटमें क्रमशः चातुर्मास किये। "आसनी कोट" चातुर्मास कर सूरिजी जैसलमेर पधारे। वहां मिती माघ शुक्ला ५ के दिन अपने विद्वान शिष्य महिमराजजी को "वाचक" पदसे अलंकृत किया।

इसके अतिरिक्त 'जैन-गूर्जर-कविओं' में (१) द्रौपदी रास, (२) बारह-भावनाधिकार, (३) शीलवती रास, (४) शाम्ब प्रद्युम्न चौपाइ (५) जिन बिम्ब-स्थापन स्तवन भी सूरिजी की कृतियां लिखी हैं। हमें तो इन कृतियों का भी सूरिजी की रचना होने में सन्देह है। कृतियों को देखकर इसका निर्णय करना आवश्यक है।

जैसलमेरसे विहारकर सूरि महाराज जालोर पधारे। सं० १६४१ का चतुर्मास वहीं किया। इस चातुर्मासमें ऋषिमती-तपागच्छवालोंके साथ शास्त्रार्थ हुआ, इस शास्त्रार्थ में सूरिजी की विजय*हुई। वहां से विहार करके पाटण पधारे, सं० १६४२ का चातुर्मास वहां हुआ, वहां भी तप गच्छवालों के साथ हुए शास्त्रार्थ में सूरिजी विजय-लक्ष्मी× को प्राप्त हुए।

वहांसे विहार करके अहमदावाद पधारे। सं० १६४३ का चातुर्मास वहां किया। वहां धर्मसागर कृत उत्सूत्र-मय पुस्तक रूपी विष वृक्षका उच्छेद किया, जैसा कि+ खरतर गच्छ पट्टावली नं० १ और नं० ३ में लिखा है :—

"पुनः सं० १६४३ वर्षे ताद्य धर्मसागर कृत ग्रन्थोच्छेद कृत्"

सूरिजीने सं० १६४४ का चातुर्मास खम्भात किया। वहां श्री स्थम्भन तीर्थ और श्रीजिनकुशलसूरि-स्तूपके दर्शन किये। चातुर्मास पूर्ण हो जानेसे विहार करके अहमदावाद पधारे। श्री गुण-विनय कृत, बीकानेरसे शत्रुञ्जय यात्रार्थ निकले हुए संघके "चैत्य-परिपाटी-स्तवन" से जाना जाता है कि "बीकानेरसे सं० १६४४ के माघ महीनेमें तीर्थाधिराज श्री सिद्धाचलजीके यात्रार्थ सङ्घ निकला, वह विशाल यात्री सङ्घ रास्तेमें आये हुए समस्त तीर्थोंकी यात्रा करता हुआ क्रमशः मेरिसे, लोडण-पार्श्वनाथ के तीर्थमें आया।

इधर अहमदावादसे सङ्घपति योगीनाथ और सोमजीके सङ्घ सहित सूरिजी भी आकर सम्मिलित हुए। उस सङ्घमें चारों

*देखो विहार पत्र नं० १, २

×देखो विहार पत्र नं० २

+देखो पूरणचन्द्रजी नाहरकी प्रकाशित "खरतर गच्छ पट्टावली संग्रह"

दिशाओंके यात्री आये थे, जिनमेंसे—बीकानेर, मण्डोवर, सिन्धु देश, जैसलमेर, सिरोही, जालोर, सोरठ और चांपानेरका नाम उल्लेखनीय है। इस विशाल यात्री सङ्घके साथ मिती चैत्र कृष्णा ४ के दिन सूरि-महाराजने महातीर्थ, सिद्धक्षेत्र श्री सिद्धाचलजीकी यात्रा की* ।

वहांसे ग्रामानुग्राम विचरते हुए सूरि-महाराज सूरत पधारे। उनके आगमनसे संघ में बहुत प्रसन्नता हुई, सब लोग अधिकाधिक धर्म-ध्यान करने लगे। वर्षाकाल सन्निकट होनेसे सूरिजीने सम्वत् १६४५ का चातुर्मास सूरतमें किया।

सं० १६४६ का अहमदावाद और सं० १६४७ का चातुर्मास पाटण किया। सं० १६४७ में श्राविका कोडांने आपसे बारह व्रत ग्रहण किये थे, जिसका रास श्री० जयसोमजी कृत (कपड़े पर लिखी हुई प्रति) हमारे संग्रहमें है। आवश्यक अंश इस प्रकार है:—

"श्रीजिनचन्द्रसूरि श्रीमुखइ, श्राविका कोडां एह।
आदरइ बारह व्रत इसा, शुभ दिवस रे मन हर्ष धरेय ॥१८॥
सोलहसइ सैंताल समइ, वैसाख सुदि दिन तीज।
इम ढाल बन्धइ गुंथिया, श्रावक व्रत रे जिह समकित बीज १६

*'संवत सोलह सइ चिम्मालइ, वरसि सवि सुखकार।
चैतवदी चउथी दिनइ, बुध वल्लभ बुधवार ॥ १० ॥ मेरी० ॥
संघपति योगी सोमजी, मन धरि हरख तरङ्ग।
गच्छपति श्रीजिनचन्द्र नइ, यात्रा करावी रङ्ग ॥ ११ ॥ मेरी० ॥
सुविहित खरतर संघ नइ, श्री आदि देव प्रसन्न।
वाचनाचारिज इम भणइ, रत्ननिधान वचन्न ॥ १२ ॥ मेरी० ॥

[वा० रत्ननिधान कृत स्तवन]

जिनदत्तसूरि गुरु सानिधइ, जिन कुशलसूरि सुपसाइ ।
जयसोम गणि इणि पर कहइ, शुभ भावइरे दिनदिन सुखथाइ २०"

पाटणसे विहार करके अहमदावाद होते हुए सूरिजी खम्भात पधारे, वहां श्रीस्थंभन पार्श्वनाथ प्रभुके तीर्थके दर्शन किये। खम्भात के संघने आपको वहीं चातुर्मास करनेके लिये विशेष आग्रह किया। संघके आग्रहसे सूरिजीने वहींपर अवस्थिति की।

आचार्य पद प्राप्तिके पश्चात् आपने निरन्तर सर्वत्र विहार करके अनेक जीवोंको प्रतिबोध दिया, और हजारों श्रावकोंको जैन-दर्शनका सद्‌बोध देकर धर्ममें दृढ़ किया। इससे अनेक स्थानोंमें जिनालय व जिन बिम्बोंकी प्रतिष्ठाएं, उपधान, व्रत-ग्रहण, इत्यादि प्रशंसनीय धर्म कृत्य हुए। अनेक संघ निकाले गये, जिनके साथ सूरि-महाराजने मारवाड़, गुजरात और पूर्व प्रान्तीय तीर्थोंकी यात्रा की। परपक्षियोंके किये हुए आक्षेपोंका उत्तर देनेमें और विद्याभिमानी पण्डितोंको निरुत्तर करनेमें आपकी प्रतिभा बहुत बढ़ी बढ़ी थी। जैन दर्शनके तत्व-ज्ञान का प्रचार आपने खूब जोरोंसे किया। आपके सद्‌गुण और विद्वताकी सौरभ सर्वत्र प्रसरित होकर सम्राट अकबरके दरबार तक पहुंच गयी थी।

"हिव अहमदावाद सुरम्म, योगीनाथ शाह सुधम्म ।
शत्रुञ्जय भेटणि रंगि, तेड्यागुरु वेगि सुचंगि ॥ १९ ॥
मेलि सहु संघ गुरु साथि, परघल खरचइ निज आथि ।
चाल्या भेटण गिरिराज, संघपति सोमजी सिरताज ॥ २० ॥

दोहा—पूरब पश्चिम उत्तरउ, दक्षिण चिहुँ दिशि जाण ॥
संघ चाल्यउ शत्रुञ्जय भणी, प्रयटी महियल वाणि ॥ २१ ॥
विक्रमपुर मंडोवरउ, सिन्धु जैसलमेर ।
सीरोही जालोर नउ, सोरठ चांपानेर ॥ २२ ॥
संघ अनेक तिहां आविया, भेटण विमल गिरिन्द ।
लोकतणी संख्या नही, साथि गुरु जिनचंद ॥ २३ ॥ "

[युग-प्रधान श्रीजिनचन्द्र सूरि अकबर प्रतिबोध रास, सं० १६५८]

छट्ठा प्रकरण

अकबर-आमन्त्रण



म्राट् अकवर असाधारण धर्म-जिज्ञासु और समस्त धर्मोंके प्रति सहिष्णुता रखने वाले थे। अपने दरवारमें सब धर्म के विद्वानोंको बुलाकर प्रत्येक धर्मका उपादेय तत्त्व ग्रहण किया करते थे। यद्यपि वे मुसलमान कुलमें उत्पन्न हुए थे, तो भी उनके हृदयमें दयाके भाव अधिकाधिक थे। मुसलमान वादशाहोंमें उनके बराबर न्याय-प्रिय दूसरा कोई नहीं हुआ। सम्राट अकवर दीन-दुखियोंका उद्धार करना अपना परम कर्तव्य समझते थे, जिसके अनेक उदाहरण उनके जीवनमें पाये जाते हैं। उनके राज्यमें हिन्दू और मुसलमान प्रजा जिस प्रकार सुख-शान्तीसे रही वैसी सुखी किसी भी मुसलमान शासकके राज्य-कालमें नहीं रही*।

वे शास्त्रार्थ, उपदेश, विद्वद्गोष्टी आदिके खूब प्रेमी थे इससे उनके दरवारमें चुने हुए विद्वान रहा करते थे, उनमें जैन विद्वान भी कई एक थे। नागपुरीय-तपा गच्छके यति पद्मसुन्दरजी भी सम्राट् की सभामें कई वर्षों तक रहे हैं। सम्वत् १६२५ में जब

*"वादशाह अपने दिलमें यही चाहता था कि किसी प्रकार मुझे धार्मिक तत्व की बातें मालूम हों; बल्कि वह उनकी छोटी-छोटी बातोंका भी

चरित्रनायक के हस्ताक्षर

विजयदेवसूरि रचित नेमिनाथ रास–शीलरास का अन्तिम पत्र

सं० १६११ में आचार्य पद प्राप्ति से पहले का लिखा हुआ

कि सम्राट् आगरेमें निवास करते थे तब भी उन्हें विद्वानोंकी चर्चामें बहुत प्रमोद मिलता था। खरतर गच्छके वाचक दयाकलशजीने अपने विद्वान प्रशिष्य साधुकिर्तिजी आदिके साथ सं० १६२५ का चातुर्मास आगरेमें किया था। उस समय शाही-दरबारमें तपागच्छीय बुद्धि सागरजीके साथ पौषधके सम्बन्धमें साधुकीर्तिजीसे शास्त्रार्थ हुआ था और पण्डित अनिरुद्धजी और पण्डित महादेव मिश्र आदि हजारों विद्वानोंके समक्ष खरतरगच्छ वालोंकी जीत हुई थी।

सम्वत् १६३९ में तपागच्छके आचार्य श्रीहीरविजयसूरिजी भी सम्राटसे मिले थे उसके पश्चात् तो जैन विद्वानोंका समागम उसे निरन्तर रहा; जिससे जैन दर्शनके प्रति उनका अनुराग दिनों-दिन बढ़ने लगा था*।

पूरा पता लगाना चाहता था। इसलिए वह प्रत्येक धर्म के विद्वानों को एकत्र करता था और उनसे सब बातों का पता लगाया करता था।"

(अकबरी दरबार पृ० ७६)

अकबर………जैनियों और बौद्धों के ग्रंथ भी सुना करता था। हिन्दुओंके भी सैकड़ों सम्प्रदाय और हजारों धर्म-ग्रंथ है। वह सब कुछ सुनता था और सबके सम्बन्धमें वाद-विवाद किया करता था।

(अकबरी-दरबार पृ० १३२)

जब उसने देशका शासन अपने हाथमें लिया, तब ऐसा ढंग निकाला जिससे साधारण भारतवासी यह न समझे कि विजातीय तुर्क और विधर्मी मुसलमान कहींसे आकर हमारा शासक बन गया है। इसलिए देशके लाभ और हितपर उसने किसी प्रकारका कोई बन्धन नहीं लगाया (वही पृ० ११८)

* तप गच्छके प्रभावक आचार्य-श्रीमान् हीरविजयसूरिजी के समागम से अकबर पर अच्छा प्रभाव पड़ा था, जिसके फल स्वरूप उसने जजिया कर वगैरह छोड़ दिया। कई-दिनों [illegible] अमारि-उद्घोषणाके फरमान पत्र प्रकाशित कर अनेक जीवोंको अभयदान [illegible] उनके पश्चात्

एक दिन लाहौरकी राज्यसभामें बैठे हुए सम्राट अकबरने उपस्थित विद्वानोंसे (हमारे चरित्र नायक) श्रीजिनचन्द्रसूरिजीकी महती प्रशंसा सुनी। वे विद्वान लोग उनकी अत्यधिक श्लाघा करते थे। इससे सम्राटको सूरिजीके दर्शन करने और जैन धर्मका विशेष बोध प्राप्त करनेके लिए उत्कट इच्छा हुई। उन्होंने पूछा "यहां सूरिजी का भक्त शिष्य कौन है ? जिससे उनका पता लगाया जाय।" तब पण्डितोंने कहा "मन्त्रिश्वर कर्मचन्द्र हैं!" तब सम्राटने मन्त्रिश्वर को बुलाकर सत्कार सहित पूछा "हे मन्त्रिश्वर! तुम्हारे गुरु श्री जिनचन्द्रसूरिजी अभी कहां विराजते हैं ? वे किसी भी प्रकार शीघ्र यहां पधारें, ऐसा उपाय करो ! तब मन्त्रिश्वरने विनयपूर्वक उत्तर दिया "वे अभी खम्भातमें विराजते हैं किन्तु अभी ग्रीष्म ऋतुमें दूर देशसे आना कठिन है क्योंकि वे किसी सवारीपर तो

विजयसेनसूरिजी, भानुचन्द्रजी आदिने जैन धर्मका सद्बोध दिया था, इन सब बातों को जानने के लिये "सूरीश्वर और सम्राट" आदि ग्रन्थों को देखना चाहिये।

खरतर गच्छ के उ० श्री शिवनिधानजी के गुरु श्री हर्षसारजी भी सम्राट से मिले थे जिसका उल्लेख शिवनिधानजी विरचित "संग्रहणी बालावबोध" में इस प्रकार है:—

"श्रीमदकबर साहेर्मिलनाद्विस्तीर्ण वर्ण कीर्ति भरः।
वाक्पति वद् गुरुरिह सक्रिय मुख्यो हर्षसार गणि॥"

-[बीकानेर वृहत् ज्ञान भण्डार]

महोपाध्याय श्री जयसोमजी भी सम्राट अकबर से मिले थे और उन्होंने शाही-सभा में किसी विद्वान को परास्त करके विजय पाई थी। जिसका वर्णन "जैन साहित्य नो इतिहास" पृष्ठ नं० ५८८ में इस प्रकार किया है:—

"जयसोमे अकबर शाहनी सभा मां जय मेलव्यो हतो एम तेमना शिष्य गुणविनय, पोताना खंड प्रशस्ति काव्यनी प्रशस्ति मां जणावे छे।"

चढ़ते नहीं हैं और इस कड़े धूपमें वृद्धावस्थाके कारण आनेमें उन्हें कष्ट होगा" तब सम्राटने कहा "अगर वे शीघ्र न आ सकें तो उनके शिष्यको तो यहां अवश्य बुलानेके लिए दो शाही पुरुषोंको भेज दो" तब मन्त्रिश्वरने वाचक मानसिंहजी (महिमराज) को बुलानेके लिए शाही दूतको विनतीपत्र सहित सूरिजीके पास भेजा।

सूरिजीने विनतीपत्र पाते ही वाचक श्रीमहिमराजजी व पं० समयसुन्दरादि को अन्य ६ साधुओंके साथ लाहौर भेज दिया।+वे निरन्तर विहार करते हुए कुछ दिनोंमें लाहौर पहुंचे। वाचकजी के दर्शनसे सम्राट बहुत प्रसन्न हुआ। उसने उत्सुकतापूर्वक मन्त्रीश्वरसे पूछा कि वे जगद्गुरु जिनचन्द्र सूरिजी कब आवेंगे ? जिनके दर्शनसे चित्त रंजित होता है और अनेक लोग जिनकी चरण सेवा कर सुखी होते हैं। तब मन्त्रीश्वरने कहा "अब चौमासा निकट आ रहा है अतएव उनका विहार नहीं हो सकता!" प्रत्युत्तरमें तब सम्राट्ने कहा "मैं दर्शन कर उनसे उपदेश ग्रहण करके अपना जीवन सफल करूंगा और अनेक जीवोंको अभय दान देकर उन्हें सन्तुष्ट करूंगा। अतएव वे यहां अवश्य पधारें!" ऐसा कहकर सम्राटने विनती-पत्र लिखाकर मन्त्रीश्वरको दिया। मन्त्रीश्वरने भी बहुत आग्रहपूर्वक लाहौर आनेके लिये विनती लिखकर शीघ्रगामी चतुर मेवड़ा दूतोंके साथ खम्भात भेज दिया।

इसके अनुसार यदि मंड-प्रशस्ति-काव्यकी प्रशस्तिमें यह उल्लेख हो तो सं० १६४१ के पहिले ही अकबरकी सभामें उनका विजयी होना सिद्ध होता है क्योंकि यह वृत्ति सं० १६४१ में रची जानेका उल्लेख उसी प्रंथके पृ० ५८६ में है। इस घटनाका उल्लेख कर्मचन्द्र-मंत्री-वंश-प्रबंध वृत्ति, जो कि सं० १६५६ में इनके शिष्य उ० गुणविनयजी ने बनाई है, उसमें भी इस प्रकार है :—

"श्री जयसोम गुरूणा, शाहि सभा लब्ध विजय कमलानाम्"

+ वि. दे. समय सुंदर कृति वृहत्संजति

कुछ दिनों में वे दूत खम्भात पहुंचे। वहां सूरिजी के दर्शन कर प्रसन्न चित्तसे उन्हें विनती-पत्र देकर लाहौर चलने के लिये विनयपूर्वक प्रार्थना की।

सूरिजी विनती-पत्र पढ़कर विचार करने लगे कि मुझे अवश्य लाहौर जाना चाहिये, क्योंकि सम्राट अकबर धर्मजिज्ञासु है, यदि वह जैन धर्मका अनुकरण करने लग जाय तो "यथा राजा तथा प्रजा" के नियमानुसार जैन धर्मकी बहुत उन्नति होगी। जब भारत-वर्षके राजा जैन-धर्मावलम्बी थे तब जैनोंकी संख्या भी बहुत थी और सर्वत्र शान्ति विराजमान थी। अब भी यदि गुरुदेव की कृपासे अकबरके हृदयमें जैन धर्मके उच्च सिद्धान्त बैठ जायेंगे तो वर्तमान समय में आर्य प्रजापर होने वाले अत्याचारों का सर्वथा अंत हो जायगा। अतएव वहां जाकर सम्राट को जैन धर्मके सूक्ष्म तत्वोंका दिग्दर्शन कराना अति उपयोगी होगा।

सूरिजीके खम्भात से विहार करनेका दृढ़ निश्चय देखकर समस्त संघने एकत्र होकर उनसे प्रार्थना की "हे गुरुदेव! चातुर्मास निकट है आप दूर देश कैसे पहुंचेंगे, अतएव यहीं विराजें।" तब सूरिजी ने संघ को समझाकर महान् लाभके कारण वहांसे मिती आषाढ़ शुक्ला ८ को प्रस्थान कर नवमी के दिन विहार किया। मार्गमें अच्छे शकुन मिले, जिससे सारा संघ प्रमुदित हुआ। सूरिजी आषाढ़ सुदि १३ के दिन अहमदाबाद पधारे। श्रीसंघने उत्सव-पूर्वक नगरमें प्रवेश कराया। उपाश्रयमें आनेके पश्चात् सूरिजी श्रीसंघ से परामर्श करने लगे कि चातुर्मास में साधु-विहार कैसे होगा? उस समय फिर दो शाही फरमान आये, जिसमें मन्त्रीश्वरने भी आग्रहपूर्वक लिखा था कि "आप वर्षाकाल* और लोकापवाद की

* चातुर्मासमें निष्प्रयोजन साधुओं को विहार न करके एकही स्थानमें रहनेकी जिनाज्ञा है लेकिन विशेष धर्म-प्रभावना और अनिष्ट कारक संयोग

ओर लक्ष्य न देकर अति सत्वर लाहौर पधारें, आपके यहां पधारने से धर्मकी बहुत प्रभावना होगी।" तब सूरिजी ने संघ की सम्मतिसे वहांसे लाहौर जानेके लिये विहार कर दिया। म्हेसाणा ग्राम होते हुए सिद्धपुर पधारे। वहां बन्ना शाहने नगर-प्रवेशोत्सव कराया और बहुतसा द्रव्य व्यय करके पूजा प्रभावनादि किये, वहां पाटणका संघ सूरिजी के दर्शनार्थ आया। वहांसे विहार करके पाल्हणपुर पधारे, पाटणका संघ लाहण आदि करके वापिस चला गया। वहांसे विहार करके सूरिजी शिवपुरी आये। उनके आगमनसे महुर और शिवपुरीका संघ बहुत हर्षित हुआ। सूरिजी के पाल्हणपुर पधारने के समाचार जब सीरोही के राव सुरतान×ने सुने, तब उन्होंने जैन संघको एकत्रित करके आज्ञा दी कि "सूरिजी को पाल्हणपुर से यहां आमन्त्रित करने के लिए मैं अपने प्रधान पुरुषोंको आपके साथ भेजता हूं, तुम लोग जल्दीसे जाकर उन्हें यहां पधारने के लिये विनती करो!" तब श्रीसंघ और सिरोही-पतिके प्रेषित पुरुष पाल्हणपुर जाकर सूरिजी को आमन्त्रित कर आये। सूरिजी भी ग्रामनगर विचरते हुए सीरोही पधारे। उनका स्वागत करनेके लिये असंख्य जनता सामने आई, पंचशब्द निशाण, नेजा, मादल, शङ्ख, झालर, भेरी आदि नाना प्रकार के वाजिन्त्र बज रहे थे, सधवा स्त्रियां गुरु-गुण गाती हुई पीछे-पीछे आ रही

होनेसे आचार्य, गीतार्थादि महानुभावोंको देश, काल, भाव विचार कर विहार करनेकी भी अपवाद मार्गसे जिनाज्ञा है। पूर्व कालमें भी ऐसे संयोगोंमें चातुर्मासमें विहार करनेके कई प्रमाण मिलते हैं।

× ये सं० १६२८ में मात्र १२ वर्ष की अवस्थामें सीरोही की राजगद्दीपर बैठे। ये बड़े वीर, उदार और महाराणा प्रतापकी भांति स्वाधीनताके उपासक थे। इन्होंने अपने जीवनमें ५१ युद्ध किये थे। इनकी वीरताके सामने बड़ी भारी सेना भी भय खाती थी। विशेष जाननेके लिये देखो सिरोही राज्य का इतिहास पृ० २१७ से २४४ तक।

थीं, भक्तिवान् कुलवती स्त्रियां मुक्ताफलोंसे बधा रही थीं, जय-जय शब्दका उच्चारण, मेघकी गर्जनासा प्रतीत होता था। इस प्रकार सूरिजी सीरोही नगरके राज-मार्गसे होते हुए श्रीऋषभदेव स्वामीके मन्दिरमें पधारे। वहां प्रभुके दर्शन स्तुति आदि करके उपाश्रयमें पधारे, वहां स्वर्णगिरिका संघ सूरिजीके दर्शनार्थ आया। राय सुरतानने आडम्बर सहित आकर सूरिजीको वन्दना नमस्कार करके पर्यूषण पर्व सीरोहीमें करनेकी विनती की। सूरिजीने संघ और नृप-आग्रहसे पर्यूषण पर्वके ८ दिन सीरोहीमें ही विताये। सूरिजी के सीरोही विराजनेसे वहुत धर्म ध्यान हुआ। जिनपूजन, तपश्चर्या आदि वहुतसे धर्म कार्य हुए। आठ दिन तक अमारि उद्घोषणा करके अनेक जीवोंको अभयदान दिया गया। समस्त सीरोही राज्यमें जीव-हिंसा वन्द करनेके लिये सूरिजीने राजाको उपदेश दिया, तव राजाने पूर्णिमा दिन जीवहिंसा दूर करने के लिये उद्घोषणा कर दी और भी राजाने सूरिजी की वहुत भक्ति की। पर्यूषणके पश्चात् वहांसे विहार करके सूरिजी जावालपुर (जालोर) पधारे। शाह वन्नाने उत्सवपूर्वक नगरमें प्रवेश कराया।

उस समय लाहौरसे सम्राटने दो व्यक्तियोंके साथ फरमान-पत्र सूरिजी को भेजा, जिसमें लिखा था कि चातुर्मास में आपको आनेमें कष्ट होता होगा, अतएव चातुर्मास पूरा करके शीघ्र ही पधारें, किन्तु पीछे त्रिलकुल विलम्ब न करें! तव सूरिजी कार्तिक चौमासे तक जालोर ही विराजे। चातुर्मास पूर्ण हो जानेसे मिगसर महीने में पुष्य नक्षत्रके दिन शुभ मुहूर्त में वहुत से साधुओं के परिवार सहित विहार किया; उनके साथ चतुर्विध संघ और शाही पुरुष भी थे। विमल यशोगान करनेवाले भोजक, भाट, चारण और दक्ष गांधर्व प्रस्तावोचित सूरिजीका गुण-गान करके श्रीमन्त श्रावकोंके पास समुचित पुरस्कार पाते थे। सूरिजी ग्रामानुग्राम विचरते हुए देछर, सराणउ, भमराणी, खांडपरज्झी वगैरह ग्रामोंमें

आये। विक्रमपुरका संघ वंदनार्थ आया और लाहिणीकी । वहांसे द्रुणाड़इ नगर पधारे, वहां जेसलमेरका संघ आया । वहांसे विहार करके रोहीठ नगर पधारे, वहांके शाह थिरा और मेराने बहुत उत्सवपूर्वक नगर-प्रवेश कराया और याचकोंको दान देकर सन्तुष्ट किया । वहां जोधपुरका बड़ा (विस्तृत) संघ वंदनार्थ आया, सूरिजीके दर्शन कर लाहणी आदि करके स्वधर्मी-भक्ति करके वापिस चला गया। चार व्यक्तियोंने नन्दी महोत्सव आदि रचना कर सूरिजी से चतुर्थ व्रत अर्थात ब्रह्मचर्य्य व्रत धारण किया, और भी कई श्रावकोंने यथाशक्तिव्रत प्रत्याख्यानादि किये। वहांके ठाकुरने अपने राज्यमें बारस तिथिके दिन सूरिजीके उपदेश से जीवों को अभयदान दिया। वहांसे विहार करके पाली नगरमें पधारे, नंदी मंडा कर व्रतादि दिये ! वहांके संघने बहुत हर्षित होकर चारों प्रकारके धर्मकी विशेष रूपसे आराधना की। वहांसे लांबियां ग्राम होते हुए सोजत पधारे, प्रभुके मन्दिरके दर्शन किये। वहांसे बीलाड़ा पधारे, वहांके सुप्रसिद्ध कटारिया जातिके श्रावकने नगर प्रवेशोत्सव कराया वहांसे जयतारण नगर होते हुए मेड़ता नगर पधारे।

उस समय मेड़ता बहुतसे समृद्धिशाली श्रावकोंका लीला स्थान था, बहुतसे जैन मन्दिर नगरीकी शोभा बढ़ाते थे। मंत्रीश्वर कर्मचन्द्र के पराक्रमी और बुद्धिशाली पुत्र भाग्यचन्द्र, लक्ष्मीचन्द्र वहां निवास करते थे, उन्होंने हाथी, घोड़ा, रथ और पैदल पुरुषोंके साथ पंचशब्द ढोल, नगारा निशाणकी मधुर ध्वनि से समारोह पूर्वक सूरिजीका नगरमें प्रवेश कराया। श्रीश्वरने महाजनोंको एकत्रित कर फोफल दान नारियलकी प्रभावना की। सारे नगरमें लाहिणीकी, याचकोंको इच्छित दान दिया। जिन मन्दिरोंमें बड़ी पूजाएँ और नंदि महोत्सवादि कराये, बहुतसे भव्य श्रावकोंने व्रत धारण किये। वहां फिर शाही फ़रमान आया। वहांसे समस्त संघके साथ फलोधी पधारे। वहां श्री पार्श्वनाथ प्रभुके प्राचीन मन्दिरमें प्रभुके दर्शन किये।

वहांसे विहार करके सूरिजी नागोर पधारे। प्रसन्नचित्त से मंत्रीश्वर मेहाने द्रव्य व्यय करके स्वागत पूर्वक नगर प्रवेशोत्सव किया। वहां बीकानेरका संघ सूरिजीको वंदना करनेके लिये आया। उस संघके साथ ३०० सिजवाला (पालकी) और ४०० प्रवहण थे भक्ति पूर्वक स्वधर्मी-वात्सल्यादि करके वापिस गया। वहांसे सूरिजी विहार करके बापेऊ, पड़िहारा, मालासर आदि ग्रामोंसे होते हुए रिणी * (बीकानेरसे १४४ मील) पधारे, वहांके लोग उत्साह पूर्वक सूरिजी का स्वागत करनेके लिये आये। समस्त संघ के साथ मंत्री श्रीठाकुरसिंहके पुत्र मंत्री श्रीरायसिंहने प्रवेशोत्सवादि करके गुरु भक्ति की। वहां महिम का संघ सूरिजी के दर्शन करनेके लिये आया। श्रीशीतलनाथ स्वामीके प्राचीन भव्य जिनालयके दर्शन पूजन कर, सूरिजी को वंदन कर वापिस गया। वहांसे सूरिजी ने विहार किया, मार्गमें लाहौर तक भक्ति करनेके लिये शाह शांकर सुत वीरदास साथ में हो गया। सूरिजी क्रमसे सरस्वतीपत्तन (सरसा) और कसूर होते हुए हापाणड पधारे, वहांसे लाहौर केवल चालीस कोस रहा। सूरिजी के शुभागमनका संदेश लेकर जो व्यक्ति लाहौर गया, उसका मंत्रीश्वरने बहुत ही सम्मान किया और उसे सोनेकी रसना (जिह्वा) और कर-कंकण आदि बहुमूल्य वस्तुओंका पुरष्कार देकर सन्तुष्ट किया।

---

* यह रिणी शहर बहुत प्राचीन है, यहां आगे डहालिये राजाका राज्य था। यहां सं० ६४६ के लगभग बना हुआ श्री शीतलनाथ स्वामीका मन्दिर अब तक विद्यमान है। जो इतना संगीन और मजबूत है कि आजका सा बना हुआ प्रतीत होता है। कई जगह इसका निर्माणकाल संवत ६६६ भी लिखा है।

सातवां-प्रकरण

अकबर-प्रतिबोध



रिजीके हापाणइ पधारनेके शुभ सम्वादको सुनकर लाहौरके संघको अपार हर्ष हुआ और वे लोग मंत्रीश्वरके साथ आपके दर्शनार्थं वहां गये । फिर सूरि-महाराजको विनती करके भक्ति पूर्वक और समारोह सहित लाहौर ले आये । नगरके समीप पहुंचने पर मंत्रीश्वरने सम्राटको निवेदन किया कि "आपके निमन्त्रित सूरि-महाराज पधारे हैं।" जिसे सुनकर अकबर अति प्रसन्न हुआ और उत्सुकता पूर्वक उन्हें बुलानेको कहा । इस आशको एक कविने इस प्रकार व्यक्त किया है:—

पूज्य पधारया जाणिकरि मेली सब संघात ।
पहुँता श्रीगुरु वांदवा सफल करइ निज आय ।।८३।।
तेड़ी डेरइ आणि करि वहइ शाह नइ मंत्रीश ।
जे तुम सुगुरु बोलाविया, ते आव्या सुरीश ।।८४।।
अकबर चलतो इम भणइ तेड़उ ते गणधार ।
दर्शन तसु मुझ चाहियइ, जिम हुइ हर्ष अपार ।।८५।।

सूरिजीके साथ वा० जयसोम, कनकसोम, वा० महिमराज,

वा० रत्ननिधान विद्वत् गुणविनय और समयसुन्दर आदि बड़े-बड़े प्रकाण्ड विद्वान यशस्वी और निर्मल चारित्रको पालन करनेवाले ३१ साधु थे। सं० १६४८ के फाल्गुन शुक्ला १२के दिन पुण्य-योग में सूरिजीने लाहौर नगरमें प्रवेश किया। उस दिन मुसलमानोंके ईदका पर्व था।

मंत्रीश्वरने सूरिजीके स्वागतोपलक्षमें बहुत द्रव्य व्यय करके महोत्सव किया जिसका वर्णन किसी कविने इस प्रकार किया है:—

घड़ी पन्नो मद गयन, शीश सिन्दूर संवारे।
चंवर अमोलख चार चामरा चांचरा सुधारे॥
घणीनाद वीर-घंट इणि उपरि अंवारी।
गूघर पाखर पेखतां, जु थरहराए भारी॥
परतिख वजा फरनिजा, इम सामेले संचरे।
जिनचन्द्रसूरि आयां जुगति इम कर्मचंद उच्छव करै॥२॥

+ + + +

श्री महाराज पधारे लाहौर, अकबर शाह मतंगज जूथ समेला।
चढ़े हैं नवाव वड़े उमराव, नगारांकी धूंस सु होत समेला॥
वजे हैं आरब्ब्रि थटे हैं झिण्डा, फरीठ-निशान धुरे हैं नौवत अरावा सचेला।
पातिशाह अकवर देख प्रताप, कहे जिनचंद्रका सूर्य उजेला॥१॥

सूरिजीका स्वागत करनेके लिये राजा, महाराजा, मल्लिक, खान, शेख, सूवेदार, अमीर, उमराव, आदि सभी प्रतिष्ठित शाही-पुरुष और असंख्य नागरिक आये थे। सम्राट अकवर स्वयं राज-महलके गवाक्षमें वैठे हुए सूरि-महाराजकी वाट जोह रहे थे। वे

दूरसे ही सूरिजीको आते हुए देखकर अत्यन्त प्रसन्नता-पूर्वक नीचे उतर आये और बहुत भक्ति और विनय पूर्वक सूरिजीको वन्दन करके उनके विहारकी सुख-शाता पूछने लगे, "हे भगवन्! आपको खम्भातसे यहां आनेमें मार्ग-श्रम तो हुआ ही होगा! किन्तु मैंने भविष्यमें जीव-दया प्रचारके हेतु ही यहां आपको बुलाया था। अब आपने यहां पधारकर मेरे पर असीम कृपा की है! मैं अब आपसे जैन धर्मका विशेष वोध प्राप्तकर जीवोंको अभय दानादि देकर आपका खेद (मार्ग-श्रम) दूर करूंगा!"

सम्राटके इन विनीत वचनोंको सुनकर सूरि-महाराजने मृदु-वचनोंसे कहा "सद् धर्मका प्रचार करना ही केवल हमारा ध्येय है और सर्वत्र विचरते रहना ही हमारा आचार है! अतः हमें मार्ग श्रमका जरा भी खेद नहीं है। हम अपना कर्तव्य पालन करनेके लिये ही यहां आये है। आपकी धर्म-जिज्ञासुता देखकर हमें परम आनन्द हुआ।

इस प्रकार वार्तालाप करते हुए सम्राट अत्यन्त हर्षित हुए। वे बड़े सम्मानके साथ सूरिजीसे हाथ मिलाये हुए उन्हें ड्योढ़ी-महल में ले गये। जिसका वर्णन एक कविने इस प्रकार किया है:—

पहुंता गुरु दीवाण देखी अकवर, आवइ साम्हा ऊमही ए।
वंदी गुरुना पाय मांहि पधारिया, सइं हथि-गुरु नो कर ग्रहीए ॥८१॥
पहुंता ड्योढ़ी मांहि सहगुरु शाहजी, धर्म वात रंगे करइ ए।
चिन्ते श्रीजी देखि (ए) गुरु सेवतां, पाप ताप दूरइ हरइ ए ॥८६॥

[यु० श्रीजिनचन्द्रसूरि अकवर प्रतिवोध रास]

महलमें यथास्थान वैठजानेके पश्चात परस्पर धर्म-गोष्ठी करने लगे। सूरिजीने अपनी ओजस्वी वाणी द्वारा प्रभावशाली शब्दों में इस प्रकार उपदेश देना आंरम्भ किया:—

आत्मा एक सनातन सत्य पदार्थ है, जिसका अस्तित्व अनुभवादि द्वारा सिद्ध है। वह ज्ञान, दर्शन, चरित्र आदि सद्‌गुणोंका समुद्र है, और चैतन्य उसका लक्षण है। जब वह अपने सद्‌गुणों में स्थित और लीन रहती है तब तक उसमें अतिशुद्धता बनी रहती है। काम, क्रोध, मोह, अज्ञान, आदि गुणोंके सम्बन्ध होनेपर उसके साथ कर्मोंका बन्धन हो जाता है। उन कर्मोंके कारण ही विविध योनिमें नाना प्रकारके रूप धारण करके जीव कभी मनुष्य, कभी पशु-पक्षी और कभी देव रूपमें अवतीर्ण होता है। अपने पुण्य पापके कारण कभी राजा, कभी रंक, कभी सबल, कभी दुर्बल, कभी सत्ताधीश और कभी भिक्षुक आदि नामोंसे जगतमें अपना परिचय देता हुआ सुख-दुखका अनुभव करता है।

प्रत्येक आत्माने ऐसे अनेक पर्यायोंको धारण किया है, और जब तक उसके साथ कर्मोंका सम्बन्ध है, करता ही रहेगा! कर्मों का सर्वथा विनाश हो जानेसे आत्मका शुद्ध स्वभाव प्रकट हो जाता है। आत्माकी उस अवस्थाको ही जैन-दर्शनमें परमात्मा या ईश्वर कहते हैं। इस विवेचनसे यह स्पष्ट है कि प्रत्येक जीव परमात्मा हो सकता है! अतः प्रत्येक प्राणीका यह कर्तव्य है कि वह परमात्मा बननेके कारणोंको समझकर उनके अनुकूल वर्त्तन करे।

आत्माके परमात्मा बनने के जो मार्ग हैं, उन्हें धर्म या साधक-अवस्थाके नामसे सम्बोधित किया जाता है और दुर्भावोंको पैदाकर कर्म बन्धके जितने भी कारण हैं उनको पाप या बाधक-अवस्था कहते हैं। प्रत्येक प्राणीको साधक और बाधक मार्गोंका ज्ञान नहीं होता अतः जो तत्व-ज्ञानके गहरे अध्ययन द्वारा उन्हें यथावत् जानकर साधक-मार्गका आश्रय लेते हैं और दूसरोंको सन्मार्ग बतलाते हैं उन्हें जैन-दर्शनमें गुरुके नामसे सम्बोधित किया है। वस्तुतः आत्मा न पुरुष है न स्त्री, न निर्बल है न सबल, न धनी है न रंक,

क्योंकि ये सब अवस्थायें तो कर्म-जनित हैं और आत्मा स्वरूपतः शुद्ध सच्चिदानन्द है ! आत्माएं, सत्ता, द्रव्य, गुण और शक्तिकी अपेक्षा से समान हैं अतः सभी जीव मित्रवत् होनेसे परस्पर प्रेम के पात्र हैं। जैसे अपनेको जीवन प्यारा है वैसे सभी जीवोंको जीवन प्यारा और मरण भयावह है। अतएव उन सबको सुख पूर्वक जीने देना ही आत्माका प्रथम कर्तव्य है। परमात्म-अवस्था प्राप्तिके साधनोंमें समस्त जीवोंके साथ मित्रता या प्रेम-भावका व्यवहार करना सर्वोत्तम प्रधान साधन या धर्म है। इसी धर्म को 'अहिंसा' नामसे भी पुकारते हैं।

जब एक सत्ता-प्राप्त प्राणी, एक निर्बल और क्षुद्र जीवको सताने को उतारू होता है तब वह अपने आप ही दूसरेको, अपनेको सताने के लिये आह्वान करता है और उसके मनकी कठोर वृत्तियां पापमय व्यापारोंकी ओर उसे झुकाती है। जहां समस्त आत्माओंको मैत्री-भाव रूप समान स्थान दिया जाता है, वहां विश्व-प्रेम, सहिष्णुता, उदारता आदि सद्गुणोंका श्रोत प्रवाहित होने लगता है। अपना आधिपत्य जमानेके लिये मनुष्यको विश्व-प्रेम द्वारा सर्व जन्तुओंके कल्याणका ध्यान करना चाहिए, क्योंकि दूसरेको सता कर स्वयं कोई सुखी नहीं रह सकता है। अपने मनोभावों द्वारा किसी प्राणीका अहित चिन्तन किये जानेको जैनदर्शनमें "हिंसा" नामसे सम्बोधित किया गया है। जहां हिंसाका इतना सूक्ष्म-तया विवेचन है, वहां यह बतलानेकी आवश्यता नहीं पड़ती कि किसी जीवको मारनेमें अधर्म या पाप है।

जिस देश या ग्रामका शासक अपनी प्रजाको सुखी नहीं रख सकता, उसके प्रति वात्सल्य नहीं रखता और राज्यमें नाना प्रकारके 'कर' लगा देता है, उस राज्यमें शान्ति और सुख-साम्राज्यकी आशा ही नहीं की जा सकती, यह प्रत्यक्ष है। इसलिए अपने आधिपत्य

में रहते हुए प्राणी जिससे शान्ति-पूर्वक जीवन निर्वाह कर सकें, ऐसा निरन्तर ध्यान रखना चाहिये। सारे जगतका कल्याण हो, सब सुखी हों, कोई भी दुःखी न रहे, इस प्रकारकी हितेच्छुवृत्ति को अहिंसा कहते हैं। जहां अहिंसा है, अर्थात् किसी प्राणीको दुःख न पहुंचाना ही जहां का प्रधान लक्ष्य है, वहां अन्य सभी गुण स्वतः आकर निवास करते हैं। इससे आत्माके समीप क्रोध, दर्प, निन्दा आदि वासनाएं और अशुद्ध व्यवहार-प्रवृत्तियां कभी नहीं फटकती। वह सब संसारको अपनाकर लेता है, जहां जाता है वहीं अन्य जीवों के अभयकारक होनेसे पूज्य रूपसे देखा जाता है। अहिंसा तत्वमें रमण करने वाले योगियोंके पास सिंह और बकरी वैर भावोंको त्याग कर बैठते हैं। उनके दर्शन मात्रसे ही अद्भुत प्रभाव पड़ता है, बिना कहे सहस्रों नर-नारी उनकी सेवामें उद्यत रहते हैं। अपने हृदयकी पवित्रता दूसरेके पाप भावोंको भुलाकर हित चिन्तनकी ओर ही झुकाती है। जो दूसरोंको अभयकारक होता है। वह स्वयं सर्वदाके लिए अभय बन जाता है। संसारमें जहां-जहां दूसरों को कष्ट पहुँचानेकी नीति है, वहां अशान्ति, कलह सदाके लिए निवास करते हैं इसलिए प्रजापर अपना प्रभाव डालनेके हेतु उनके कल्याण-मार्ग और सुख शान्तिके उपायोंकी ओर ही लक्ष्य रखना चाहिये। जहां स्वार्थ-साधनके हेतु मनुष्य अन्धा बन जाता है वहां असत्य भाषण, चोरी, परस्त्री संसर्ग आदि विकृत भावों की लहरें लहराती हैं। किन्तु जहां अहिंसा रूपी सद्गुण का निवास होता है वहां ये दुर्गुण नहीं आ सकते, क्योंकि किसीकी चोरी करना, परस्त्रीके प्रति बुरे भाव रखना, हिंसाभावके बिना नहीं हो सकते। यदि सब मनुष्यों पर हिंसा-भावकी अशुभ भावना आरूढ़ हो जाय तो जगत-व्यवहार में अनेक अड़चनें उपस्थित हो जायं इसलिए स्वकल्याण चाहने वाले मनुष्यको हिंसा भावको सर्वदा त्याग करना चाहिये। राजनीति में प्रजापर वात्सल्य रखना और उसे सुख शान्तिसे रहने देना ही प्रजापालकका धर्म कहा गया है। मनुष्य तो क्या, पशु पक्षी भी जो

अपने राज्यमें रहते है, वे भी प्रजा ही हैं। उन्हें प्राण रहित करना राजनीति कदापि नहीं हो सकती अतः उन्हें भी निर्भीक रहने देना चाहिये। धर्मके साथ आत्माका पूर्ण सम्बन्ध है। किसीको अपने धर्मसे छुडाना और धर्म-पालनमें वाधा देकर धार्मिक आघात पहुँचाना भी प्रजाको विद्रोही वनाना है, अतः शासकको मत सहिष्णुताका गुण अवश्य धारण करना चाहिये। शासकका प्रजावात्सल्य ही एकमात्र प्रजाके हृदय-सम्राट वननेका हेतु है। अतएव सर्वदा उदार वृत्ति और हृदय निर्मल पवित्र रखना चाहिये। हृदय निर्मल रखनेके लिये सात व्यसनोंका अवश्य त्याग करना चाहियेः—जूआ खेलना, मांस भक्षण, मदिरा पान, शिकार, प्राणी हिंसा, चोरी करना और परस्त्री गमन इन्हें त्यागने वालोंको सदा जय होती है और कीर्ति फैलती है। अहिंसा रूपी सद्गुण धारण करनेसे सतत् श्रीवृद्धि होती है, लाखों प्राणियोंका आशीर्वाद मिलता है। प्राचीन इतिहाससे यह स्पष्ट है कि जिस समय जैनों और वौद्धोंका अहिंसा प्रचार अति जोरों पर था तव राज्योंसे कलह, विग्रह और अशान्ति चिरकालके लिये अन्तर्ध्यान हो गई थी।

सूरिजी के अमृतमय उपदेश श्रवण करनेसे सम्राटके चित्तमें अत्यन्त प्रभाव पडा और करुणाका वीज परिपुष्ट हुआ। उनके प्रति पूज्य भाव और भक्तिका आदुर्भाव हुआ। उसने वस्त्र और स्वर्ण-मुद्रायें लाकर भक्ति पूर्वक सूरिजीके सन्मुख रखकर निवेदन किया "हे गुरुवर्य्य! आप इनमें से अपनी आवश्यकतानुसार कुछ लेकर मुझे अनुगृहीत करें!" तव सूरिजी ने कहा "साधुओंको परिग्रह रखना उचित नहीं, अतः हम इन सवका क्या करें!" सूरिजी के इस निर्लोभीपनको देखकर सम्राट मन ही मन वहुत प्रसन्न हुआ और उन्हें अपने हृदय मन्दिरमें आराध्य-गुरु करके स्थापित किया। इसके पश्चात सम्राट, सूरिजी के साथ महलसे वाहर आये; और समस्त सभाजन, दीवानों और काजियों को सम्वोधित कर कहने

लगे "ये जैनाचार्य, धैर्य्यवान, धर्मधुरन्धर और विशिष्ट गुणोंके समृद्ध हैं। हमारा आज अहो-भाग्य है, हमारी ऋद्धि, वन और राज्य सम्पदा आज सफल है जो कि इनके दर्शन हुए।"

सम्राटने सूरिजीसे निवेदन किया "हे पूज्यवर ! आपने यहां पधारकर हमारे पर महती कृपा की है । अव प्रति दिन अवश्य एकवार धर्मोपदेश सुनाने और दर्शन देनेके लिये हमारे महलमें पधारा करें। ×। जैसे मेरी दया-धर्म पर स्थिर मति है वैसी मेरे अन्तःपुर और सन्तानकी भी दया बुद्धि हो ऐसी मेरी अभिलाषा है। अव आप खुशीसे उपाश्रय पधारें और संघकी आशा पूर्ण करें।"

सम्राटने मंत्रीश्वर कर्मचन्द्रको आज्ञा दी कि हाथी, घोड़ा और वाजित्र परिवार लेकर उत्सव के साथ गुरु महाराज को उपाश्रय पहुंचाओ !" तव सूरिजी ने कहा "नहीं, राजन् ! हमारे लिये उत्सव-आडम्वरकी कोई आवश्यकता नहीं है। दयामय जैन धर्मका प्रचार ही हमारे लिये परम उत्सव रूप है !" परन्तु सम्राट अकवरने अत्यन्त आग्रह पूर्वक महान् उत्सवके साथ सूरि महाराज को पहुंचानेके लिये मंत्रीश्वरको फिरसे आज्ञा दी।

परम धर्मिष्ठ लाहौरके जौहरी "परवत शाह" ने मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्रसे विनतीकी "यहांसे उपाश्रय तक प्रवेशोत्सव करानेका लाभ मुझे लेने दें।" फिर मन्त्रीश्वरकी आज्ञा प्राप्त करके उसने हाथी, घोड़ा, पैदल सिपाही और शाही वाजित्रोंके साथ सूरिजीको उपाश्रयमें पहुंचाया। अन्य श्रावकोंने भी चित्त और वित्तसे धर्मकी प्रभावना की। सधवा स्त्रियोंने मुक्ताफलोंसे वधाया और भक्तिसे

× एकशोदर्शनं देयं युष्माभिः प्रति वासरम् ।
अस्माकं धर्म वृद्ध्यर्थमवारित गतागतैः ॥६०॥
[कर्मचन्द्र मंत्रिवंश प्रवन्धः]

गुरु-गुण-गर्भित गीत गाये। भाट, भोजक आदि याचकोंने सूरिजीकी प्रशस्त कीर्तिका गुणानुवाद करके श्रावकोंसे मनोवांच्छित द्रव्य पाया।

सूरि-महाराजने उपाश्रयमें पधारकर मधुर ध्वनिसे मङ्गलमय देशना दी, जिससे संघपर अनुपम प्रभाव पड़ा। सब लोग धन्य—धन्य जय-जय करते हुए अपने-अपने घर गये।

सूरिजीके लाहौर पधारनेसे प्रतिदिन अधिकाधिक धर्म-ध्यान होने लगे। यह सब श्रेय सम्राट अकबर और मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्रजी-को ही था, जिन्होंने दूर देशसे आमन्त्रितकर सूरि-महाराजको लाहौर बुलाया।

सम्राटके विनीत-आग्रहसे सूरिजी प्रतिदिन शाही महलमें जाकर धर्मोपदेश देने लगे। जैन धर्मकी सर्वोत्तम विशेषताएं और अहिंसाका स्वरूप सम्राटको भली भांति बतला दिया, जिससे वे अत्यन्त धर्मपरायण और दयालु हो गये।

सम्राट अपने दरबारमें सूरिजीकी सतत प्रशंसा × किया करते

× दिन प्रति श्रीजी सुं वलि मिलतां, वधिउ अधिक सनेह।
गुरुनी सूरति देखी अकबर, कहइ जगि धन धन एह ॥७॥
केई क्रोधी केई लोभी कूड़े, केइ मनि धरइ गुमान।
षट् दर्शन मइं नयण निहाले नहीं कोई एह समान ॥८॥
[यु०प्र० जिनचन्द्रसूरि अकबर प्रतिबोध रास]

जिनचन्द्रसूरि सम को नहीं रे, गच्छ चौरासी मांहि।
खान प्रधान सवं सुनो रे, कहइ अकबर पातिशाह ॥३॥

× × ×

श्वेताम्बर हम बहु मिले रे, इन सम और न कोई।
अम्बर तारा गण घणा रे, दिनकर सम कुण होई ॥५॥
[विमलविनय कृत गीत गा ७]

थे कि श्वेताम्बरादि यति साधु मैंने बहुत-से देखे हैं, अनेक धर्मके गुरुओंका सत्संग किया है, परन्तु इनके सदृश शान्त, त्यागी, विद्वान और निराभिमान किसीको नहीं पाया। इनके दर्शन और समागमसे हमारा जन्म सफल हुआ है।

सूरिजीको सम्राट 'बड़े गुरु' * नामसे सम्बोधन किया करते थे, इससे हमारे चरित्रनायक श्रीजिनसूरिजी 'बडे गुरु' के नामसे सर्वत्र प्रसिद्ध हुए। राजा, महाराजा, सूबेदार, मुसाहिब और सम्राटका सारा परिवार उनके परम भक्त बन गये।

एक दिन सम्राटने सूरिजीसे धर्म-चर्चा करते हुए भक्तिके उल्लासमें आकर एक सौ स्वर्ण-मुद्राएं उनके सन्मुख रखी। उन्होंने साध्वाचारका स्वरूप दर्शाते हुए कहा,—"सम्राट् ! द्रव्यग्रहण करना तो क्या उसे छूना भी साध्वाचारसे विपरीत है, क्योंकि द्रव्यसे ममत्वादि अनेक दुर्गुणोंकी उत्पत्ति होती है, जैन साधुओंके लिये वस्त्र, पात्र यावत् अपने शरीर पर भी मूर्च्छा-आसक्ति करना निषिद्ध है! अपने माता, पिता, कुटुम्ब, परिवार और धन-दौलत त्याग करनेसे ही जैन-दीक्षा ग्रहण की जाती है और आजीवन उन्हें पांच कठिन प्रतिज्ञाए ग्रहण करनी पड़ती हैं, जिनका संक्षिप्त स्वरूप इस प्रकार है:—

(१) समस्त प्रकारकी हिंसा, मन, वचन और कायासे, करने, कराने, अनुमोदन करनेका त्याग।

(२) सब प्रकारसे मिथ्या भाषणका उपरोक्त त्रिकरण, तीन योगसे त्याग।

---

* बृहत् गुरु ता पूज्याः ख्याति माप्ता पुरेऽखिले।
शाहि सम्मानतो यस्मा जना वृद्धानुगामिनः ॥६४॥

(३) किसीके बिना दी हुई छोटी से-छोटी वस्तुके ग्रहणका त्रिकरण, त्रियोगसे त्याग।

(४) समस्त प्रकारकी काम-वासनाओंका उपरोक्त त्रिकरण, तीन योगसे त्याग।

(५) समस्त प्रकारके द्रव्योंकी मूर्च्छाका त्रिकरण, तीन योग से त्याग।

इसीसे जैन साधु निर्ग्रन्थ कहे जाते हैं। अतः हमारे लिए द्रव्य सर्वथा अग्राह्य है।"

सूरिजीके इन निर्लोभी वचनोंको सुनकर सम्राट् अत्यन्त चकित और हर्षित हुआ। उस द्रव्यको धर्म-कार्यमें खर्च करने के लिये मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्रको सौंप दिया। उन्होंने उसे धर्म-स्थानमें व्यय कर दिया।

एक समय सम्राट अकबरके पुत्र सलीम सुरत्राणके मूल नक्षत्रके प्रथम पादमें कन्याका जन्म हुआ। ज्योतिषी लोगोंने कहा कि इसका जन्मयोग पिताके लिये अनिष्टकारक है। उसका मुख भी नहीं देखकर उसे परित्याग कर देना चाहिये। तब सम्राटने शेख अबुलफजल आदि विद्वानों को बुलाकर मूल-नक्षत्र के जन्म-दोषका प्रतिकार पूछा। उनसे परामर्श करके मंत्रीश्वर कर्मचन्द्रको पूछकर सम्राटने आज्ञा दी;—हे मन्त्री! जैन दर्शनके अनुसार इस दोषकी उपशान्ति करनेके लिये शान्ति-विधि आदिका उचित प्रबन्ध करो।

सम्राटकी आज्ञा पाकर मंत्रीश्वर कर्मचन्द्रने विशेष विधिसे सोने-चांदीके घड़ों द्वारा महान् उत्सवके साथ मिती चैत्र शुक्ला

१५ *के दिन (श्री सुपार्श्वनाथजीका) अष्टोत्तरी स्नात्र कराया, जिसमें लगभग एक लाख रुपये खर्च हुए। वा० श्री मानसिंहजी (महिमराज) ने समस्त शास्त्रोक्त विधि सम्पन्न कराई। इस उपलक्षमें श्रीजिनचन्द्रसूरिजीके आदेशसे श्री जयसोमजीने अष्टोत्तरी स्नात्रकी विधि गद्य भाषामें बनाई ÷।

---

* इम चैत्री पुनम दिवस शान्तिक, शाहि हुकम मुंहते कीयउ।
जिनराज जिनचन्द्रसूरि वन्दी, दान याचक नइ दीयउ ॥१२॥
[यु० प्र० जिनचन्द्रसूरि अकबर प्रतिबोध रास]

पछी शेखजी गुण नी पेटी, तेह नइ आवी मूल मां बेटी।
तेड़या पण्डित जोशी जेहो, बोल्या जलमां मूंको एहो ॥३८॥
\+ \+ \+
मुनि कहै हत्या नवि लीजै, स्नात्र अष्टोत्तरी कीजै।
पातस्या हरख्यो तेणिवार, कुट्टण बामण बड़े गंवार ॥४०॥
\+ \+ \+
झूठे बामण ऋषि भली बात, करो अष्टोत्तरी स्नात्र।
हुकम करमचन्द नइ दीधो, मानसिंहे अष्टोत्तरी कीधो ॥४२॥
थानसिंह मानुकल्याण करि स्नात्र उपासरइ जाण।
पातस्या शेखजी आवइ, लाख रुपइया खरचावै ॥४३॥
स्नात्र सुपास नुं करता, श्राद्ध श्राविका आम्बिल धरता।
जिनशासन नी उन्नति थाय, विघ्नपातशाह केरू जाय ॥४४॥
[कवि ऋषभदास कृत हीरविजयसूरि रास]

इसके विषयमें विशेष जाननेके लिये "सूरीश्वर और सम्राट्" पृ. १५४ कर्मचन्द्र-मंत्रि-वंश प्रबन्ध वृत्ति और भानुचन्द्र-चरित्र देखो।

÷श्रीजिनचन्द्र गुरूणामादेशा-(आ) लाभपुरे लिखिता।
जयसोमोपाध्यायैः स्नात्र विधि पुण्य वृद्धि कृताः ॥१॥

इसकी हस्तलिखित प्रति बीकानेरके ज्ञानभण्डार और जयचन्द्रजीके भण्डार में है।

पूजन शेष हो जानेके अनन्तर मङ्गल दीपक और आरतीके समय सम्राट और उनके पुत्र शेखुजी (सलीम-शाहजादा) अनेक मुसाहिबों के साथ वहां आए और १००००). रुपये जिनेन्द्र भगवानके सन्मुख भेंट कर प्रभु-भक्ति और जिन शासनका गौरव बढ़ाया।

शान्तिके निमित्त मंत्रीश्वरके कथनसे प्रभुके स्नात्रजलको सम्राट ने लाकर अपने दोनों नेत्रोंपर लगाया और अन्तःपुरमें भी उस न्हवण-जलको भक्तिपूर्वक लगानेके लिये भेजा। इस अष्टोत्तरी स्नात्र पवित्र दिवसमें समस्त श्रावक श्राविकाओंने आम्बिलकी तपश्चर्या की। इस अष्टोत्तरी स्नात्रके अनुष्ठानसे सर्व दोष उपशान्त हुए, जिससे सम्राटको परम हर्ष हुआ।

सम्राट अकबरके मुसलमान होते हुए भी जैन-विधिसे शान्तिक स्नात्र करना, जैन धर्मके प्रति उनकी विशेष श्रद्धा-भक्ति और अनुपम आदरका परिचायक है।

धर्म गोष्ठीपरायण सम्राट अकबरके आग्रह से सूरिजी ने भविष्य में जैन धर्मकी विशेष प्रभावनाके हेतु सं० १६४९ का चातुर्मास लाहौर में करना निश्चित किया।



आठवां प्रकरण

युग-प्रधान पद प्राप्ति



आर्य देवमन्दिरों का विध्वंश करना मुसलमानों का स्वाभाविक दोष था। यद्यपि सम्राट अकबरके सुख-साम्राज्यमें ऐसा दुष्कृत्य करना सर्वथा निसिद्ध था, तो भी "जाति स्वभाव न मुञ्चते" नीतिवाक्यके अनुसार ऐसी घटनाएं बहुधा हुआ करतीथीं, यह तत्कालीन इतिहास से स्पष्ट है*। सं० १६३३ में तुरसमखान ने सीरोहीपर चढ़ाई की थी। तब १०५० धातुकी जैन प्रतिमाएं वहांसे लूटकर फतैपुर सीकरीमें सम्राटकेपास लाया। वह उन प्रतिमाओंको गलाकर सोना निकालना चाहता था, किन्तु नीति-परायण सम्राट अकबरने उसें ऐसा न करने देकर प्रतिमाओंको

---

* सम्राटके समयमें जिनप्रतिमाकी आसातना होनेका उल्लेख "हीर-विजयसूरि रास" में कवि ऋषभदास ने भी इस प्रकार किया है :—

"पाटण थी पछइ करइ विहार, त्रम्बावती मां आवणहार।
सोजितरै रह्या कारणवती, आशातना हुई प्रतिमा अती ॥१८॥
अहमदाबाद अकबर शाह जिसै, पासे आजमखान सही तीसै।
खंडी प्रतिमा पास नी त्यांहि लख्यु आव्यु त्रम्बावती मांहि ॥१९॥
हाकिम हसनखान कर करी, आसातना प्रतिमाकी करी।
सुणी हीर सोजितरै रह्या, वोरसदें पछे गुरुजी गया ॥२०॥"

[आनन्द-काव्य-महौदधि मौ० ५ पृ० ४८]

सुरक्षित रखा। उसके पश्चात् सं० १६३६ में आषाढ़ शुक्ला ११ के दिन बीकानेरके मंत्रीश्वर कर्मचन्द्र ने सम्राटको प्रसन्न कर प्रतिमाएं बीकानेर लाकर विराजमान की, जो अभी तक यहांके श्री चिन्तामणिजीके मन्दिरमें विद्यमान हैं, इस विषयमें विशेष आगेके प्रकरणमें लिखा जायगा।

जब हमारे चरित्र-नायक श्रीजिनचन्द्रसूरिजी लाहौरमें विराजते थे, तब भी एक ऐसी दुःखद घटनाका समाचार मंत्रीश्वर कर्मचन्द्रको मिला कि नौरङ्गखान नामक किसी मुसलमान अधिकारीने द्वारिकाके जैन-मन्दिरोंका विनाश कर दिया है। यह सुनकर मंत्रीश्वरने सूरि-महाराजको निवेदन किया "हे भगवन्! यदि सम्राटको उपदेश देकर तीर्थ-रक्षाके लिये कुछ उपाय न किया गया, तो यवन लोग द्वारिकाकी भांति अन्य तीर्थोंका भी विनाश करते देर नहीं लगावेंगे।"

सूरि-महाराजने इस कार्यको आवश्यक जानकर सम्राटके समक्ष शत्रुञ्जय प्रभृति तीर्थोंका महात्म्य बतलाया और साथ-साथ उनके उचित प्रबन्ध करनेकी भी सूचना दी। सम्राटने सूरिजीकी इस पवित्र आज्ञाको शिरोधार्य करके प्रसन्नतापूर्वक समस्त तीर्थोंकी रक्षाके लिए एक फरमान-पत्र लिखवाया और उसके ऊपर अपनी मुद्रिका (मोहर) लगाकर मंत्रीश्वरको समर्पित किया। उस फरमान-पत्रमें लिखा था कि आजसे समस्त जैन तीर्थ मंत्रीश्वरके आधीन कर दिये गये हैं +।

+ अन्यदा द्वारिका मलेच्छैश्चैत्य ध्वंसेऽधुना श्रुते।
श्री जैन चैत्य रक्षार्थं विज्ञप्तः श्रीजिनार्यदो: ॥२६६॥
साधिनाथ प्रसन्नेन जैनास्तीर्थाः समेऽपिहि।
मन्त्रिसात्कृता (चक्रिरे) नूनं, पुण्डरीकाचलादयः ॥२६७॥
पातसाहसमुद्राङ्क मुद्रितं निज मुद्रया।

सम्राटने अहमदावादके तत्कालीन सूबेदार आज़मखान × को शत्रुञ्जय, गिरनार आदि तीर्थोंकी रक्षा का सख्त हुक्म देकर फरमान भेजा। जिससे महातीर्थ श्री शत्रुञ्जय पर म्लेच्छोंका किया हुआ उपद्रव निवारण हुआ।

यह फरमान-पत्र इलाही सन् ३६ के सहरयुर महीनेमें लिखा गया था, जिसका उल्लेख इसी आशयके एक फरमानके भाषानुवादमें है, जिसकी नकल बीकानेर "ज्ञान भण्डार" से लेकर इस पुस्तकके परिशिष्ट में प्रकाशित की गई है।

एक वार सम्राट अकवरको काश्मीर विजय करनेके निमित्त जानेकी इच्छा हुई, तब मंत्रीश्वर कर्मचन्द्रको कहा कि वड़े गुरु श्रीजिनचन्द्रसूरिजीको बुलाओ। उनके दर्शनकर धर्मलाभ रूपी आशीर्वाद प्राप्त करनेकी मेरी अभिलाषा है, जिससे मेरी मनोकामना पूर्ण होगी।" सम्राटकी इस आज्ञासे मंत्रीश्वरने सूरि-महाराजको शाही दरवारमें बुलाया *। उनके दर्शनकर सम्राट अत्यन्त प्रसन्न

फुरमाणमदात् शाहिर्यस्मै प्रीणित मानसः ॥ ३६८ ॥
उद्धारान् सप्त चैत्यानां कारणा द्विवधुःपुरा।
महांत पुण्डरीकाद्रौ रक्षणात्सः कृतोऽमुना ॥ ३६९ ॥

[कर्मचन्द्र मंत्रीवंश प्रवन्ध]

× यह आजमखान सन् १५८७ से १५९२ तक अहमदावादका सूबेदार था। खानेआजम या मिर्जा अजीज कोकाके नामसे भी यह पहचाना जाता है। विशेष परिचय के लिए "मीराते सिकन्दरी" का गुजराती अनुवाद देखना चाहिए।

* काश्मीरान् गन्तुकामेनान्यदा नौमध्यवर्त्तिना।
शाहिना मुदितेनैवमुदितो मंत्रि नायकः ॥ ४०० ॥
जिनचन्द्रास्त्वया तूर्णं माह्वया वचसा मम।
धर्मलाभो महास्तेषां मसादेयोस्ति वाञ्छितः ॥ ४०१ ॥

हुए। सम्राटके हृदयमें यह निश्चय हो गया कि हमारी अवश्य ही विजय होगी, क्योंकि सूरिजीपर सम्राटकी असीम श्रद्धा और भक्ति थी।

सूरिजीकी अमृतमय वाणी और अहिंसात्मक उपदेश श्रवणकर सम्राटका हृदय दयासे ओत-प्रोत हो गया और प्रति वर्ष आषाढ़ शुक्ला ६ से पूर्णिमा पर्य्यन्त १२ सूबों÷में समस्त जीवोंको अभय-दान देनेके लिये १२ शाही फरमान (अमारि-घोषणा) लिखकर भेजे ❀।

पूज्यान्प्रपि तथा हृता नायक श्री शाहि सन्निधौ
श्री गुरोर्देशनादेवा नन्दितो भून्नराधिपः ॥ ४०२ ॥
शुचि मासे शुचौ पक्षे प्रसन्नो दिन सप्तकम् ।
नवमीतो ददौशाहि रमारि गुण पावनम् ॥ ४०३ ॥
[जयसोमजी कृत कर्मचन्द्र-मन्त्रि-वंश प्रबन्ध]

÷ कई जगह ११ सूबोंका ही उल्लेख है, किन्तु समयसुन्दरजी अपनी "कल्पलता" की प्रशस्तिमें इस प्रकार लिखते हैं:—

अकबर रञ्जन पूर्व द्वादश सूबेषु सर्व देशेषु ।
स्फुटतरममारि पटहः प्रवादितो यैश्च सूरिवरैः ॥ ७ ॥

❀ सद्गुरु वाणि सुणी शाहि अकबर परमानंद मनि पाए ।
हुकम्ह रोज अमारि पलाण कुं तिणि फुरमाण पठाए ॥ २ ॥
[समयसुन्दरजी कृत जिनचन्द्र० गीत]

सात दिवस जिनि सब जीवनकी हिंसा दूर निवारी ।
देश देशि फुरमाण पठाए सब जन कुं उपगारी ॥ ३ ॥
[गुणविनयकृत जिनचन्द्र० गीत]

आठ दिवस आषाढ़ के अट्ठाहि निरधारि ।
सब दुनिया माँहि मानती पालावी अमारि ॥ ८ ॥
[श्रीसुन्दर कृत जिनचन्द्र० गीत]

इन फरमानोंमेंसे मुलतानके सूबेका फरमानपत्र खो जानेसे सं० १६६०–६१ (ता० ३१ खुरदाद इलाही सन् ४६) में उसकी पुनरावृत्ति करते हुए फिरसे एक फरमान श्रीजिनसिंहसूरिजीको सम्राटने दिया था, जिसकी नकल परिशिष्टमें दी गई है।

सम्राटके अमारि फरमान प्रकाशित करनेसे अन्य राजाओंपर वहुत प्रभाव पड़ा। उन्होंने भी सम्राटका अनुकरण करके अपने-अपने राज्योंमें किसीने १० दिन, किसीने १५ दिन, किसीने २० दिन, किसीने २५ दिन, किसीने १ महीने और किसीने २ मास तक भी सब जीवोंको अभयदानकी उद्घोषणा कर दी *। जिससे सम्राटको परम हर्ष हुआ और जैन धर्मकी महान् प्रभावना हुई। सूरिजीके इस उपदेशके फल-स्वरूप असंख्य जीवोंको सुख-शान्ति मिली।

अपने काश्मीरके प्रवासमें भी धर्मगोष्ठी, धर्म-चर्चा होती रहे और वहां भी दया-धर्मका प्रचार हो इस हेतुसे सम्राटने मन्त्रीश्वर

गुर्जर मण्डल तैं वोलाए, संतरा मुख सुरिा जसु गुरा गान।
वहुत पइर सगुरु पउधारइ, वखत योग लाहौर सुथान ॥ २ ॥
अर्थ विचार पूछि सहु विध विध, रीझे अकवर शाहि सुजान।
वहुत वहुत दर्शन मइं देखे, को न कहूं या सुगुरु समान ॥ ३ ॥
भाग सोभाग अधिक या गुरु कौ सूरति पाक अमृत सम वान।
पेश करइ अकवर अग मांग्ये सव दुनिया मांहि अभयादान ॥ ४ ॥

[गुणविनय कृत जिनचन्द्र० गीत]

* पातिशाहि मनोल्हाद हेतवे निखिलैरपि।
देशाधीशैः स्वदेषु दश पञ्चाधिकान्दिनान् ॥ ४०५ ॥
दिनानां विंशतिं कैश्चिदन्यै स्तु पंचविंशतिं।
मासं मास द्वयं यावद परैरभयं दद्दे ॥ ४०६ ॥

[कर्मचन्द्र मंत्रि वंश प्रवन्धः]

को निर्देश करके सूरिजीसे निवेदन किया "सूरिमहाराज लाहौरमें ही सुखसे विराजें और हमारे साथ धर्म-चर्चा करने और दयाका उपदेश देकर अनार्य देशको भी आर्य रूपमें करनेके लिये मानसिंहको अवश्य भेजें ! तब मन्त्रीश्वरने सम्राटके कथनका समर्थन करते हुए वाचकजीको भेजनेमें जो एक बाधा थी उसका प्रतिकार करते हुए सूरिमहाराजसे विनय पूर्वक प्रार्थना की "यद्यपि वह अनार्य देश है इससे मुनियोंको आहार-पानी मिलनेमें असुविधा होना संभव है, तथापि हम बहुतसे श्रावक लोग भी यात्रामें सम्राटके साथ रहेंगे ! इससे साधु धर्मके पालन करनेमें किसी तरहकी बाधा नहीं होगी। उसदेशमें विहार करनेसे दया-धर्मके प्रचारका महान् लाभ और जैन-धर्मकी प्रभावना होगी ! अतः उन्हें अवश्य भेजिये !" सूरिजीने लाभ जानकर स्वीकार कर लिया।

काश्मीर यात्राके लिये तैयारियां होने लगी, सम्राटने सारा सैन्य सुसज्जित करके सं० १६४९ मिती श्रावण शुक्ला १३ (ता० २२ जुलाई सन् १५९२ *) को प्रथम प्रयाण * राज श्रीरामदास * की वाटिकामें किया। वहां उसी दिन संध्याके समय एक सभा एकत्र हुई, जिसमें सम्राट अकबर, शाहजादा सलीम, बड़े-बड़े सामन्त,

* देखो अकबर नामा।

* ये ५०० सेनाके स्वामी थे, "सूरीश्वर और सम्राट" में इनका प्रसिद्ध नाम करणराज कछवाहा भी लिखा है। इन्हें राजाकी उपाधि थी। विशेष जाननेके लिये आईन-ई-अकबरीका अंग्रेजी अनुवाद देखना चाहिये।

* श्रीमोहनलाल द० देशाई B. A. L. L. B. महोदयने यह सभा "काश्मीर देशपर विजय करोति निमित्ते" लिखा है, किन्तु अष्टलक्षीकी प्रशस्तिमें "काश्मीर देश विजय मुद्दिश्य श्रीराज श्रीरामदास वाटिकायां कृत प्रथम प्रयाणेन" लिखा है। इस वाक्यसे काश्मीर विजय करनेके उद्दे[illegible] प्रथम प्र[illegible] [illegible]या गया था तब सभा एकत्र होना सिद्ध है।

मण्डलिक राजा, महाराजा और अनेक वैय्याकरण तार्किक उद्भट विद्वान (भट्ट) भी सम्मिलित हुए। उस सभामें श्रीजिनचन्द्रसूरिजीको अपने शिष्य-मण्डलके साथ अतिशय सम्मान और वहुमान पूर्वक निमन्त्रित किया गया।

इससे पहले किसी समय सम्राटकी सभा में विद्वद्गोष्टी करते हुए किसी विद्वानने जैन-धर्मके "एगस्स सुत्तस्स अनन्तो अत्थो" वाक्यपर उपहास किया *। यह वात सूरिजीके प्रशिष्य विद्वद् शिरोमणि श्रीसमयसुन्दरजीको अखरी। उन्होंने जैन-दर्शनके इस वाक्यकी सार्थकता दर्शानेके निमित्त "राजानो ददते सौख्यं" इस वाक्यपर व्याकरण-सिद्ध दश लाख वाईस हजार चार सौ सात (१०२२४०७) अर्थ किये। उनमें कहीं कोई अर्थ संभवपर न हो या अर्थ योजना में युक्तियुक्त न हो इसलिये २२२४०७ अर्थों को उनकी पूर्ति के लिये छोड़कर उस ग्रंथका नाम "अष्टलक्षी" रखा। सम्राटको इस ग्रंथ-निर्माणकी सूचना मिलनेसे हर्षित होकर उन्होंने उस ग्रंथको देखने और श्रवण करनेकी उत्कट इच्छा प्रकट की थी।

इस सभामें उस ग्रंथको सुननेका सुअवसर प्राप्तकर कविवर समयसुन्दरजीको वह ग्रंथ पढ़कर सुनानेके लिये सम्राटने आग्रह पूर्वक कहा। सूरि महाराजकी आज्ञा प्राप्तकर समयसुन्दरजीने उस विद्वत सभाके समक्ष साहित्य संसारमें अपूर्व और अनुपम ग्रंथ-रत्न "अष्टलक्षी" को पढ़कर सुनाया। इस चमत्कृत अद्भुत ग्रंथको मनोयोगसे श्रवणकर सम्राट और उपस्थित विद्वानोंके चित्तमें अत्यन्त आश्चर्य और कौतुहल उत्पन्न हुआ। सव लोग समयसुन्दरजीकी विद्वताकी भूरि-भूरि प्रशंसा करने लगे। सम्राटने उस ग्रंथ-रत्नकी अत्यधिक श्लाघा की और उसे अपने हाथमें लेकर उसके सौभाग्यशाली निर्माता श्रीसमयसुन्दरजीके कर-कमलोंमें सर्म्पणकर

* देखो "विजयधर्म सूरिजी कृत "धर्म देशना" पृ० २

उस ग्रंथको प्रमाणिक सिद्ध किया। और उन्होंने यह भी इच्छा प्रकट की कि इस अभूतपूर्व ग्रंथको पढ़ा जाय, और बहुत सी नकलें कराके सर्वत्र प्रचार किया जाय *।

सूरि महाराजने सम्राटके साथ काश्मीर प्रवासमें वा०मानसिंह जी श्रीहर्षविशालजी × आदिको भेजा। और सम्राटके निर्देश किये हुए सावद्य व्यापार, कि जो साध्वाचारसे विपरीत हों उन्हें परि-शीलन करनेके लिये मंत्र, तंत्रादिमें निपुण मेघमाली गुरुके विनयी शिष्य महात्मा पञ्चाननको भी साथ भेजा।

मंत्रीश्वरने साधुओंको निर्वद्य अन्न-पानादि प्राप्त करने, और साधु-धर्मका सुखपूर्वक पालन करनेमें सुविधा हो इसलिये अपने साथ और भी बहुतसे श्रावक लिये थे। लाहौर से क्रमशः काश्मीर को प्रयाण करते हुए रोहितासपुर पहुँचे। सम्राटने अपने अन्तःपुरकी रक्षा करने के लिए अपने परम विश्वासभाजन मंत्रीश्वर कर्मचन्द्रको वहीं रहनेकी आज्ञा दी। अतः मंत्रीश्वरको वहीं ठहरना पड़ा ※।

---

* देखो 'अष्टलक्षी' ग्रंथकी प्रशस्ति, इस ग्रंथका दूसरा नाम 'अर्थरत्नावली' भी है। यह ग्रंथ और भी अनेकार्थ-साहित्य के साथ "अनेकार्थ रत्नमंजूषा" के नामसे "देवचंद लालभाई जैन पुस्तकोद्धार फंड" गोपीपुरा, सूरतमे प्रकाशित हुआ है। "अष्ट लक्षी" जैन साहित्यका एक महान् गौरवपूर्ण ग्रंथ है। इसकी समता करने वाला समस्त विश्व के अनेकार्थ साहित्य में कोई दूसरा ग्रंथ नहीं है।

×कर्मचन्द्र मन्त्रि-वंश-प्रबन्धमें इनका नाम डुंगरजी लिखा है किन्तु उसकी वृत्तिमें दीक्षा नाम हर्षविशाल होनेके कारण हमने यही लिखा है।

※ तथेत्युक्त्वा समं मंत्री शाहिनां चालयत्तराम।
मानसिंहान् निराबाधं संयमन् डुंगरान्वितान् ॥ ४०६ ॥

सम्राट सैन्यसहित क्रमशः प्रयाण करते हुए काश्मीर पहुँचे। रास्तेमें जहां-जहां पड़ाव डालते थे वहां-वहां वाचकजी के साथ धर्म-गोष्ठी किया करते थे। उनके उपदेशसे सम्राटने कई जगह तालावोंके जलचर जीवोंकी हिंसा वन्द कराई। मार्ग वहुत विषम था, पथरीले रास्तोंमें उन्हें पैदल विहार करते देखकर सम्राटके चित्तमें वाचकजीकी साधु-धर्म पर निश्चलता और क्रियाकी कठिनताका गहरा प्रभाव पड़ा।

काश्मीर देश पर विजय प्राप्तकर सम्राट 'श्रीनगर' आये। वहां अपनी विजयके उपलक्षमें वाचकजी के कथन से आठ दिन तक अ-मारि उद्घोषणा की *।

काश्मीर दिग्विजय करके क्रमशः प्रयाण करते हुए सन् १५९२ ई० ता० २९ दिसम्वर (सं० १६४९ के माघ महीनेमें) को सम्राट लाहौर वापस आये। इस विजय के उपलक्षमें प्रजाने खूब हर्ष मनाया नगरमें वाजित्र वजने लगे। सूरिजी भी वा० जयसोम, वा० रत्न-निधान, पं० गुणविनय, समयसुन्दर आदि विद्वत् मुनि मंडलीके साथ

शाहि निर्दिष्ट सावद्य व्यापार परिशीलनात्।
मुनिनां मा वृत्ताचार विलोपो भवतादिति ॥ ४१० ॥
विभाव्य मंत्र तन्त्रादि निपुणं दत्तवान् समं।
पञ्चाननं महात्मानां विनेयं मेघ मालिनः ॥ ४११ ॥

* * * *

स्वयं तु शाहि वाक्येन रोहितास पुरे स्थितः।
अवरोधस्य रक्षार्थं विश्वासास्यदमीशितु ॥ ४१४ ॥

* श्रीगुरु वाणी श्रीजी नित सुणइ, धर्म मूरति धन २ सुह भणइ।
शुभ दिनइ रिपुवल हेलि भंजी, नयर श्रीपुरि उतरि।
अमारि तिहां दिन आठ पाली देश साधी जय वरी ॥

(जिनचन्द्रसूरि अकवर प्रतिवोध रास)

सम्राटसे मिले और उन्हें धर्म-लाभ रूपी आशीर्वाद दिया । सूरि महाराज का दर्शन कर सम्राट अत्यन्त प्रमुदित हुए ।

एक दिन धर्मगोष्ठी करते हुए सम्राटने सूरिमहाराजसे कहाकि आपके (जैन) दर्शन के सदृश मैंने किसी दर्शनको नहीं देखा, और आपके समान निर्मल चरित्रवान् साधु नहीं देखा । काश्मीर यात्रामें मुझे श्रीमानसिंहजीके सद्गुणों का भी बहुत कुछ अनुभव हुआ है। ऐसे पथरीले विकट मार्ग में जहां रथ वगैरह का जाना भी कठिन है वहां पैदल विहार करके इन्होंने अपने आचार को जिस दृढ़ता के साथ पालन किया है, उसका मैं कितना वर्णन करूं, अनेकों कष्ट सहन करके भी और हमारे बहुत कहने पर भी ये अपनी प्रतिज्ञाओं से विचलित नहीं हुए । इनकी कर्तव्य-निष्ठा और निरीहता हर समय मेरे हृदयमें आश्चर्य और आनन्द उत्पन्न करती है । इनके उपदेशसे काश्मीरमें मैंने तालावों के मछली आदि जलचर जीवोंको अभय दान दिया था । अब कृपा करके आप इन्हें (मानसिंहजीको) अपने पट्ट पर स्थापित कर जैन-शासनका सर्वोत्कृष्ट आचार्य पद प्रदान कीजिये ! क्योंकि ये सर्वथा योग्य है, एवं दुर्द्धर्ष संयम पालनेमें निश्चल हैं ।

अकवरके इस आग्रह और वाचकजीकी योग्यतापर विचार करते हुए सूरिजीने उन्हें आचार्य पद देना स्वीकार कर लिया । तब सम्राटने मंत्रीश्वर कर्मचन्दसे पूछा कि जैन शासनमें विशिष्ट महत्व का कौनसा पद है ? (जिस पदसे सूरिजीको अलंकृत किया जाय) तब मंत्रीश्वरने कहा जैन शासनमें सुप्रसिद्ध और हमारे खरतर गच्छमें जो पहिले भी श्रीजिनदत्तसूरिजीको देवताने दिया था वह "युग-प्रधान" पद है । यह सुनकर सम्राटने उत्सुकता पूर्वक पूछा कि वह पद देवता द्वारा कैसे और किस प्रकार दिया गया ? यह हमारी जाननेकी इच्छा है । मंत्रीश्वरने श्रीजिनदत्तसूरिजीका जीवन चरित्र माद्योपान्त कह सुनाया और "युग प्रधान" पदके विषयमें विशेष स्पष्टी-करण करते हुए इस प्रकार कहा :—

"एक वार नागदेव श्रावकने युग में प्रधान सद्गुरुकी शोध करने के लिये श्री गिरनारजी पर अष्टम तप करके "अम्बिका देवी" की आराधना की। देवीने प्रकट होकर उसके हाथमें स्वर्णाक्षरोंसे श्लोक* अङ्कित कर दिया और कहा कि जो इन अक्षरोंको पढ़ सकेंगे वे ही "युग-प्रधान" है। उस श्रावकने सर्वत्र भ्रमण कर लिया किन्तु उसे कहीं भी श्लोक पढ़ने वाला न मिला। अन्तमें श्रीजिनदत्तसूरिजीके पास आकर हाथ दिखाया। उनके वासक्षेप डालने पर शिष्यने पढ़के सुनाया कि यह श्रीगुरुमहाराज की स्तुति है और उन्हें देवताने "युगप्रधान" पद से अलंकृत किया है।"

दादा श्रीजिनदत्त-सूरिजी का चरित्र श्रवणकर सम्राट अकवरके चित्तमें अद्भुत चमत्कार और कौतुहल उत्पन्न हुआ। अकवरने इस पदके सर्वथा योग्य हमारे चरित्रनायक श्रीजिनचन्द्र सूरिजी को ही समझ कर उन्हें "युग-प्रधान"× पद दिया। और वाचक मानसिंहजी (महिमराज जी) को आचार्य पद देकर सिंह के तुल्य होनेके कारण 'श्रीजिनसिंह सूरि' नाम देनेका निर्देश किया। पत्पश्चात् मंत्रीश्वरको आज्ञा दी कि जैन-दर्शन की विधि के अनुसार संघ की

---

* वह श्लोक यह था:—
दासानुदासा इव सर्व देवा, यदीय पादाब्जतले लुठंती।
मरुस्थली कल्पतरु सजीयात्, युगप्रधानो जिनदत्तसूरिः॥

× अकवर शाहि हरख भरि कीनो, युगप्रधान पदधारी।
खंभायत में शाही हुकुम तंइ जलचर जीव उवारी॥ २॥
[गुणविनयकृत जिनचन्द्रसूरि गीत]

उत्तम काम अवलिये कीधो, युगप्रधान पद दीधो।
तिणि अवसर सांगासुत भावइ, सवा कौड़ि वित्त वावइ॥
[रत्ननिधान कृत गहूंली]

युगप्रधान पदवी भली आपइ अकवर राज।
संइ मुख हरखे इम कहइए, ए गुरु सव सिरताज॥
[सं० १६४६ चै० कृ० ६ कृतसमयप्रमोद कृत जिनचन्द्र० गीत]

साक्षी से उत्सव-महोत्सव पूर्वक शुभ दिन देखकर अद्वितीय समारोह के साथ हर्ष उत्कर्षसे इस उत्सवकी तैयारी करो।

सम्राट की आज्ञा पाकर मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्र ने बीकानेर नरेश रायसिंहजीसे सारा वृत्तान्त निवेदन किया। उन्होंने भी इस शुभ कार्य में अपनी सम्मति और आज्ञा प्रदान की। इसके पश्चात् पौषधशालामें जैन संघको एकत्र कर विनीत वचनोंसे मन्त्रीश्वरने निवेदन किया "यद्यपि संघ सब कुछ कार्य करनेको समर्थ है तथापि इस महान् उत्सवका लाभ कृपया मुझे ही लेनेकी आज्ञा दें!" श्रीसंघने मंत्रीश्वर के इस प्रस्ताव को सहर्ष स्वीकार कर आज्ञा दे दी।

संघ की आज्ञा प्राप्तकर मन्त्रीश्वरने महोत्सव की तैयारियां आरम्भ कर दीं। अच्छा दिन देखकर मिती फाल्गुन वदी १०*से अष्टान्हिका महोत्सव मनाया जानेलगा। संघमें सर्वत्र आनन्द छा गया, भक्तिपूर्वक रात्रिजागरणमें श्राविकाओंने एकत्र होकर देव, गुरु और धर्मके माङ्गलिक गीत गाये। मंत्रीश्वर ने समस्त साधर्मियोंके घर पूंगीफल, एक सेर प्रमाण मिश्री, और मुरंगी चुनड़ियें भेजी।

अष्टान्हिका महोत्सव खूब आनन्द उत्सव से मनाया गया, मिती फाल्गुन शुक्ला २ जया-तिथि को मध्यान्हके समय अच्छे मुहूर्त में आगमोक्त विधि से श्रीजिनचन्द्रसूरिजीमहाराज ने वाचक श्रीमहिमराजजी को "सूरि मंत्र" देकर आचार्य पदसे अलंकृत किया। सम्राट के कथन से उनका नाम "श्रीजिनसिंहसूरिजी" रखा गया।

---

* संवत्संद समुद्र षट्शशि मिते श्रीफाल्गुने मासिये।
न प्राक् श्रीदशमी तिथौ (?) सत्पुष्याः सतानंदिनः॥
साहि दत्त युगप्रधान विरदा प्रानन्द मन्दान्विते।
श्रीमन्श्रीजिनचन्द्रसूरि गुरवो जीवन्तु विश्वश्चिरम्॥४॥
हमें यह श्लोक अशुद्ध ही मिला है।

इसी समय वा० जयसोमजी और रत्ननिधानजीको "उपाध्याय पद" पं० गुणविनयजी और समयसुन्दरजीको "वाचनाचार्य" पद प्रदान किया।

उस समय का दृश्य अत्यन्त मनोहर और दर्शनीय था, जिस संखवाल गोत्रीय श्रावक साधुदेव के वनवाये हुये उपाश्रय में उन्हें आचार्य पद दिया गया था, उसे खूब ध्वजा पताकाओंसे सजाया गया। कीमती मोतियों के जड़े हुए चंन्द्रवे और पूठिये सजाये गये। भगवानका चतुर्मुख (नन्दि) समवशरण विराजमान कर उसके सन्मुख सर्व विधि सम्पन्न हुई। इस महोत्सव में स्वगच्छ परगच्छ स्वधर्म और परधर्म के भेदभावों को त्याग कर असंख्य नागरिक और राज्य के वड़े-वड़े प्रायः सभी अधिकारी सम्मिलित हुए थे। शाही वाजित्रोंकी ध्वनि से सारा नगर आनन्द का निकेतन वन गया था।

सम्राट अकवर ने इस आनन्दोत्सव के उपलक्ष में सूरिजी के उपदेश से स्तम्भतीर्थीय समुद्रके असंख्य जलचर जीवों को वर्षावधि अभयदान देने के लिए फरमानपत्र प्रकाशित किया+और लाहौरमें भी उस दिन शाही-नौवत वजाकर अमारि-उद्घोषणा की गई।

इस धार्मिक हर्षोत्सवमें मंत्रीश्वर कर्मचन्द्रजी वच्छावतने अपने द्रव्यका सद्व्यय करनेमें कोई कसर नहीं रखी। जिसने जो मांगा वही प्रदान कर अपनी प्रशस्त कीर्ति चिर स्थापित और दिग्गंत

+ जग सगले जस पामियउ, प्रतिवोधी पातशाह।
खंभायत दधि माछली राखी अधिक उच्छाह ॥
× × ×
खंभायत दरियावके जी रे जी पूज जी छोड़ांया सहु जाल।
[श्रीसुन्दर कृत गीतद्वये]

व्यापी की। "युगप्रधान" नाम स्थानपर याचकोंको नव हाथी, पाँच सौ घोड़े, नवग्राम और सवा करोड़ रुपयेका अभूतपूर्व दान दिया, जिसका उल्लेख तत्कालीन ग्रन्थ कर्मचन्द्र मंत्रि वंश प्रवन्ध वृत्ति (सं० १६५०※), जयसोमजी कृत प्रश्नोत्तर ग्रन्थ × (प्रश्न नं०

※इस ग्रन्थमें इस प्रकरणमें उल्लिखित प्रायः सभी वातोंका विस्तृत वर्णन है, ग्रन्थविस्तारके भयसे उसके श्लोक यहां नहीं दिये गये हैं।

×इस ग्रन्थमें कई विशेष ज्ञातव्य वातोंके साथ इस प्रकार वर्णन है:—

"हिवणा श्री लाहोर माहि श्रीअकवर जलालुदी पातस्या श्री वृहत् खरतर गच्छनायक श्रीजिनमाणिक्यसूरि पट्टालङ्कार श्री जिनचन्द्रसूरिजी नैं योग्यता जाणी खुसी थइ नैं युगप्रधान नामे बोलाव्या, श्रीकर्मचन्द्र मन्त्रीश्वरे याचकां ने ६ हाथी, ५०० घोड़ा, ६ ग्राम, एवं सवा कोड़ि नु दान आप्या, म्।महोच्छव कीधा। लाहौर मांहि अमारि घोषाइ पातिशाहि नौवति वजाइ वलीमुंहते पातिसाहजीने १२००० रूपईया, १२ हाथी, १२ घोड़ा, २७ तुक्कस पेस कीधा श्रीजीये १२(?) रुपईया राख्या बीजा सर्व मुंहतानें ज बकस्या एवं महामहोत्सव पूर्वक सर्व लोक समक्ष युगप्रधान थाप्या। तउ तेह ना शिष्य तथा श्रावक युगप्रधान कहे तिहां स्यौ दूषण थाइ × × × × वली युगप्रधान नामि दूहावो ते स्युं? आज प्रभृत वली श्रीजिनशाशन मांहि किणइ आचार्य नइ जगद्गुरु कह्या हुवइ तो तुम्हें दिखाड़ो! तमारा ऋषिमतीना भट्टारक नैं श्रावक श्राविका जगत्गुरु कही गावै छै तुम्हे सांभली खुशी थाओ छो श्रीजिनचन्द्रसूरिजी ना नाम युगप्रधान सांभली दुहवाओ तेह स्युं? जइ पातिशाह जगत्गुरु एहवा नाम साभलै (तउ) फजीत करै श्री सेख अबुलफजल हजूर जगत्गुरु नाम कहतां शेखे अम्ह हजूर रीस करी भानुचन्द्र पन्यास नैं जे बोल कह्या ते भानुचन्द्र जाणे छै, वली लोकां ना कह्या तपा एहवा नाम मानो छो एवं विचारतां तुमने ए प्रश्न अजाणपणो जणावै छै।"

इससे स्पष्ट ज्ञात होता है कि श्रीमान् हीरविजयसूरिजीका जगत्गुरु पद उनके भक्त श्रावक श्राविकाओंद्वारा रखा हुआ गुरु भक्तिसूचक मात्र था.

१३४ के उत्तर) आदिमें मिलता है। इस विषयका एक प्राचीन कवित्त हीरकलश शिष्य हेमाणंद कृत "भोज चरित्र चौपइ", जो कि सं० १६५४ दीवाली के दिन 'भट्टाणइ' ग्राम में बनाई है, उसकी प्रशस्ति में इस प्रकार लिखा है:—

"नव हाथी दिन्है नरेश, मदस्यौं मतवाले।
ऐराखी पंचसइ, लोकत पावइ नित हालइ॥
नवइ गांव बगसीस, सुइ तु सहू को जाणइ।
सवा कोड़िका दान, "मल्लवि" साच वखाणइ॥
को राइ न राणा करि सकइ, संग्राम नंदन जो किया।
युगप्रधान के नाम कु, कर्मचन्द इतना दिया।"

सचमुच यह दान अभूतपूर्व था, पदस्थापनाके समय इस प्रकार का दान आगे किसीने नहीं किया। ऐसे दानी महानुभावोंसे जैन शासन गौरवान्वित है।

लाहौरके संघने एकत्र होकर मंत्रीश्वरके घर जाकर उन्हें यशस्तिलक करके सम्मानित किया।

सम्राट अकबरको भी इस महोत्सवके उपलक्षमें मंत्रीश्वरने शेख अबुलफजलको साथ लेकर १००००) रुपये, १० हाथी, १२ घोड़े और २७ तुक्क्स भेंट स्वरूप पेश किये। सम्राटने मङ्गलके निमित्त रु०१) रखकर बाकी सब मन्त्रीश्वरको वापिस दे दिये। इसी प्रकार शाहजादा सलीम और शेख अबुलफजल आदि सम्राटके आत्मीय-जनोंका भेटपूर्वक सत्कार किया। मंत्रीश्वर सम्राटके सामाजिकाध्यक्ष पदपर नियुक्त थे। इसलिये उस विभागके समस्त कर्मचारियों और अन्य अधिकारियों का भी उचित सम्मान किया।

इस प्रकार यह महान् महोत्सव अवर्णनीय आनन्द, अनुपम उत्साह, असाधारण भक्तिके साथ सम्पन्न हुआ। उस समयके उल्लसित शुभभाव और हर्ष का अनुभव जो उस महोत्सव में सम्मिलित हुए वे ही कर सकते थे। इस जड़ लेखनी द्वारा उस आनन्द का वर्णन करना असमर्थ है। तो भी संक्षिप्तमें इतना तो अवश्य कहना होगा कि वह उत्सव अदृष्टपूर्व, परम गौरवसम्पन्न और जैन शासनकी उन्नति, उत्कर्ष करने में अद्वितीय था।

सूरि महाराज ने पाक्षिक चातुर्मासिक और सांवत्सरिक पर्वोंके दिन "जयतिहुअण" पढ़ने का शाश्वता आदेश बोहित्थ वंश की सन्तति को दिया और उन्हीं पर्वों के प्रतिक्रमण में स्तुति बोलने का आदेश श्रीमालों को दिया + ।

बीकानेर महाराज रायसिंहजी* सूरि-महाराजके परम भक्त थे। हम पहले लिख चुके हैं कि इस उत्सव पर वे भी लाहौरमें

+ बोहित्थ संतति नइ दियइ, युगप्रधान गणधारो रे।
पक्ष चउमास पडूसणइ, श्री जयतिहुअण सारो रे ॥ ७८ ॥
तिम चौमासइ पाखियइ, संवत्सरियइ थुइ रे।
पड़िकमणइ संघातणै, श्रीमालां नइ हुइ रे ॥ ७९ ॥
[कर्मचन्द्र वंशावली प्रबन्ध चौ०]

...... बीकानेर में अभीतक खरतरगच्छ में बच्छावतों को धार्मिक कार्यों में अच्छा सम्मान है।

* इनका जन्म सं० १५९९ श्रा० कृ० १२ को हुआ, सं० १६२८ वैसाख शुक्ल १ को बीकानेरकी राजगद्दीपर बैठे। ये सूर वीर और दानी नरेश थे। बादशाह ने प्रसन्न होकर इन्हें "राजा" पदवी, पांचहजारीका मनसब और ५२ परगने जागीरमें दिये। सं० १६६८ में इनका स्वर्गवास हुआ। विशेष जाननेके लिये "बीकानेर राज्यका इतिहास" "भारतके प्राचीन राजवंश" और 'कर्मचन्द्र वंश प्रबन्ध' देखने चाहियें।

ही थे। उन्होंने इसके १० दिन पश्चात् अर्थात् मिति फाल्गुन शुक्ला १२ को कई ग्रन्थ सूरिजीको आग्रहपूर्वक समर्पण किये थे । सूरिजीने उन ग्रन्थोंको बीकानेरके स्थापित ज्ञान भण्डार * में रखे थे, उनमें से दो ग्रन्थ हमें उपलब्ध हुए हैं, जिनका पुष्पिका लेख इस प्रकार है:—

"सं० १६४९ वर्षे फाल्गुन शुक्ल द्वादश्यां श्री लाभपुर नगरे पातशाह श्री अकबर प्रदत्त युग-प्रधान पद समलंकृत खर (तर) गच्छेश भट्टारक युग प्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरिराजानां। श्री जिनसिंह सूरि युतानां भूशक्र चक्र चर्चित चरणारविन्द महाराजाधिराज श्री रायसिंहैः कुंवर श्री दलपतिप्रभृति परिवार युतैः पुस्तकमिदं विहारितं। तैश्च ज्ञान वृद्ध्यर्थं श्रीविक्रमनगरे वित्कोपे स्थापितम्। शिष्यादिभिर्वाच्यमानं चंद्रार्कं चिरनंद्यात्।"

[बन्धस्वामित्व षड़शीतिवृत्ति पत्र ५० श्रीपूज्यजीके संग्रहसे]

"सं० १६४९ वर्षे फाल्गुन शुक्ल द्वादश्यां गुरौ पुण्ययोगे श्री लाभपुरे जंतु जाता.........................हि शाहि श्री अकबर प्रदत्त युगप्रधान पद समलंकृत श्री मत्खरतर गच्छाधिप भट्टारक.............. ....श्री जिनसिंह सूरि संयुतानां। सदा सुप्रसन्नं वदनारविन्द महाराजाधिराज श्री ".........विहारितं पुस्तकमिदं ज्ञान वृद्धयर्थं च श्री विक्रम पुरवरे तैश्च भाण्डागारे स्थापितम्। शिष्य..................

[हमारे संग्रहमें, चूहोंके काटे हुए पन्नवणासूत्र से]

---

*साहित्यकी रक्षा और अभिवृद्धि करनेके लिये सूरि महाराजने कई जगह ज्ञानभण्डार स्थापित किये थे । बीकानेर ज्ञानभण्डारमें रखी जानेका भी और कई पुस्तकोंकी प्रशस्तिसे जाना जाता है, जिसमें अनेक भक्त श्रावकोंने ग्रन्थ लिखवाके रखे थे। कई पुस्तकोंकी प्रशस्तिसे ज्ञात होता है कि आपने खम्भातके "ज्ञानभण्डार" में भी कई ग्रन्थ स्थापित किये थे।

कहा जाता है कि सूरि-महाराज ने जब शाहीदरबार में प्रवेश किया और बादशाह स्वागतार्थ सन्मुख आया उस समय मार्गके किसी नालेमें एक बकरी रखी गई थी। सम्राटने जब उन्हें आगे पधारनेकी विज्ञप्ति की। तब सूरिजी ने अपने योगबल से भूगर्भ-स्थित बकरीका स्वरूप जान, रुककर कहा "नालेमें जीव रहे हुए हैं उन्हें उल्लंघन कर नहीं आ सकते" सम्राटने कहा "कितने जीव है ?" सूरिजीने कहा "तीन जीव है" सम्राटने चकित होकर सोचा इसके नीचे एक ही बकरी रखी गई थी तीन कैसे हो सकती है। परन्तु जब उस नालेको उद्घाटन कर देखा गया तो तीन ही जीव मिले क्योंकि बकरीके सगर्भा होनेके कारण भूमिके संसर्गसे दो बच्चे उत्पन्न हो गए थे। इस आश्चर्यजनक घटनासे सम्राटके दिलमें सूरिजी के प्रति अत्यन्त श्रद्धा-भक्ति उत्पन्न हो गई ×।

इसी प्रकार एक समय सम्राटको सूरि-महाराजका भक्त देखकर ईर्षासे जले हुए काजीने सम्राटके समक्ष सूरिजीको नीचा दिखानेके लिए मंत्रबल से अपनी टोपी उड़ाई। सूरिजीने अपने बुद्धि-वैभवसे काज़ीके

×सं० १७१२ के लगभग लिखी हुई बीकानेर ज्ञानभण्डारकी एक पट्टावलीमें इस घटना का इस प्रकार भी उल्लेख है :—

"जियांरउ अतिशय देखी नइ पातिशाहइ युगप्रधान पदवी दीधी ते अतिशय कहइ छइ एकदा कियइ एके शाहि नइ कह्यउ एह गुरु ज्ञानी छइ कां एक ज्ञान पूछउ तरइ पातसाहइ पोतारइ सिंघासण नीचे परवर्ती गर्भवती एक छाली घालि नइ आप उपरि बइठा तरइ गुरां नइ पूछउ—मेरे नीचे क्या है ? गुरे लग्न लेइ नइ कह्यो एक नर छइ बि मादी छइ, शाहि काढी जोयउ छाली व्याइ, ज्ञान मिल्यो तरइ युग-प्रधान पदवो दीधी।

इसके अतिरिक्त और भी कई कवित्तोंमें तीन बकरियों के भेदको बतलानेका जिक्र है।

अभिप्राय को जानकर जैन-शासनकी अवहेलना न हो इसलिए टोपीको वापिस लानेके लिये मंत्र-शक्ति द्वारा रजोहरणको उसके पीछे छोड़ा। सूरि-महाराजके प्रेषित रजोहरणने काजीकी टोपीको ताडित करते हुए वापस लाकर काजीके मस्तक पर रख दिया। इससे काजीने विफल प्रयत्न होकर अपना ईर्षा अभिमान त्याग दिया *।

एक तीसरी चमत्कारिक घटना भी इस प्रकार कही जाती है कि आहार के लिये परिभ्रमण करते हुए सूरिजी के एक शिष्यने मौलवीके तिथि पूछनेपर अमावश्याके वदले भूलसे पूर्णिमा वतला दी। इस वाक्यपर मौलवी ने उपहास करते हुए उत्तर दिया "वाह महाराज! मैंने सुना है कि जैन-साधु झूठ नहीं वोलते, किन्तु यह तो सरासर झूठ है, अव देखेंगे कि किस प्रकार आज पूर्णिमाका चांद प्रकाशमान होगा!" उन साधुजीको भी अपनी भूल स्मरण हो आई, किन्तु वचन मुखसे निकले वाद पराया हो जाता है अतः उन्होंने उपाश्रयमें जाकर सूरि-महाराजसे सारा वृतान्त निवेदन किया।

इधर मौलवी साहवने सव जगह यावत् सम्राटके दरवार तक यह खवर पहुंचादी कि जैन साधुओंके कथनानुसार आज चाँद उदय होगा। तव सूरिजीने जैन-शासन की अवहेलना न हो इसलिये किसी श्रावक के यहांसे स्वर्णथाल मंगवा कर उसे आकाशमें उड़ा दिया। सूरिजीके प्रताप से वह थाल पूर्णिमाके चंद्रमाकी भान्ति सर्वत्र प्रकाश करने लगा। सम्राटने इसकी जांच करनेके लिये

* वीकानेर स्टेट लायब्रेरीमें जिनसागरसूरि शाखाकी एक १८ वीं शताब्दिमें लिखित पट्टावलीमें लिखा है कि जिनसिंहसूरिजीको वादशाहने करामात दिखाने को कहा तव उन्होंने कहा हम भिक्षु करामात क्या जानें! इतनेमें काजीने अपनी टोपी मंत्र शक्तिसे आसमानमें उड़ाई और जिनसिंह सूरिजी ने ओघेसे वापस आकर्षण की, इत्यादि।

अपने घुड सवार बारह बारह कोस तक भेजे किन्तु सर्वत्र प्रकाश ही प्रकाश हुआ सुन सम्राट अत्यन्त चकित और विस्मित हो गया*।

सूरिजीके लाहौर विराजने से अनेक धर्मकृत्य हुए। लोगोंके हृदयमें सद्भावनाका श्रोत प्रवाहित होने लगा। जैन धर्मकी अतिशय प्रभावना हुई।

---

* इस घटनाका हमें कोई प्राचीन प्रमाण न मिला। आधुनिक बीसवीं शताब्दिके प्रकाशित ग्रन्थोंमें—महो० रामलालजीगणि कृत "दादाजी की पूजा" और आचार्य श्रीजयसागर सूरिजी सम्पादित "गणधर सार्ध शतक-भाषान्तर" श्रीजिनदत्तसूरि ज्ञान-भंडार बम्बईसे प्रकाशित "श्रीजिनचन्द्रसूरि चरित्र" आदिमें इसका उल्लेख पाया जाता है। एवं चित्रोंमें भी इस चमत्कारिक घटनाका भाव चित्रित मिलता है। खतरतर-गच्छकी एक पट्टावलीमें श्रीजिनप्रभसूरिजीके सम्बन्धमें "अम्मावश्या पूर्णिमा कृता येन द्वादश योजनं यावत् चन्द्रोद्योतो जातः" लिखा है।

उपरोक्त तीनों चमत्कारिक घटनाओं सहित सूरिजी के अकबर मिलनके प्राचीन चित्र, बीकानेर ज्ञान भंडार, श्रीपूज्यजीके संग्रह, उ० जयचन्दजीका ज्ञान मंडार, यति मुकुन्दचन्द्रजी के पास, बाबू पूरणचन्द्रजी नाहरके संग्रहमें और बीकानेर दुर्गान्तर्गत 'गजमन्दिर' में पाये जाते है। वह चित्र "श्रीजिन-कृपाचन्द्रसूरि ज्ञानभण्डार" इन्दौर की तरफसे छप भी चुका है।

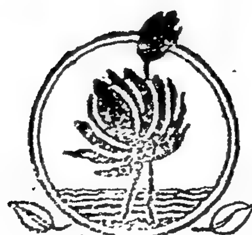
बाबू पूरणचंद्रजी नाहर M.A.B.L. के यहाँ अकबर मिलन समय का सूरिजीका प्राचीन चित्र है उसमें उपरोक्त तीसरी चमत्कारिक घटनाका भाव न होकर उसके बदलेमें उस चित्रमें एक भैंसा चित्रित है जो कि श्री जिनप्रभ सूरिजीके विषयमें "कियो महिष मुखि वाद नयर पिक्खइ, नरनारी।" इस चमत्कारका स्मृति सूचक भाव जाना जाता है हमारे समझ में "अम्मावस का चन्द्रोदय" और "महिष मुख वाद" का चमत्कार जिनप्रभसूरिजीसे सम्बन्ध रखनेवाला ही है। उन चमत्कारों की प्रसिद्धि होने के कारण संभवतः सूरिजी के चित्रके साथ लगा दिये गये हों। उपा० जयचन्द्रजी गणिके पास जो चित्र है उसमें तो चारों ही चमत्कार सूरिजीके चित्रमें चित्रित हैं।

वहांसे विहार करके सूरि-महाराज हापाणइपधारे। सं०१६५० का चातुर्मास वहीं किया। एक दिन रात्रिके समय उपाश्रयमें चोर आगए। किन्तु उनके लिये वहां कौनसा धन-माल रखा था! अगर था तो केवल साधुओं के पढ़ने के ग्रंथ और भिक्षाके निमित्त काष्टके पात्र, किन्तु चोरोंने तो उन्हें भी नहीं छोड़ा, पुस्तकें बटोर कर चम्पत होने लगे। परन्तु सूरिजीके योग-बलसे चोर दिग्मूढ़ और अन्धे हो गए और पुस्तकें वापिस आ गईं।❀

इस चमत्कार पूर्ण घटनासे सब लोग सूरि-महाराजके तपोबल की भूरि-भूरि प्रशंसा करने लगे। सूरिजीके "हापाणा" विराजने से वहां अधिकाधिक धर्म-ध्यान होने लगे।

❀ विहार पत्र नं० १ में "रातइ चोर पइठा पुस्तक सर्व लेइ गया परं अन्धा थया, पुस्तक आया पाछा।"

बीकानेरके ज्ञान भण्डारकी एक पट्टावलीमें :—हापाणि ग्रामे ध्यान बलइ जियइ चोर निष्तेज कीधा।



नवां प्रकरण



सम्राट पर प्रभाव



सम्राट अकवर सूरि-महाराजके परम भक्त बन चुके थे। उनके हापाणामें चातुर्मास करनेके समय भी सम्राट उन्हें निरन्तर स्मरण किया करते थे। सूरिजीके आदेशसे परम गीतार्थ उ० श्री जयसोमजी आदिने सं० १६५० का चातुर्मास भी लाहौर ही किया ❀। वे वहुधा शाही दरवारमें जाया करते, सम्राट उनके साथ अनेक प्रकारकी धर्म-चर्चा करके ज्ञान प्राप्त किया करते थे। वे समय-समयपर उनसे सूरि-महाराजके सुख शाताके संवाद पूछकर सुखी होते थे।

चातुर्मास पूर्ण हो जानेके पश्चात् सम्राटने सूरि महाराजको लाहौर पधारनेके लिए विनीत-आमन्त्रण भेजा। सम्राटके आग्रहसे सूरिजी लाहौर पधारे। सं० १६५१ का चातुर्मास भी उन्होंने वहीं किया। इनके समागम से सम्राट पर अलौकिक प्रभाव पड़ा था। मेड़ता के "नवामन्दिर" शिलालेखों*से ज्ञात होता है कि सूरिजीके

❀ जयसोमजीने इसी चातुर्मासमें विजयादशमीके दिन "कर्मचन्द्र मंत्रि वंश प्रवन्ध" नामक संस्कृत पद्य ग्रंथ रचकर पूर्ण किया था।

* श्री अकवर साहि प्रदत्त युगप्रधानपद प्रवरैः प्रतिवर्षाषाढ़ीयाष्टाह्निकादि पाण्मसिकामारि प्रवर्त्तकैः। श्रीपंत (? स्तंभ) तीर्थोदधिमीनादि

उपदेश से सम्राट ने गत प्रकरण में उल्लिखित प्रति वर्ष आषाढ़ी अष्टान्हिका अमारि खम्भातके दरियाके जलचर जीवों की रक्षा और युगप्रधान पद प्रदानके अतिरिक्त और भी कई महत्त्वपूर्ण कार्य किये थे, वे इस प्रकार हैं:—

(१) प्रतिवर्षमें सब मिलाकर छः महीनेपर्य्यन्त अपने समस्त राज्योंमें जीवहिंसानिषेध।

(२) शत्रुञ्जय तीर्थका कर-मोचन।

(३) सर्वत्र गौ-रक्षाका प्रचार।

जैन दर्शन के अहिंसा-तत्वका सूक्ष्म स्वरूप सूरिमहाराज ने सम्राट को भली भांति बतला दिया। जिसके प्रभाव से सम्राट का हृदय इतना कोमल और दयार्द्र हो गया × कि उन्हें जीव-हिंसाका नाम सुनना भी असह्य-सा हो गया और मांस-भक्षण के प्रति उन्हें घृणा हो गयी थी। इस बातको सम्राट जहाँगीर, अपनी 'आत्म-जीवनी' में अपने राज्यारोहणके पश्चात् प्रकाशित १२ आज्ञाओंमेंसे ११वीं आज्ञा इस प्रकार लिखते हैं:—

जीवरक्षकैः। श्री शत्रुञ्जयादि तीर्थकरमोचकैः। सर्व्वत्र गोरक्षाकारकैः पंचनदी पीर साधकैः। युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरिभिः। आचार्य श्री जिनसिंहसूरि श्री समयराजोपाध्याय वा० हंस प्रमोद वा० समयसुन्दर वा पुण्यप्रधानादि साधुयुतैः॥

[श्री जिनविजय जी संपादित 'प्राचीन जैन लेख संग्रह' लेखाङ्क ४४३.]

× सम्राट अपने दयालु विचार सूरिजीको दिये हुए फरमान पत्रमें इस प्रकार प्रकट करते हैं:—

"असल बात तो यह है कि जब परमेश्वरने आदमीके वास्ते भांति-भांतिके पदार्थ उपजाये हैं, तब वह कभी किसी जानवरको दुःख न दे और अपने पेटको पशुओंका मरघट न बनावे।"

अर्थात्:—मेरे जन्ममास में, सारे राज्य में मांसाहार निषिद्ध रहेगा। वर्षमें एक-एक दिन इस प्रकारके रहेंगे, जिसमें सर्व प्रकारकी पशुहत्याका निषेध हो। मेरे राज्याभिषेकका दिन अर्थात् बृहस्पतिवार और रविवारके दिन भी कोई मांसाहार नहीं कर सकेगा। क्योंकि संसारका सृष्टि-सर्जन सम्पूर्ण हुआ था उस दिन किसी भी जन्तुका प्राणघात करना अन्याय है। मेरे पिताने ग्यारह वर्षोंसे अधिक समय तक इन नियमोंका पालन किया है और उस समय रविवारके दिन उन्होंने कदापि मांसाहार नही किया। अतः मेरे राज्यमें मै भी उन दिनोंमें जीवहिंसा निषेधात्मक उद्घोषणा करता हूं।

सम्राटके जीवहिंसा निषेध करनेका सारा श्रेय जैन साधुओंके समागम का ही है, यह वात प्रसिद्ध अंग्रेज इतिहासकार श्री विंसेन्ट ए० स्मिथ अपनी पुस्तक Akbar The Great Mogal के सन् १६१७ के संस्करणके पृ० १६८ पर लिखते हैं:—

"Akbar's action in abstaining almost wholly from eating meat and in issuing stringent prohibitions, resembling those of Ashoka, restricting to the narrowest possible limits the destruction of animal life, certainly was taken in obedience to the doctrines of his Jain Teachers. The infliction of capital penalty on a human being for causing the death of an animal, was in accordance with the practice of several famous ancient and Buddhist and Jain Kings. The regulations must have inflicted much hardship on many of Akbar's subject and especially on the Mahammadans."

करना, एवं अशोक के समान क्षुद्र-से-क्षुद्र जीवहिंसा का निषेध करने के लिए सख्त आज्ञाओं का जारी करना, अपने जैन गुरुओं के सिद्धांत के अनुसार आचरण करने ही के परिणाम थे। हिंसा करने वाले मनुष्यों को कड़ी सजा देना यह कार्य प्राचीन प्रसिद्ध बौद्ध और जैन सम्राटों ही के अनुसार था। इन आज्ञाओं से अकबर की प्रजा में से बहुत लोगों को और विशेष रूप से मुसलमानों को बहुत कष्ट हुआ होगा।

फिर भी डा० विसेन्ट स्मिथ अपनी पुस्तक "अकबर" के पृष्ठ नम्बर ३३५ में स्पष्टतया लिखते हैं कि:—

"He cared little for flesh food, and gave up the use of it almost entirely in later year's of his life, when he came under Jain influence."

अर्थात्—"मांसाहार पर सम्राट की बिल्कुल रुचि नहीं थी और अपने जीवन के अन्तिम भाग में तो जब से वह जैनों के समागम में आया, तभी से उसने उसको सर्वथा ही त्याग कर दिया।"

बाबू पूरणचन्द्रजी नाहर M. A. B. L. M. R. A. S. महोदय के संग्रहस्थ एक गुटके में प्राचीन कवित्त इस प्रकार लिखा मिला है:—

आदरियो चडोजती ताइ अकबर, लोक हुआ सहु लवै लवै।
गढजिणि जवै कीजती गायां, जीवनके को तठे जवै ॥१॥
पति असुरां लागौ आइ, पाए कवे चरणा दिसि करि।
मंडलि तियांले सुरहे मारता, मुरगा हीटला तेथ मर ॥२॥
एहवो धरम आदरे अकबर, जिण धर्म देखी वांवड़ो जंत।
भोजन किवला तिके भखंता, पर मंस खावा लियो परत्त ।'३॥

भावार्थ—सूरिजी को वन्दनार्थ सम्राट सामने गए उनके साथ उनकी प्रजा और अनुगामी अमीर उमराव भी थे। गुरु के चरणों में सम्राट ने दोनों हाथ जोड़ कर प्रणाम किया। उनके उपदेश से सम्राट जैन धर्म का इतना आदर करने लगा कि उसके फलस्वरूप जिस किल्ले में गायें कत्ल होती थी, मुर्गे, हिट्ले आदि जानवर मारे जाते थे अब उनका कत्ल होना बन्द हो गया। इतना ही नहीं सम्राट ने मांस भक्षण जो पहले करता था उसका त्याग कर दिया।

सम्राट जहांगीर कथित शेष ग्यारह वर्ष से अधिक समय तक और डा० विन्सेन्ट स्मिथ का अपने जीवन के अन्तिम भाग के कथन से स्पष्ट है कि सम्राट के हृदय में इतने गहरे दया-भाव होने का प्रबल कारण जिनचन्द्रसूरिजी और उनके शिष्य श्रीजिनसिंहसूरिजी के धर्मोपदेश ही हैं। क्योंकि सं० १६६२ में अकबर का देहान्त हुआ और सं० १६४९ से अकबर की सूरिजी के सत्समागम का लाभ मिला। सूरिजी सं० १६५१ में अकबर के पास ही थे। इससे ऊपर के उभय कथनों की परिपुष्टि होती है।

इस कथन की पुष्टि करने वाले और भी बहुत से प्रमाण मिलते हैं। डा० स्मिथ ने आगे इस प्रकार लिखा है :—

"But the Jain holy men undoubtedly gave Akbar prolonged instruction for years, which largely influenced his actions and they secured his assent to their doctrines so for that he was reputed to have been converted to Jainism.

—"Jain Teachers of Akbar"

अर्थात्—मगर जैन साधुओं ने वर्षों तक अकबर को उपदेश

दिया था। अकबर के कार्यों पर उस उपदेश का बहुत प्रभाव पड़ा था। उन्होंने अपने सिद्धान्त यहां तक मनवा दिये थे कि लोग सम्राट को जैन समझने लग गये थे। लोगों की यह समझ केवल अनुमान से ही नहीं थी किन्तु उसमें वास्तविकता भी थी। कई विदेशी मुसाफिरों को भी अकबर के व्यवहारों से यह निश्चय हो गया था कि अकबर जैन सिद्धान्तों का अनुयायी था।

इसके सम्बन्ध में डा० स्मिथ अपने "अकबर" नामक ग्रंथ में एक मार्के की बात प्रगट करते हैं। उसने उक्त पुस्तक के २६२ वें पृष्ठ में पिनहेरो (Pinheiro) नाम के एक पोर्चुगीज पादरीके पत्रके उस अंश को उद्धृत किया है जो उपर्युक्त कथन को प्रमाणित करता है। यह पत्र उसने लाहौर से ता० ३ दिसम्बर सन् १५९५ को लिखा था, जो इस प्रकार है :—

He follows the sect of the Jain (Vertei).

अर्थात्—अकबर जैन सिद्धान्तों का अनुयायी है (उसने कई जैन सिद्धान्त भी उस पत्र में लिखे हैं)।

इस पत्र के लेखन का समय सं० १६५२ (१५९५) है। करीब उसी समय श्रीजिनचन्द्रसूरिजी महाराज, श्रीजिनसिंहसूरिजी आदि लाहौर में अकबर के पास थे। अतः अकबर को जैन धर्मानुयायी कहलाने का श्रेय सूरिजी को ही है। क्योंकि यह प्रभाव सूरिजी के सतत धर्मोपदेश का ही है।

प्रोफेसर ईश्वरीप्रसाद अपनी पुस्तक A short History of Muslim Rule in India प्रथम संस्करण के पृष्ठ नं० ४०६ पर लिखते हैं :—

"The Jain teachers who are said to have



युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरि और सम्राट अकबर (लाहोर)

greatly influenced the emperor's religious out-look were Hiravijaya suri, vijayasena Suri, Bha-nuchandra Upadhya-ya and Jinchandra From 1578 onwards one or two Jain teachers always remained at the court of the Emperor. From the first he received instructions in the jain doctrine at Fatehpur and received him with great courtesy and respect. The last (i e. Jinchandra) is reported to have converted the emperor to Jainism .. ..Yet the Jains exercised a far greater infuence on his babits and made of life than the jesuits..............................The tax on pilgrims to the Shatrunjaya hills was abolished and the holy places of the Jains were placed under his control. In short, Akbar's giving up of meat, the prohibition of injury to animal life were due to the influence of Jain teacher's.

अर्थात्—वे जैनगुरु जिनके विषय में किम्वदन्ती है कि उन्होंने सम्राट के धार्मिक विचारों पर भारी प्रभाव डाला, हीरविजयसूरि, विजयसेन सूरि, भानुचन्द्र उपाध्याय और जिनचन्द्र थे। सन् १५७८ के पश्चात् एक या दो जैन गुरु सम्राट की राज सभा में सदैव रहा करते थे। प्रारम्भ से उसने (अर्थात् सम्राट अकवर ने) जैन सिद्धांतों की शिक्षा फतहपुर में प्राप्त की थी और जैन गुरु को वह अत्यन्त श्रद्धा एवं आदर के साथ स्वागत करता था। कहा जाता है कि जिनचन्द्र सूरि ने सम्राट को जैन-धर्म में दीक्षित कर लिया था........ ....तिसपर भी जैन लोगों का सम्राट के आचरण और चालढाल जैसुएट लोगों की अपेक्षा वहुत अधिक प्रभाव था.....................। पर्वत गों पर कर हटा दिया गया था और

जैनों के तीर्थ-स्थान सम्राट की संरक्षता में रखे गये थे। संक्षेप में मांसाहारपरित्याग और जीव-हिंसा का विरोध जैन गुरुओं के प्रभाव के द्वारा ही हुए थे।

साहित्य महारथी श्रीमान् मोहनलाल दलीचंद देसाई B. A. L. L. B. (Vakil High-Court, Bombay) अपनी पुस्तक "जैन साहित्य नो इतिहास पृ० ५५६ में भी इस प्रकार लिखते हैं:—

"तेमज खरतर गच्छ नांजिनचन्द्रसूरि आदि ए सम्राट अकवर पर धीमे-धीमे उत्तरोत्तर विशेष प्रमाण मां-प्रभाव पाड़ी तेने जीव दया ना पूरा रंगवालो कर्यो हतो तेमां किञ्चत् मात्र शक नथी ए वात नी साक्षीते वादशाहे वाहर पाड़ेला फरमानो पर थी, तेमज अवुल-फजलनी 'आइन-इ-अकवरी', वदाऊनीना "अल-वदाउनि", 'अकवर नामा' वगेरे मुसलमान लेखकोए लखेला ग्रन्थोपर थी स्पष्ट जणाय छे।

केवल अकवर पर ही नहीं, किन्तु उनके पुत्र सलीम आदि पर भी सूरिजीका प्रभाव यथेष्ट था। उनका सारा परिवार सूरि-महाराजका परम भक्त हो गया था। सम्राटके सभासद गण आदि पर भी सूरिजीका खासा प्रभाव था। जिनमें शेख अवुलफजल * आज़म

---

* अवुलफजलका जन्म सं० १५५१ ई० (हि० सं० ९५८ के मोहर्रम की छठी तारीखको) में हुआ था। सन् १५७४ में वह अकवर के दरवारमें दाखिल हुआ। धीरे २ पद वृद्धि होती गई। ई० स० १६०२ में उसे पांच हजारीका मनसव मिला। सम्राट उसके शान्तस्वभाव, निष्कपटवृत्ति और स्वामी-भक्ति पर विशेष स्नेह और विश्वास रखते थे। अवुलफ़जल अकवरका सर्वस्व था, इस कथनमें भी अतिशयोक्ति नहीं होगी।

खान, खानखाना अब्दर्रहीम× एवं नवाव मुकुरवखान आदि विशेप उल्लेखनीय हैं। इसका उल्लेख तत्कालीन सूरिजीकी गहूंलियों में पाया जाता है÷।

सं० १६१७ में पाटणमें धर्मसागर नामक तपागच्छीय उपाध्यायको ८४ गच्छ ने एकत्र होकर संघ से वहिष्कृत किया और उनके तत्व तरङ्गिणी वृत्ति* आदि ग्रंथोंको अप्रमाणिक ठहराया और असभ्य ग्रंथोंको जलशरण कर दिये गये थे। एवं धर्मसागरने उस दुष्कृत्य का सङ्घके समक्ष "मिच्छामि दुक्कड़म्" दिया। यह सब वर्णन हम चौथे प्रकरणमें कर चुके है। इतना होनेपर भी सागरजीने अपनी कुटेव न छोड़ी, क्योंकि जिसका जैसा स्वभाव और अभ्यास हो जाता है, उसे छोड़ना असाध्य नहीं तो दुःसाध्य अवश्य ही होता है। किसी राजस्थानी कविने क्या ही अच्छा कहा है:—

× खानखाना का जन्म सं० १६१३ मार्गशीर्ष शु० १४ को हुआ था इसका पूरा नाम 'खानखानान मिर्जा अब्दुर्रहीम' था, उसके पिताका नाम वैरम खाँ था। इसके गुजरात विजय करने पर सम्राटने प्रसन्न हो कर खानखानाका खिताव दिया और पांच हजार फौजका सेनापति बनाया। इसके विपय में विशेप देखो "खानखाना-नामा" और आइन-ए-अकबरी।

÷ अवलियउ अकबर, तासु अंगज, सबल शाहि सलेम।
शेख अबुल, आजम, खानखाना, मानसिंह सु प्रेम ॥ १ ॥
गच्छपति गाइयइ जिनचन्द सूरि मुनि महिराण।

[समयसुन्दर कृत जिनचन्द सू० गीत]

* आ तत्वतरंगिणी वृत्ति नी सं० १६१७ नी लिखित प्रत पाटण ना वाड़ी पार्श्वनाथ भण्डार डा० १५ मांछे तेमां जणाव्युं छे के आ ग्रंथ नो कर्ता सर्वगच्छे सूरिओ थी जिन शासन मां थी उत्सूत्र प्ररुपणा करवा माटे वहिष्कृत करेल धर्मसागर छे।

[जैन साहित्य नो संक्षिप्त इतिहास पृ० ५८२]

"ज्यांरा पड़्या स्वभाव क जासी जीय सुं

नीम न मीठा होय सींचो गुड़ घीय सुं ॥

यह कहावत सागरजी पर पूर्णतः चरितार्थ हुई। सं० १६२९ में उन्होंने फिर "प्रवचन-परीक्षा" नामक विषैला और साहित्यमें कलङ्कभूत ग्रन्थ निर्माण किया। जिसमें अनेक जैन सम्प्रदायोंका खण्डन और केवल अपनी आचरणाको सत्य वतलाने का विफल प्रयत्न किया। इस ग्रन्थके सिवाय और भी उन्होंने इसी वर्षमें 'इर्यापथिकी षट्त्रिंशिका" और सं० १६२८ में "कल्पकिरणावली" नामक वृत्ति वनाई। कहना न होगा कि सागरजी ने अपने स्वभावानुसार इन ग्रन्थोंको विकृत और खण्डनात्मक शैलीसे ही रचा था। अपनी विद्या के अभिमान में उन्मत्त होकर भयङ्कर असत्य आक्षेपोंके साथ असभ्य और अति कटु-वचनोंसे श्री जिनदत्त सूरिजी आदि युग-प्रधान प्रभावक महापुरुषोंके अवरणवाद गाए।

सुप्रसिद्ध साहित्य-सेवी विद्वान मुनि श्री विद्याविजयजी "ऐतिहासिक रास संग्रह भा० ४"में उत्सूत्र कंद-कुद्दाल ग्रन्थ को सं० १६८३ की लिखित प्रति के पुष्पिका लेख से धर्मसागरजीका वनाया हुआ न होकर सदयवच्छ श्रावक के भण्डार से संप्राप्त प्राचीन ग्रन्थ है। ऐसी अपनी सम्मति प्रकट करते हैं। लेकिन दर्शनविजयी कृत "विजयतिलकसूरि रास" आदिके वाक्योंपर विचार करने से उक्त ग्रन्थ धर्मसागरजी का ही वनाया हुआ सुनिश्चित है। सं० १६८३ की प्रशस्ति लेखकने धर्मसागरजीके पक्ष या वहकावेमें आकर ही उस ग्रन्थको प्राचीन प्रमाणित करनेका दुस्साहस किया ज्ञात होता है और सागरजी के स्वभाव पर मनन करते हुए यह वात विशेष सम्भव पर है।

धर्मसागरजीके विषयमें विशेष जाननेके लिये देखें (१) धर्मसागर गणि रास और श्री जिनविजयी का "महोपाध्याय धर्मसागर" नामक लेख (आत्मानन्द प्रकाश पु० १५) और उनकी उत्सूत्र-प्ररूपणाके लिए देखो तपागच्छीय कृत निम्नोक्त ग्रन्थ :—

सागरजी का 'मिथ्या दुष्कृत' भी कल्पसूत्रवृत्तिमें कुम्भारके "मिच्छामि दुक्कडम्" कथानकके सदृश्य ही हुआ, उनकी इस प्रवृत्ति से जैन शासनमें द्वेषाग्निकी ज्वाला प्रज्वलित हो उठी जिसका कुफल आज भी गच्छोंके पारस्परिक वैमनस्य रूप में भोगा जा रहा है। अन्य गच्छवालोंको इससे विशेष क्षति नहीं हुई किन्तु तप-गच्छ वालोंके कितने ही विद्वानोंने उनका पक्ष लिया जिसके परिणाम स्वरूप इस गच्छकी संगठन शक्ति बहुत क्षीयमान हो गई और आपसी द्वेष इतना अधिक वृद्धिगत हुआ जिससे 'आनन्द सूर' और 'देव सूर' के नामसे सदाके लिये गच्छ-भेद हो गया।

हमारे चरित्रनायक श्रीजिनचन्द्रसूरिजी ने सम्राट के सामने उपस्थित विद्वत् मंडली में उपरोक्त प्रवचन-परीक्षादि ग्रन्थों की निःसारता और असभ्यता को सिद्ध किया। विद्वानों ने भी उसे अप्रमाणित और अमान्य [illegible]णित किया +।

(१) कुमुताहि विष जांगुली (२) षट्त्रिंशजल्प विचार (३) रत्न हितोपदेश (४) बारहबोल रास (५) सोहम कुल पट्टावली (६) कल्प सुबोधिका वृत्ति (७) विजयतिलकसूरि रास (८) षट्त्रिंश मध्यस्थ जल्प विचार (९) लघुषट्त्रिंश जल्प विचार (१०) १०८ बोल सझाय (११) छत्तीस बोल बारह बोल संग्रह (पाटण) (१२) केवली स्वरूप सझाय (१३) विजयदान, विजयहीर और विजयसेनसूरिके ७–१२ और १० बोल इत्यादि।

खरतर गच्छवालों ने अपने गच्छकी आचरणाको सिद्धान्त युक्त प्रमाणित सिद्ध करते हुए धर्मसागरजी के उत्सूत्रों का खण्डन रूपमें (१–२) जयसोमजी कृत प्रश्नोत्तर द्वय (२६–१४१ प्रश्न), (३) गुणविनयजी कृत कुमति मत खण्डन (सं० १६६५), (४) उन्हीं की ५१ बोल चौपइ सवृत्ति तथा (५) लघु तपोट विचार सार (६) धर्मसागर खण्डन आदि ग्रन्थ बनाए।

+ *वितथतया श्रीशाहिराज समक्षं निराकृत (दूरीकृत) कुमति कृतोत्सूत्राय कुवचनमय (असभ्य संजनमय) प्रवचन परीक्षादि व्याख्यान विचारैः।*

चातुर्मास पूर्ण हो जानेके पश्चात् सूरिजी ने लाहौरसे विहार किया। उस समय उनके साथ बहुतसा संघ था। उसके साथ सूरि-महाराजने गुरु-मुकुट× स्थानमें मंत्रीश्वरकर्मचन्द्रके बनवाए हुए श्रीजिनकुशलसूरिजी के स्थानकी यात्रा की जिसका उल्लेख रत्न-निधानजी कृत 'जिनकुशल सूरि स्तवन' में इस प्रकार है:—

मतिसागर कर्मचन्द्र मन्त्रीश्वर मग्गिए दुख काटइ।
थिरथानक गुरु पगला थापी महिमण्डलि जस खाटइ ॥३॥
युगप्रधान जिनचंन्द्र महामुनि जिनमाणिक सूरि पाटइ।
श्री लाहौर सकल संघ सेती जातरा करत सुहु घाटइ ॥४॥

वहांसे ग्रामानुग्रामविचरते हुए सूरि-महाराज हापाणइ पधारे। वहांके संघके विशेष आग्रहसे उन्होंने सं० १६५२ का चतुर्मास हापाणइ किया। सूरिश्वरके विराजनेसे धर्म-जागृति एवं प्रभावना-उन्नति अच्छी हुई।

[सं० १६६२ में प्रतिष्ठित श्रीबीकानेर, ऋषभदेवजीकी प्रतिमापर लेख]
"वली तपांसु घणीवार पोथी नइ मामलइ पातस्या अकबर हजूरि पोथी खोटी करी जय पाम्या।"

(जिनकृपाचन्द्रसूरिज्ञान-भण्डार पट्टावली)

× यह गुरु-मुकुट स्थान लाहौरके समीप ही विद्यमान है। दादाजी के चरणोंके लेखके विषयमें श्रीमान् प्रो० बनारसीदास जैन एम० ए० से ज्ञात हुआ कि वे अक्षर घिस जानेके कारण पढ़े नहीं जाते।

दसवां प्रकरण

पंच-नदी साधना और प्रतिष्ठाए'



होरमें सम्राट ने श्रीजिनदत्तसूरि जी के चरित्र को श्रवण करते हुए पंच नदी के पीरोंके साधन प्रसंगसे विशेष चमत्कृत हो सूरिजीको भी साधन करनेके लिए विनती की थी। सम्राटके कथन* एवं संघकी उन्नति के हेतु सूरिजी ने पंच नदी साधन करनेका विचार किया। उस प्रसंगकी विशेष अनुकूलता प्राप्तकर आपने वहांसे विहार किया। ग्रामानुग्राम में धर्म प्रभावना करते हुए संघ के साथ मुलतान पधारे। सूरिजीका आगमन सुनकर नगरके सारे लोग जिनमें खान, मल्लिक और सेख

---

* पाटणके श्री वाड़ी पार्श्वनाथ मन्दिरके शिलालेख (सं० १६५३) में इस प्रकार लिखा है।

श्री जिनमाणिक्यसूरिः तत्पट्टालङ्कार सार दुर्व्वार वादि विजयलक्ष्मी शरणं पूर्व क्रिया समुद्धरण स्थान-स्थान प्राप्त जय प्रतिदिन वर्द्धमानोदय सदय सन्नंय त्रिभुवन जन वशीकरण प्रवण प्रणव ध्यानोपशोभित पवित्र सूरि मन्त्र विहित भव दूरि कृत सकल वादिस्मय निज पाद विहार पाविता वनितल अनुक्रमेण संवत् १६४८ श्री स्तंम्भ तीर्थ चतुर्मासक स्थान समुद्भूता मित महिम श्रवण दर्शनोत्कंटित जलालुदीन प्रभु पातिसाहि श्रीमदकब्बर समाकारण मिलन स्वगुण गण तन्मनोनुरञ्जन समासादित सकल भूतलाखिल जन्तु सुखकारि

आदि भी आये थे। सूरिजीके दर्शनसे हर्षित होकर खूब धूमधामसे उनका नगर प्रवेशोत्सव किया गया। धर्म प्रभावना करते हुए सूरिजी वहांसे पंच नदीके तटपर चन्दुवेली पत्तन में पधारे। इस प्रवासमें सूरिजीको सम्राटकी आज्ञा से सर्वत्र अनुकूलता रही। स्थान-स्थानपर आपको आदर, सम्मान मिला। अभय दानादि धर्म-तत्वोंका अच्छा प्रचार हुआ ×। सिन्धु देश और पंजाव प्रान्तमें आपको प्रशस्त कीर्ति फैली एवं जैन धर्म की उन्नति और महती वृद्धि हुई।

सं० १६५२ माघ शु० १२ रविवार पुष्य नक्षत्रके दिन शुभ मुहूर्त में आयम्बिल और अष्टम तप पूर्वक निश्चल ध्यानके साथ नौका में वैठकर पंच नदियोंके संगम स्थानमें पधारे। वहांपर पांचों

आषाढ़ाष्टाहिकामारि फुरमान श्री स्तम्भ तीर्थ समुद्र मीन रक्षण फुरमाण तत्प्रदत श्री सत्तम युग-प्रधान पद धारक तद्वचनेन च नयन सर रस रमा (१६५२) संवति माघ सित द्वादशी शुभ तिथौ अपूर्व पूर्व गुर्व्वाम्ना : साधित पंच नदी प्रगटी कृत पञ्च पीर प्राप्त परम वरंत दादि। विशेप श्री संघोन्नतिकारके विजयमान गुरु युगप्रधान श्री १०८ श्रीजिनचन्द्रसूरीश्वराणां..............।

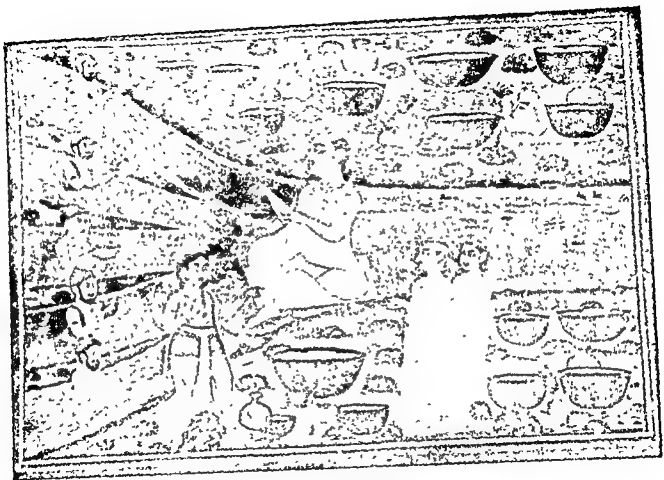
हमें इस शिलालेखका फोटू खरतरगच्छनायक श्रीजिनकृपाचन्द्र सूरिजीके विद्वान शिष्य प्रवर्त्तक मुनिराज श्री सुखसागरजी से मिला और इसकी नकलें गणाधीश श्री हरिसागरजी और विद्वद मुनिवर्य्य श्री रत्न मुनिजीसे प्राप्त हुई है।

हुकमि श्री शाहि नइ पंच नदी साधि नइ, उदय कियो संघ नौ सवायो।
संघपति सोमजी सुणो मुझ. वीनति, सोय जिणचंद गुरु आज आयो।।

[लब्धिकल्लोल कृत गहूंली]

× ठामि ठामि हुकम श्री शाहि नै, कहतां धर्म विचार।
अभयदान महियलि वरतावतां, संघ उदय जयकार।।५।।

[पद्मराज कृत पंच नदी साधन-गीत]



युगप्रधानाचार्य श्री जिनचन्द्र सूरिना पंचनदी के साधन का दृश्य

नदियें अपने तीव्र वेगसे प्रवाहित होती हुई आ मिली थीं* । वहां सूरिजी के निश्चल ध्यानसे नौका स्थम्भित हो गई। आपश्री परम-पवित्र देवाभिष्टित सूरि-मंत्र का ध्यान करने लगे। आपके निर्मल ध्यान एवं शील तपादि सद्गुणोंसे आकृष्ट हो, माणिभद्रादि यक्ष, पंच नदीके पांच पीर, खोड़ियादि क्षेत्रपाल आपकी सेवामें उपस्थित हुए, और धर्मोन्नतिमें सहाय्य करने का वचन दिया।

सूरिजी पंच नदी (के अधिष्ठाता देवोंका) साधन× करके

---

* पंच नदी पांचे पीर साध्या, खोड़िया क्षेत्रपाल।
जल वहै जेथ अगाध, प्रवहण थांभिया तत्काल ॥

[समयसुन्दर कृत जिनचन्द्र० गीत]

पंच नदी साधनेकी विधिकी तत्कालीन लिखी हुई प्रति (प० ३) बीकानेर में श्रीपूज्यजी श्रीजिनचरित्रसूरिजी के संग्रह में है, उसकी नकल हमारे पास है, उसमे पांच पीरों के नाम इस प्रकार लिखे हैं :—

(१) खदिर (२) कान्ह (३) लंजा (४) सोमराज (५) खंज।

ये पीर क्रमशः इन नदियोंके अधिष्ठाता हैं :—

१ विहत्य (झेलम), २ राव्य (रावी), ३ चिन्नाह (चिनाव), ४ व्याह (व्यास) ५ सिन्ध।

इन पांचों के सिवाय बीबीरास्नी और माणिभद्र यक्ष खोड़िया क्षेत्रपाल को भी साधा जाता है।

सूरि महाराजका पंच नदी साधते हुए भावका सुन्दर चित्र बाबू पूरण-चन्द्रजी नाहर के संग्रह में है।

× पंचनदी की साधना संघ की समुन्नतिके लिये श्रीजिनदत्तसूरिजी ने सर्व प्रथम की थी। उनके पश्चात जिनसमुद्रसूरिजी और जिनमाणिक्य सूरिजी के साधन करने का उल्लेख पट्टावलियोंमें मिलता है। पंच नदी साधना के विषय में श्रीजिनविजयजी सम्पादित 'खरतरगच्छपट्टावली संग्रह' (पट्टावली नं० ३) में कुछ विशेष ज्ञातव्य मिलता है। यद्यपि इस साधनामें अप्पकाय के

प्रातःकाल पत्तनमें पधारे। वाजित्र वजने लगे, नगरमें अपार आनन्द छा गया। भक्त श्रावकोंने याचकों को मुंह मांगा दान दिया। घोरवाड़ कुलोत्पन्न शाह नानिगके सुपुत्र राजपाल ने अपने द्रव्यका सदुपयोग कर, सुयश प्राप्त किया। सूरिजी वहां से उच्चनगर आए। वहां शांतिदायक सोलहवें तीर्थङ्कर श्री शांतिनाथजी के दर्शन, वन्दन करके "देरावर" पधारे। प्रकट प्रभावी दादा साहेब श्री जिनकुशलसूरि जी के स्वर्गस्थान में चमत्कारि गुरु चरणों के दर्शन किये।

जीवों की विराधना का प्रश्न है तथापि कारणवश नदी पार करने की जिनागमों में आज्ञा है। इस प्रश्न का विशेष स्पष्टीकरण उ० जयसोमजी ने अपने 'प्रश्नोत्तर ग्रन्थ' के प्रश्न नं० १३६ के उत्तर में इस प्रकार किया है :—

"जे खरतर गच्छि पंचनदी सावै छै वली क्षेत्रपाल योगिनी नदी प्रमुख धर्मार्थी नइ साधवा नथी कह्या ते पिण साधै छै वली इहां घणी जीव विराधना था(य)इ छै ते स्यु ? तत्रार्थः—श्रीसंघ नइ समाधान निमित्ति श्रीयुगप्रधान श्रीजिनदत्तसूरिजी ए ५ नदीयां ना देवता सूरि-मंत्र नइ गुणसे तथा तप संयमइ संतोष्या हूँता देवताइ पिण सन्तुष्ट थए थके वाचा लीधी हूंती जे इणइ देश मांहि तुमारा गच्छनायक आवै ते इहां ५ नदी नइ एकठइ मेल थए सूरि मंत्र जाप करै, अम्हे पिण संघ ना विघ्न वारीस्यां एतलै वर दीवै थके श्रावक श्राविकाए पुणि तेह देवता ने वलि वाकुल नी पूजा साहम्मी भणी कीधी एतलै मेलि संघ नइ कार्ये आज पिण ५ नदी साधै छै ए-चालि छै तथा ठाणांग सूत्र मांहि पाँचमें ठाणै पांच महानदी नउ कारणे "उत्तरित्तएवा संतरित्तएवा" इत्यादि पाठ जोज्यौ जे ऊतरतां पिण जीव विराधना थातां इरियावही प्रमुख पड़िक्कमे एवं विचारिज्यौ तथा श्रुत देवता, क्षेत्र देवता, भुवनदेवता ना काउसग्ग पड़िकमणा मांहि करी थुइ प्रमुख कहै छै ते विमासिज्यौ दृष्टिराग छंडेज्यो। वलि इम लोक कहावत सांभली छइ जे ऋषीमती हीरविजयसूरि, गच्छ नइ उदय निमत्त उच्छिष्ट चण्डालिनी देवता मइलै प्रकारि साधवी मांडी हती पण किणहीक मेलि न सधाणी किन्तु कोपित थइ, पछी यति शत २ तथा २५० यती ना यान दीधा पछै वली फेरी

वहांसे विहार करके जैसलमेर आते हुए सूरिजीने मार्गमें अपने गुरु श्रीजिनमाणिक्यसूरिजी के निर्वाण-स्थान पर उनके सुन्दर स्तूप का दर्शन किया। और नवहरपुर में पार्श्वनाथजी की यात्रा करके मिति फाल्गुन शुक्ला २ के दिन जैसलमेर पधारे। वहां के संघ को हर्ष का पारावार न रहा। सं०-१६३६ के पश्चात् पूज्यश्री का जैसलमेर पधारना नहीं हुआ था, इससे लोगों के हृदयमें गुरु-दर्शन की अधिकाधिक अभिलाषा थी। वहां के रावल भीमजी × और

साधी गच्छ प्रतिष्ठा पिण थइ इहां जूठ साच केवली जांणें वली धाणधार देशे मगरवाड़ गाम पाल्हणपुर ने पासि माणिभद्र नामें लोक प्रसिद्ध सिद्ध-क्षेत्रपाल छ सिंदूर तेल तिलवटीइ पूजाइ छं तिहां लहुड़ी पोसाल नां तपा आचार्य पद स्थापना नइ अधिकारि सेवा मरण गुल पापड़ी करी पूजी एक राति गुणणा करी तेहनइ आराधे छै पातिसाह पास जातां ऋषमती हीर-विजयसूरिइं पिण तेतली विधि गुल पापड़ी करावी पाल्हणपुर मा श्रावकां पासें पूजा करावी गुणणा करी श्रीजीपातिसाह पास गया, समहता थया ए बात सर्व लोक जांणें छै पाल्हणपुर ना लोक नें पूछी चौकस करिज्यो इम श्री मगरवड़ि यक्ष आराधतां मिथ्यात न थाइ एवं विमासिज्यो।

× ये रावल हरराजजी के पुत्र थे। इनका राज्यकाल सं० १६५० से १६६३ तक है। इनका कुछ परिचय पृ० २४ में लिख चुके हैं। ये सूरिजी के अनन्य भक्त थे जैसा कि वा० समयसुन्दरजी कहते हैं :—

रायसिंह राजा भीम राउल, सूर नय (इ?) सुरतान।
वड़ा वड़ा महीपति वयण मानइ, दियें आदरमान ॥ गच्छपति० ॥

इनके विषयमें वा० गुणविनयजी भी अपने जिनचन्द्र सूरि गहूँली में लिखते हैं:—

"राउल श्री भीम इम कहइ जी, यादव वंश वदीत रे।
पधारो जैसलमेर नइ जी, प्रीति धरि निज चित्त रे ॥ १ ॥

ये जैन साधुओं का खूब आदर करते थे। वा० समयसुन्दरजी ने इन्हें

संघ ने सूरि-महाराज का प्रवेशोत्सव खूब धूमधाम से किया। संघ और रावलजी के विशेष आग्रह होने के कारण उन्होंने सं० १६५५ का चातुर्मास जैसलमेर में किया*।

चातुर्मास पूर्ण हो जानेके पश्चात् शीघ्र ही प्राग्वाट ज्ञातीय जोगी शाहके पुत्ररत्न संघपति सोमजी के नव्य-निर्मित जिनालय की प्रतिष्ठा के हेतु विनती आने के कारण सूरि महाराज जैसलमेर से विहार कर ग्रामानुग्राम विचरते हुए अहमदावाद पधारे। वहाँ मिति माघ शुक्ला १० सोमवारको श्री आदिनाथजी आदि तीर्थंकरों के अनेक बिम्बोंकी प्रतिष्ठा की×। आचार्य श्रीजिनसिंहसूरिजी उ० श्री

उपदेश देकर इनके राज्यमें मयणों (मीना-जंगली जाति) द्वारा मारे जाते हुए साँड़ोंको छुड़ाया :—

जीव दया जश लीव; राउल रंजी हो भीम जेशल गिरी।
करणी उत्तम कीव, सांड़ा छोड़ाया हो देश में भारत ॥ ३७

[राजसोमजी कृत, महो० समयसुन्दरजी गीत]

सांडा छोड़ाया मयणे मारता ची, राउल भीम हजूर ॥ समय० ॥

[हर्षनन्दन वादी कृत, समयसुन्दर गीत]

वा० राजसमुद्रजी (श्रीजिनराज सूरि) ने रावलजी की सभामें तपा-गच्छ वालों को शास्त्रार्थ में परास्त किया था। जिसका उल्लेख श्रीसार कृत 'जिनराजसूरि रास' में है :—

"जैसलमेरु, दुरंग गढि, राउल भीम हजूरि।
वादइ तपा हराविया, विद्या प्रबल पडूरि ॥

* सूरिजी के पंच-नदी साधन समयसे यहां तक का सारा वर्णन श्री० पदमराजजी कृत "पंच नदी साधन (जिनचन्द्र सूरि) गीत" गा० १५ से किया गया है।

× इसी समय सूरिजी की प्रतिष्ठित श्रीशान्तिनाथजी की धातु-प्रतिमा जयपुर के श्री सुमतिनाथजी के मन्दिर में है जिसका लेख बाबू पूरणचन्द्रजी नाहरके सम्पादित "जैन लेख संग्रह" के लेखाङ्क ११९६ में छप चुका है।

समयराज उ० रत्ननिधान आदि अनेक विद्वान मुनि आपश्री के साथ में थे= । संघपति सोमजी, शिवाजी ने बहुत सा द्रव्य व्यय किया था, एक पट्टावलीमें इस प्रसंगपर ३६०००) रुपया व्यय करने का लिखा है। उ० रत्ननिधानजी अपनी जिनचन्द्रसूरि गहूंलीमें इस प्रकार लिखते हैं :—

राजनगर प्रतिष्ठा करी, सबल मण्डाण गुरुराइ रे ।
संघवी सोमजी लाछिनउ, लाह लियइ तिणठाई रे ।।११।।

सूरिजी ने सं० १६५४ का चातुर्मास अहमदाबाद में ही किया। उसके पश्चात् ग्रामानुग्राम विचरते हुए खम्भात पधारे; सं० १६५५ का चातुर्मास वहीं किया। विहार पत्र नं० १ में "श्रीराजाजी ना तेड़ाव्या" लिखा है। किन्तु प्रमाणाभावसे किस भक्त नृपति का आमन्त्रय था, यह नहीं कहा जा सकता।

खम्भात से विहार करके सूरीश्वर अहमदाबाद पधारे। संवत् १६५६ का चातुर्मास वहीं किया। सम्राट अकबर उस समय बरहानपुर आये हुए थे, उन्होंने सूरिजी को स्मर्ण किया, पश्चात् ईडर आदि ग्रामों में बहुत सी धर्मोन्नति करते हुए राजनगर पधारे। यहां पर मन्त्रीश्वर कर्मचन्द्रजी का देहान्त हुआ इस से सारे संघ में शोक छा गया। क्योंकि मन्त्रीश्वर सतरहवीं शताब्दिके एक उज्ज्वल रत्न थे। वे जैन शासन और देशकी सेवा और उन्नति करने में अग्रगण्य थे।

= गणधीश श्री० हरिसागरजी महाराज द्वारा सोमजी शिवा के मंदिर के लेख प्राप्त हुए हैं, उनमें इन मुनियोंका सूरिजीके साथ होने का उल्लेख है। अहमदाबाद में कई जैन मंदिर मूर्तियां यु० जिनचन्द्रसूरि प्रतिष्ठित हैं। उनमेंसे कुछ लेख इस ग्रन्थ के गुजराती अनुवाद के परिशिष्ट में छपे हैं।

इन बातों का उल्लेख विहारपत्र नं० १ में इस प्रकार है :—

"तत्र वरहानपुरि श्रीजीयें चीतार्या पछइ ईडर प्रमुख गामे थइ घणा लाभ लेइ राजनगरि आव्या, अत्र श्रीकर्मचन्द्र मंत्री परोक्ष थया।"

मंत्रीश्वर कर्मचन्द्रकी मृत्युका संवत् साहित्य संसार में अज्ञात है। इससे उनके सम्बन्धमें अनेक भ्रमात्मक किम्दन्तियां प्रचलित हैं, विहार-पत्र के द्वारा इस महत्वपूर्ण संवत् के निर्णय के साथ-साथ अनेक भ्रम निवारण हो जाते हैं। इस विषय में विशेष उहापोह मंत्रीश्वर कर्मचन्द्रके जीवन-परिचयमें की जायगी।

श्रीसुन्दर कवि कृत "विमलाचल स्तवन" गा० ६ से ज्ञात होता है कि इसी वर्ष में माधव शुक्ला २ को संघ के साथ सूरि-महाराज ने गिरिराज विमलाचल की यात्रा की थी ×।

सूरीश्वर ने सं० १६५७ का चातुर्मास पाटणमें किया। वहां पर अनेक धर्म-कृत्य हुए। चातुर्मासके अनन्तर सूरिजी सीरोही पधारे, वहां के नरेश महाराव-सुरतान सूरिजीके परम भक्त थे। उन्होंने तथा संघ ने आपकी अच्छी भक्ति की। तिमि माघ शुक्ला १० के दिन सीरोही में प्रतिष्ठित अष्टदल कमलाकार श्रीपार्श्वनाथप्रभु की धातु-मूर्ति बीकानेरके श्री चन्द्रप्रभ स्वामी के मन्दिरमें है, उसका लेख इस प्रकार है :—

सं० १६५७ वर्षे माघ सुदि दसमी दिने श्री सिरोही नगरे राजाधिराज श्री सुरतान विजय राज्ये ऊपकेश वंशे वोहित्थराय गोत्रे विक्रमपुर वास्तव्य मं० दस्सू पौत्र मं० खेतसी पुत्र मं० रूदाकेन

× सोल छप्पन माधव सुदि बीजइ, संघ सहित्त परिवार।
युगप्रधान जिनचन्द्र जुहारिया, श्रीसुन्दर सुखकार ॥६॥

सपरिकरेण कमलाकार देव गृह मण्डितं पार्श्वनाथ बिम्बं कारितं प्रतिष्ठितं च श्रीवृहत् खरतरगच्छाधिप श्री जिनमाणिक्य सूरि पट्टालंकार दिल्लीपति..
....वाचक साधु संयुतैः पूज्यमानं वंद्यमानं चिरंनंदतु। लि० उ० समयराजैः *।

यहांसे विहार करके सूरि-महाराज खम्भात पधारे। सं १६५८ का चातुर्मास वहां किया। इसके पश्चात् सं० १६५६ का चातुर्मास अहमदावाद किया। वहांसे विहार कर के पाटण पधारे।

सं० १६६० में पाटण चौमासा करके ग्रामानुग्राम विहार करते हुए महेवा पधारे। सं० १६६१ का चौमासा वहां हुआ। श्रीनाकोड़ा पार्श्वनाथजी की यात्रा की एवं बहुत से धर्मकार्य हुए। कांकरिया गोत्र का कम्मा श्रेष्ठि वहां आपका भक्त श्रावक था। उसने वहां सूरिजी के कर-कमलों से प्रतिष्ठा कराई +।

---

*सूरिजी के प्रतिष्ठित अष्ट दल कमलाकार जिन प्रतिमाएं बीकानेर के और भी कई मन्दिरोंमें है। इस कमलाकार देव गृह की ८ पंखड़ियों में दो नहीं मिलने के कारण इस लेख का मध्यभाग असम्पूर्ण रह गया है।

+विहार पत्र नं० १ में 'कां० कम्मइ प्रतिष्ठा करावी' लिखा है। इसके साथ और भी कई जिन बिम्बों की प्रतिष्ठा हुई थी जिनमें से एक मूर्ति बीकानेरस्थ कोचरोंकी गुवाड़ के आदिनाथ मन्दिर में है, जिसका लेख इस प्रकार है :—

"सं० १६६१ वर्षे मार्गशीर्ष मासे प्रथम पक्षे पंचमी वासरे गुरुवारे ऊकेश वंश बहुरा गोत्रे शाह अमरसी पुत्र साह राम पुत्ररत्न.......................
.......................रेण श्री शान्तिनाथ बिंबंकारितं श्रीवृह.......................सरे युग-प्रधान श्री जिनचन्द्रसूरिभिः।

सं० १६३८ के वाद सूरिजीका वीकानेर चातुर्मास नहीं हुआ था, इससे वीकानेर का संघ उन के दर्शनों के लिये उत्कंठित था; सूरिजी को अपने निकटवर्ती आये जानकर अत्यन्त हर्ष के साथ वहां पधारनेके लिये "विनती पत्र" लेकर संघके मुख्य भक्त-श्रावकगण महेवा गये। अति आग्रह-पूर्वक वीकानेर चातुर्मास करने के लिये प्रार्थना की। संघकी अतीव भक्ति एवं आग्रहके वशीभूत हो कर आप वीकानेर पधारे। आपके शुभागमनसे वहां के महाराज रायसिंहजी और श्रीसंघने हर्षान्वित होकर आपका नगर प्रवेश खूव समारोह के साथ कराया। वहुत वर्षोंके पश्चात् आनेके कारण संघमें प्रचर भक्ति और धर्म-परायणताका श्रोत वहने लगा। चातुर्मास में धर्म प्रभावना खूब अच्छी हुई।

खरतर संघ ने नाहटोंकी गुवाड़ में श्रीशत्रुञ्जयावतार श्री ऋषभ जिनालयका निर्माण कराया। जिसकी प्रतिष्ठा सं १६६२ चैत्र कृष्णा ७ के दिन सूरिजीने सविधि सम्पन्न की। उस समय पाषाण की ४० जिन मूर्तियों की प्रतिष्ठा की ×, जिनमें से अधिकांश मूर्तियां

भरुच के मुनिसुव्रत जिनालय में इसी मिती की प्रतिष्ठित विमलनाथ प्रभु की प्रतिमा है। जिसका लेख जैन धातु प्रतिमा लेख संग्रह भा० २ में छपा है।

× अड़सठ अंगुल प्रतिमा वड़ी, उज्वल दल आरासे घड़ी।
झिगमिग ज्योतितणो विस्तार, जय जय शत्रुंजय अवतार ॥२॥

* * * *

दोइ रस शशि मित वरसैरे, चेत वदी सातम दिवसैरे।
युगवर श्रीजिनचन्द यतीशैरे, प्रतिष्ठा कीधी जगीशैरे ॥२॥
वलि श्रावक श्राविकारी रे, प्रतिमा चालीश विचारीरे।
उच्छव करि इहां वित्त वावइ रे, निज ऋद्धि तणो फल भावइरे ॥६॥
(सं० १६६४ पोष सुदी ९ सुमतिकल्लोल कृत ऋषभस्तवन)

वहां अद्यावधि विद्यमान है। कई मूर्तियां अन्यत्र भी पाई जाती हैं जिनमें तीन मूर्तियां श्रीसुपार्श्वनाथजी के मन्दिर में और एक मूर्ति बोरोंसेरीके उपाश्रयस्थ देहरासरमें मूलनायक रूपमें विराजमान है।

इस प्रतिष्ठाके समय सूरिजीके साथ उनके शिष्य आचार्य श्रीजिनसिंहसूरिजी उ० श्रीसमयराजजी उ० रत्ननिधानजी वाचक पुण्यप्रधानजी आदि थे।* पाषाण प्रतिमाओं के अतिरिक्त इसी समयकी प्रतिष्ठित कई अष्टदल कमलाकार मूर्तियां भी मिलती हैं जिनमें से १ आदिनाथजी के मन्दिर में और कई अन्य मन्दिरों में भी देखी गई है।

इसके पहिले सं० १६६२ मिति वैसाख वद ११ के दिन प्रतिष्ठित धातु मूर्ति भी श्रीसुपार्श्वनाथजी के मन्दिर में है, जिनका लेख इस प्रकार है :—

"सं० १६६२ वर्षे वैसाख वदी ११ शुक्रे उ० जातीय शिवराज सुत पासा भा० सादिक सुत कुंवरसी भा०..................दि सपरिवारैः श्रीमुनिसुव्रत बिम्बं का० प्र० श्रीवृहत.................... श्रीजिनचन्द्र"

सूरिजीने सं० १६६३ का चातुर्मास भी लाभ जानकर बीकानेर

"संवत सोल बासठि समइ, चैत्र सातमि वदि जेहो जी।
युगप्रधान जिनचन्दजी बिम्बप्रतिष्ठ्या एहो जी ॥८॥
मूलनायक प्रतिमा नमूं, आदीसर तिसदीसो जी।
सुन्दर रूप सुहामणउ, बीजा वलि च्यालीसो जी ॥६॥

(समयसुन्दर कृत स्तवन गा–११)

*इन सबका नाम बीकानेरके श्री ऋषभदेवजीके मन्दिर के लेखों में पाया जाता है। वे सब लेख हमारे संग्रह में हैं। मूलनायकजी का लेख विस्तृत होने के कारण यहां नहीं दिया। बीकानेर के समस्त लेखों को भविष्य में पुस्तकाकार प्रकाशित करने की हमारी शुभाकांक्षा है।

में ही किया विहारपत्र में "तत्र प्रतिष्ठा" लिखा है। सम्भव है कि डागोंकी गुवाड़ वाले श्रीमहावीर स्वामी के मन्दिर की प्रतिष्ठा कराई हो किन्तु वहां कोई शिलालेखादि न मिलने से हम निश्चयपूर्वक नहीं कह सकते। इसी मन्दिर में सं० १६६४ मिती वैसाख सुदी ७ को प्रतिष्ठित धातु प्रतिमा है, जिसका लेख इस प्रकार है।

"सं० १६६४ वर्षे वैसाख सुदि ७ गुरुवारे राजा श्रीरायसिंह विजयराज्ये श्रीविक्रमनगर वास्तव्य श्रीओसवाल ज्ञातीय वोहित्थर गोत्रीय सा० वणवीर भार्या वीरमदे पुत्र हीरा भार्या हीरादे पुत्र पास भार्या पाटम दे पुत्र तिलोकसी भार्या तारा दे पुत्ररत्न लखमसी केन अपर मातृ रंगा दे पुत्र चोला सपरिवार सश्रीकेन श्रीकुंथुनाथ विम्बकारितं प्रतिष्ठितं च श्रीवृहत्खरतरगच्छाधिराज श्रीजिन-माणिक्य सूरि पट्टालंकार युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरिभिः पूज्यमानं चिरं नंदतु ॥ कल्याण मस्तु ॥"

'श्रीचिन्तामणिजी' मन्दिर के गुप्त-भंडार में भी इसी दिन की प्रतिष्ठित धातु मूर्ति है, जिसका लेख यह है :—

"सं० १६६४ प्रमिते वैसाख सुदि ७ गुरु पुण्ये राजा श्रीरायसिंह जी विजय राज्ये श्री विक्रम नगर वास्तव्य श्री ओसवाल ज्ञातीय गोलवच्छा गोत्रीय सा०रूपा भार्या रूपा दे पुत्र सिन्ना भार्या माणक दे पुत्ररत्न सा० वन्नाकेन वल्हादे पुत्र नथमल कपूरचन्द्र प्रमुख परिवार सश्रीकेन श्री श्रेयांस बिंबकारितं प्रतिष्ठितं च श्रीवृहत्खरतर गच्छाधिराज श्रीजिनमाणिक्यसूरि पट्टालंकार हार श्रीशाहि प्रतिबो-धक युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरिभिः पूज्यमानं चिरं नंदतु ॥श्रेयः ॥

* ये सं० १६५२ के श्रावण महीने में लाहौर में अपने पिता उदयसिंह के उत्तराधिकारी हुए। माघ शुक्ल ५ जोधपुर में राज्याभिषेक हुआ। इन्हें सम्राट ने दो हजारी जात और सवासात हजारों का मनसब दिया

मिती वैसाख सुदि ७ के अनन्तर विहार करके लवेरा पधारे, सं० १६६४ का चातुर्मास वहांपर हुआ। जोधपुर से राजा सूरिसिंहजी वंदनार्थ आये। वे सूरिजी से धर्मगोष्टि करके हर्षित हुए और युगप्रधान गुरुवर्य का सम्मान बढ़ाने के लिये अपने राज्य में सूरिजी को सर्वत्र वाजित्र बजाते हुए श्रावक लोगों के ले जाने में कोई बाधा न दे, इसलिये परवाना लिखकर दिया, जिसकी नकल इसी पुस्तक के परिशिष्ट में छपी है। ये महाराजा सूरसिंहजी सूरिजी के प्रसिद्ध भक्त थे, जिसका नामोल्लेख समयसुन्दरजी अपने (अपूर्ण) आलिजा गीत में इस प्रकार करते हैं :—

ये बड़े वीर, दानी और नीतिचतुर विद्वान थे। एक ही दिन में इन्होंने चार कवियों को १ लाख का दान दिया था। सं० १६७० में इनका स्वर्गवास हुआ।

× एक पट्टावली में स० १६६८ माघ शुक्ला में तीर्थाधिराज श्रीशत्रुञ्जय पर नव्य जिन प्रासाद में सूरिजी के करकमलों से अर्हत् बिम्बों की प्रतिष्ठा कराने का उल्लेख इस प्रकार है :—

"संवत् १६६८ वर्षे माघ सुदि माहि श्रीशत्रुञ्जय उपरि नवीन प्रासाद, तिहां इज प्रतिमा नी प्रतिष्ठा कीधी, बीजी पणि घणी प्रतिष्ठा कीधी।"

[बीकानेर ज्ञानभण्डार—पट्टावली]

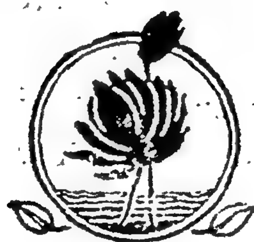
उ० क्षमाकल्याणजी गणि कृत पट्टावली में श्रीजिनसिंहसूरिजी के शिष्य राजसमुद्रजी (श्रीजिनराजसूरि) को इसी वर्ष में आसावलीपुर में वाचक पद देनेका उल्लेख इस प्रकार है :—

"सं०१६६८ आसाउलीपुरे श्रीजिनचन्द्रसूरिभिः वाचक पदं प्रदत्तम्" श्रीसार कवि कृत "जिनराजसूरि रास" में भी वाचक पद देनेका इस प्रकार उल्लेख है :—

"वाचनाचारज पद दियउ, श्रीजिनचन्द्रसुरिन्द।
पाटोधर प्रतपउ सदा, रंगिय रंग आणंद ॥ ५ ॥

शाहि सलेम सहु उमरा, भीम सूर भूपाल ।
चीतारइ तु नइ चाह सु, पूज्यजी पधारो कृपाल ॥५॥

सूरिजी लवेरा से विहार करके मेड़ता पधारे। सं० १६६५ का चातुर्मास मेड़ता में किया। अहमदाबाद के विनीत आमन्त्रण से सूरिमहाराज राजनगर पधारे। वहां से ग्रामानुग्राम विचरते हुए खम्भात पधारे। सं० १६६६ का चातुर्मास खम्भात में किया। उसके पश्चात् सं० १६६७ का चातुर्मास अहमदाबाद में करके पाटण पधारे। सं० १६६८ का चातुर्मास पाटण में किया। इन वर्षों में और भी वहुत-सी जिन मन्दिरों की प्रतिष्ठाएं सूरिजी के कर कमलोंसे हुई।



ग्यारहवां प्रकरण

महान् शासन-सेवा



सम्राट अकबर न्यायपरायणता से राज्यशासन करते हुए वि० सं० १६६२ मिती कार्तिक सुदी १४ मंगलवारकी रात्रि को कालधर्म प्राप्त हुए। सम्राट के सब धर्मोंपर समान भाव और प्रजावात्सल्य गुणपर प्रजा बड़ी प्रसन्न थी। मुसलमान शासकोंमें यही एक ऐसे सम्राट हो गये हैं, जिनके समय में हिन्दू और मुसलमान दोनोंने खूब शान्ति से जीवननिर्वाह किया। सम्राट की मृत्यु के अनन्तर हिन्दू और मुसलमान दोनों के हृदय शोकाकुल हो गये, सर्वत्र हाहाकार छा गया, जिसका कुछ वर्णन "बनारसी-विलास" में पाया जाता है। सम्राट के देहावसान के अनन्तर उनके पुत्र शाहजादा सलीम "नूरुद्दीन जहांगीर" की उपाधि धारणकर आगरेके सिंहासनारूढ़ हुए। सूरिजी के लाहौर पधारने के समय से ही शाहजादा सलीम उनको सम्मान की दृष्टि से देखा करता था और भक्त हो गया था।

सम्राट जहांगीर अत्यधिक मद्यपान* किया करते थे और शीघ्र क्रोधी स्वभावी थे, इन दोनों में से एक भी दुर्गुण हो तो मनुष्य

* जीवनी (जहांगीर नामा) में इसे स्वीकार करते हैं।

यति-साधुओंके चरित्रके विषयमें शंकित होकर अपने शीघ्र कोपशील स्वभावानुसार यह हुक्म सर्वत्र जारी कर दिया कि मेरे राज्यमें जहाँ कहीं दर्शनी, सेवड़े हैं, उन्हें गृहस्थ-वेषधारक बना दिये जांय अन्यथा मेरे राज्यमेंसे बाहर निकाल दिये जांय ※.

जिनसागर सूरि रासमें—

संवत् सोल गुणहतरइ, बूझवि साहि सलेम।
जिनशासन मुगतउ कर्यो, खरतरगच्छ मइ खेम ॥१३॥

(ऐ० जै० का० सं० पृ—१७६)

संवत् १६७० चैत्र सुदी १० को दिये पत्रमें भी साधु संघकी रक्षा करनेका उल्लेख है, देखे परिशिष्ट नं० (घ)

शिला-लेखोंमें भी—"कुपित जहांगीर साहिरंजक तत्सर्वमंडल बहिष्कृत साधुरक्षक युगप्रधान श्रीजिनचन्द सूरि।"

(प्राचीन जैनलेख संग्रह लेखांक १७)

कविवर समयसुन्दर कृत खरतरगच्छ पट्टावलीमें—

"पुनः गुरूणा एक दर्शनितोऽनाचारं दृष्ट्वा कुपितेन साहिना सर्व गच्छीय दर्शनिषु देशेभ्यो निष्कासितेषु पत्तनाद्विहृत्य आगरायां गत्वा श्री साहि समक्षं अपराध मोचनेन सर्व दर्शनिनां सर्वत्र विहारः कारितः।"

कविवर अपने छन्द में भी यही स्पष्ट कहते है—"दर्शनी एक आचार चको।"

※खरतरगच्छीय साहित्य में तो इस घटना का विस्तृत वर्णन मिलता ही है, जिसके कई प्रमाण आगे की फुट नोट में दिये जायेंगे। तपागच्छीय साहित्यमें भी इस प्रकार उल्लेख है—

"एहवइ पृथ्वीपति जहांगीर, कोपी वचने लागो बीर।
वेषधारी उपर कोपीयो, मुतकेलनइ देसोटो दियो।
म्लेछ न जाणइ तेहं विचार, धानारी मोकल अणगार ॥४३६॥
नासरडु भडियो बहु देसि, भला हुंता तेणे राख्या वेष।

(विजयतिलक सूरि रास, ऐ० रा० सं० पृष्ठ ३३)

इस कठोर और अन्यायपूर्ण शाही हुक्म को सुनकर दर्शनी लोग इतस्ततः भागने लगे, कई जङ्गलोंमें, कई गुफाओंमें कई अनान्य देशोंमें चले गये। कुछ लोग तो भयके मारे पृथ्वीके भीतरी, तलघरोंमें जा छिपे, इस प्रकार जिसने जिधर अनुकूलता देखी—भाग निकले। उनमें से कितनों को पलायमान होते हुए देखकर यवनोंने पकडकर गिरफ्तार कर लिये और उन्हें काल-कोठरीमें डाल दिया, जहांपर अन्न-जल भी नहीं दिया जाता था॥।

इस घटना का विशेष ज्ञातव्य, भानुचन्द्र चरित्र, जहांगीरनामा, क्षमाकल्याणजीकृत पट्टावली आदि में भी पाया जाता है।

वास्तवमें सम्राट्का एक व्यक्ति विशेषके अनाचार से सारे साधुसंघको अनाचारी मान सबको देश निर्वासनका हुक्म देना अन्यायपूर्ण था। हमारे चरित्र नायकने सम्राट्को उसकी इस गहरी भूलको सुझाकर उस घातक हुक्म को रद्द या उन्मूलन कराने का गौरव प्राप्त किया था, यह तत्कालीन अनेकों प्रमाणों से भलीभांति सिद्ध है।"

* पातिसाहि सलेम सटोप, कियउ दर्शनियां सुं कोप।
ए कामणगारा कामी, दरबार थी दूरि हरामी ॥ १७॥
एकन कुं पाग बन्धावौ, एकन कुं ना आस अणावो।
एकन कुं देसवटउ जंगल दीजइ, एकन कुं पखाली कीजइ ॥१८॥
ए साहि हुकम सांभलिया, तसु खउफ थकी खलभलीया।
जजमान मिली संजतना, दरहाल करे गुरु जतना ॥१९॥
के नासि हिन्दू पूठि पड़िया, केई मड़वासइ जइ चढ़िया।
केइ जंगल जाइ वइठा, केइ दौड़ि गुफा मांहि (जइ) पइठा ॥२०॥
जे नासत यवने झाल्या, ते आणि भाखसी घाल्या।
पाणी नइ अन्न जल पाल्या, वयरीड़ा वयर सुं साल्या ॥२१॥
इम सांभलि शासन हीला, जिणचन्द सुरीश सुशीला।
गुजरात धरा थी पधारइ, जिन शासन वान वधारइ ॥२२॥

इस प्रकार की विकट परिस्थिति के कारण आगरा संघ ने सूरिजी को समर्थ जानकर उनको पत्र द्वारा संकटनिवारणार्थ आगरा

प्रति प्रासति वलि गुरुचाली, असुरां भय दूरइ टाली ।
उग्रसेन पुरइ पउधारइ, पूज्य साहि तणइ दरबारइ ॥२३॥
पूज्य देखि दीदारइ मिलियां, पतिसाह तणा कोप गलियां ।
गुजरात धरा क्यु आए, पतिसाहि गुरु बतलाए ॥२४॥
पतिसाहि कु देण आशीस, हम आए शाहि-जगीश ।
काहे पाया दुःख शरीर, जाओ जउख करो गुरुपीर ॥२५॥
इक साहि हुकुम जउ पावां, वन्दियड़ां वन्दि (ध) छुडावां ।
पतिशाहि खयरात करीजइ, दरशणिया पुर (दूग्रो) दीजइ ॥२६॥
पतिशाहि हुंतउ जे जूठउ, पूज्य भाग बलइ अति तूठउ;
जाउ विचरउ देश हमारे, तुम्ह फिरतां कोइ न वारइ ॥२७॥
धन २ खरतरगच्छराया, दर्शनियां दंड छुड़ाया ।
पूज्य सयश करि जगि छाया, फिरि सहरि मेड़तइ आया ॥२८॥

[युग-प्रधान-निर्वाण रास]

अनुक्रमि श्रीगुरु विहरता सहि ए, आया पाटण मांहि ।
चउमासो प्रभु तिहां करइ सहि ए, मन आणी उच्छाह ॥४॥
लेख आयउ आगरा थकी सहि ए, जाणी सगली बात ।
साहि सलेम कोपइ चढइ सहि ए, कुमति वांध्या रात ॥५॥
चउमासउ करि पागुर्या सहि ए, करता देश विहार ।
उग्रसेनपुर आविया सहि ए, वरत्या जय जय कार ॥६॥
श्रीपातीसाह बोलाविया सहिए, जंगम जुगह प्रधान ।
धरम मरम कहि वूझव्यउ सहि ए, तुरत दिया फरमान ॥
जिन शासन उजवालियो सहि ए. शाह श्रीवंत कुलचंद ।
साधु विहार मुगता किया सहि ए, खरतर पति जिणचन्द ॥८॥

[लब्धिशेखर कृत गहुँली]

पधारने की विनती की+। इस पत्र से वहां की सारी परिस्थिति से ज्ञात होकर जैन शासन की अवहेलना दूर कर रक्षा करने के लिए सूरिजी ने महान् साहस करके आगरे की ओर विहार किया। त्वरासे विहार करते हुए थोड़े दिनों में सूरिजी अपनी शिष्य-मंडली के साथ आगरा पंहुचे, और शाहीदरबार में जाकर सम्राट से मिले। अपने पूज्य युगप्रधान गुरुको आये देखकर सम्राट जहांगीर अत्यन्त प्रमुदित हुए, उनके दर्शनार्थ से सम्राट का क्रोध शान्त हो गया और नम्रतापूर्वक वार्तालाप करने लगा।

"आपने वृद्धावस्थामें गुजरात से यहां तक पधारनेका कष्ट क्यों किया, सेवा फरमावें।" जहांगीर ने कहा।

"सम्राट! तुम्हें आशीर्वाद देने के लिए हम यहां आये हैं।"

"यह मेरा अहोभाग्य है, आपको इतनी दूर से पधारने में शारीरिक कष्ट हुआ होगा, अतः अभी जाकर विश्राम लें।"

"अभी विश्राम करनेका समय नहीं है। तुम्हारे फरमानसे जैनसंघ में जो अशान्ति फैल रही है, उसे निवारणार्थ ही मेरा यहां आगमन हुआ है। एक व्यक्ति के दोष से सारा समाज दण्डनीय नहीं हो जाता। सब मनुष्य एक समान प्रकृतिवाले नहीं होते, बडों-बडों की भी भूल हो जाती है। अतः हे सम्राट! विचार करो। तुमने जो साधु विहार बन्द किया है, उसे मुक्त कर दो।" सूरिजीने उद्देश्य स्पष्ट कर कहा।

"आपने जो कहा वह ठीक है, किन्तु मेरी समझ में भुक्तभोगी होकर साधु बनना निरापद होता है।" सम्राटने अपना मन्तव्य प्रकट किया।

सम्राट! चिरकाल से आत्मा इन्द्रियोंके विषयोंमें आसक्त

बनी हुई है। अतः गृहस्थावासमें रहकर उन विषय-वासनाओं से विरक्त होने की भावना का उद्भूत होना बहुत कठिन है। क्योंकि आत्माको ये सदा से प्रिय हैं। अतः विषय-वासना के साधनों को पहलेही त्यागकर देना अच्छा है। ब्रह्मचर्य को जैन-दर्शन में बहुत हीऊंचा स्थान दिया गया है। उसके पालन और रक्षाके हेतु नव कड़ी आज्ञाएँ शास्त्रकारोंने बतला दी है, जिन से सुखपूर्वक निर्विघ्नतया ब्रह्मचर्य व्रत स्थिर रख सके, वे इस प्रकार हैं:—

(१) जहां स्त्री, पुरुष, पशु और नपुंसक निवास करतेहों, उस स्थान में नहीं रहना।

(२) विषय विकारों की जागृति और अभिवृद्धि करनेवाली वार्ताएं तक न करना और न सुनना।

(३) जहां स्त्री बैठी हो, उस स्थान व उस आसनपर दो घड़ी तक न बैठना।

(४) दीवाल की ओट में भी जहां स्त्री-पुरुष काम-क्रीड़ा और प्रेम वार्ता करते हों, वहां न ठहरना और न उसे सुनना।

(५) पूर्वावस्था के भुक्त भोगों को स्मरण तक न करना।

(६) सरस स्निग्ध भोजन और कामोद्दीपक पदार्थों का उपभोग नहीं करना।

(७) स्त्री-पुरुष किसी को भी सराग दृष्टि न देखना।

(८) सर्वदा आवश्यकता से भी कम भोजन करना, जिससे आलस्य और विकार उत्पन्न न हो।

(९) शरीर की किसी भी प्रकार से शृङ्गार या शोभा न करना ताकि सराग दशा जागृत न हो।

अब तुम स्वयं विचार कर देखो कि इन प्रतिज्ञाओं को निभाने वाला किस प्रकार आचाच्युत हो सकता है। हां ! जो भ्रष्ट हुए हैं वे इन नियमों को यथावत् न पालन करने के कारण ही। जैन शासन उन्हें किसी भी हालत में उपादेय नहीं समझता और न सहानुभूति ही रखता है। अतः समस्त साधुओं पर अश्रद्धा ला कर उन्हें कष्ट पहुंचाना तुम्हारे जैसे विचारशील, न्यायवान और प्रजा हितेच्छु सम्राट के लिये उचित नहीं कहा जा सकता।" सूरिजी ने सम्राट की युक्ति का निराकरण करते हुए कहा।

"अच्छा, मेरे राज्य में जहां इच्छा हो, विना रोक टोक के विचरें, किसी को कोई विघ्न नहीं होगा !"

"तो फिर शीघ्र ही गिरफ्तार किये हुए छोड़ दिये जायं ! और भविष्य के लिये अप्रतिवन्ध साधु विहार होने के लिये सर्वत्र शाही फरमान जाहिर कर दिये जायं।

"हां गुरुदेव ! ऐसा ही होगा। आप निश्चिन्त रहिये।"

इस प्रकार वार्तालाप होनेके अनन्तर सूरिजी उपाश्रय में पधारे। सम्राट के द्वारा फरमान जाहिर कर दिया गया। श्री सङ्घ के हर्ष का पारावार न रहा। सूरिजीने सङ्घ के आग्रह से सं० १६६९ का चातुर्मास वहीं किया। उपरोक्त घटना का वर्णन कविवर समय सुन्दरजी ने अपने छंद में इस प्रकार किया है:—

सुगुरु जिणचन्द्र सौभाग्य सखरौ लियौ,
चिहुं दिशै चन्द्र नामौ सवायौ।
जैन शासन जिकै डोलतौ राखियौ,
साखियौ जगत सगलै कहायौ ॥ १ ॥
एक दिन पातिशाह आगरै कोपियौ,
दर्शनी एक आचार चूकौ।

शहर थी दूरि काढो सवै सेवड़ा,
मेवड़ां हाथ फुरमाण मूक्यो ॥ २ ॥

आगरै शहर नागोर अरु मेड़तै,
महिम लाहोर गुजराति मांहै।

देश दन्दोल सवलो पड्यौ तिहां किणे,
तुरत ना पंथिया तुंवक नाहै ॥ ३ ॥

दर्शनी केई पर द्वीप में चढ़ि गया,
केइ नासी गया कच्छ देसे।

केइ लाहोर केइ रह्या भूंहि मां,
दर्शनी केई पाताल पैसे ॥ ४ ॥

तिण समय युगप्रधान जगि राजियौ,
श्री जिनचन्द्र तेजै सवायौ।

पूज्य अणगार पाटण थकी पांगुर्या,
आगरै पातिश्या पास आयौ ॥ ५ ॥

तुरत गुरु राय नै पातशाह तेड़िया,
देखि दीदार अति मान दीधा।

अजब की छाप फुरमाण करि आखिया,
केडला गुनहु सहु माफ कीधा ॥ ६ ॥

जैन शासनतणी टेक राखी खरी,
ताहरै आज कोइ न तोलै।

खरतर गच्छ नैं शोभ चाढी करी,
समयसुन्दर विरुद्ध सांच बोलै ॥ ७ ॥

सम्राट पर सूरिजी का कितना गहरा और जबरदस्त प्रभाव था यह इस घटना से भली भांति जाना जाता है। जैन शासन की

अति प्रभावना करने के कारण आपश्री की "सवाई युगप्रधान" नाम से प्रसिद्धि हुई।*

कहा जाता है कि जव सूरिजी आगरा पधारे और सम्राट को युगप्रधान वड़े गुरु के पधारने के समाचार मिले, तव उन्होंने अपनी आज्ञाका भङ्ग न हो, इसलिये सूरिजीको राज-मार्ग से न पधार कर लोकोत्तर मार्ग से आने का कहलाया, तव शासन की प्रभावना के हेतु सूरिजी ने ऊनी कम्वल या लोवड़ी यमुना नदी में विछा कर मन्त्र-शक्ति द्वारा उसी के ऊपर वैठे हुए पार होकर सम्राट से मिले थे। इस अद्भुत शक्ति को देख कर सम्राट अत्यन्त चकित हो गये।

एक दिन कोई विद्वान् भट्ट, जिसने काशी+ के पण्डितों को विजय कर लिया था, जहांगीर के दरवार में आया और गर्वपूर्वक शास्त्रार्थ या वाद करने की उद्घोषणा करने लगा। तव सम्राटने अपने गुरु श्री जिनचन्द्रसूरिजी को उससे वाद करने में समर्थ समझ कर उन्हें शास्त्रार्थ करने के लिये विनम्र निवेदन किया। सूरिजी ने अपनी असाधारण विद्वता से उसे परास्त करके प्रसिद्धि प्राप्त की। शास्त्रार्थ में भट्ट को हराने से "युगप्रधान भट्टारक" पद की ख्याति प्राप्ति की। इस विपय का एक (प्राचीन) प्रसिद्ध कवित्त यहां लिखते हैं :—

---

* श्री साहि सलेम राज्ये ताद्य (तपा) कृत जिनशासन मालिन्यतः श्री साधु विहारो निषिद्ध साहिना तत्रावसरे श्री उग्रसेनपुरे गत्वा साहि प्रतिवोध्य च साधुनां विहार स्थिरी कृतः तदा लव्व "सवाई युग-प्रधान" वड़ागुरुरिति विरुदो येन गुरुणाः।

[तत्कालीन पट्टावली]

+ "जिन काशी जय पामियउ, करि गौतम ज्यु सिद्धि वाधी रे॥ ११॥

[युगप्रधान निर्वाण रास]

"मसूर पठान (?) गरब्ब कियौ भैया वाद वदूं कोई पंडित जागैं।
शाहि सलेम बुलाय श्रीपूज्य कुं मोहि भरोसौ चन्द्र न भागैं॥
भट्ट हार गयो इक चोट शब्द की जीत भई युं जैन के तागैं।
वाद जित्यउ जिणचन्द भट्टारक युं पतिशाहि दिल्लीपति आगैं॥

सूरि-महाराज के आगरे में चातुर्मास करने से संघ में खूब धर्म-ध्यान होता रहा। उन्होंने सम्राट जहांगीरपर अलौकिक और अनुपम प्रभाव डाल कर जो स्तुत्य शासन-सेवा की वह शब्दों द्वारा वर्णन नहीं की जा सकती। यह प्रकरण पढ़ने से पाठकों को श्री जिनचन्द्रसूरिजी की अनुकरणीय शासन सेवा, अदम्य उत्साह, अटूट साहस, निर्मल तप संयम और धैर्य्य-गम्भीरादि गुणों का कुछ परिचय हुआ ही होगा।

बारहवां प्रकरण

निर्वाण



गरे में अद्वितीय शासन-प्रभावना करके सूरि-महाराज मेड़ता पधारे। वहां चोपड़ा गोत्रीय श्रेष्ठि आसकरण आदि अनेकों धनवान और राज्यमान्य श्रावक सूरिजी के परम-भक्त थे। सूरि महाराज के पधारने से संघ में अधिकाधिक धर्म ध्यान होने लगे।

सूरिजी का मेड़ता नगर में आगमन सुन कर वीलाड़े के संघ को अत्यन्त हर्ष हुआ। उन्होंने एकत्र होकर सूरिजी को वीलाड़ा में चातुर्मास करने के लिये आमन्त्रित करने का परामर्श किया। वे मात्र विचार करके ही नहीं रह गये, परन्तु तत्काल ही संघ के प्रतिष्ठित व्यक्ति जिनमें कटारिया गोत्र के श्रावक प्रधान थे, मिल कर मेड़ता आये। सूरि महाराज को वन्दना करने के अनन्तर अत्यन्त अनुनय विनय पूर्वक वहां चातुर्मास के निमित्त पधारने की नम्र विज्ञप्ति की। उनके आग्रह से सूरि-महाराज वीलाड़ा पधारे। उस समय आपके साथ वा० सुमति कल्लोल, वा० पुण्यप्रधान, पं० मुनिवल्लभ, पं० अमीपाल आदि साधु थे*। १६७० का चातुर्मास वहीं किया।

---

*जैसलमेर से वा० विमलतिलक आदि ने मिती चैत्र शुक्ल १० को सूरिजी के प्रति एक पत्र दिया, जिसमें ये नाम लिखे हैं, वह संस्कृत पत्र इसी

सूरि-महाराज के विराजने से वहां संघ में अधिकाधिक धर्म ध्यान हुए। मुनिगण स्वाध्याय, ध्यान, संयम और तपश्चर्या करने में विशेष रूप से तल्लीन हुए। धर्मिष्ठ श्रावकगण पौषध, प्रतिक्रमण, शास्त्र-श्रवण और द्रव्य का सद्व्यय करने में खूब प्रवृत्तिशील बने। पर्यूषण पर्वाधिराज के दिनों की तो बात ही क्या? सर्वत्र धर्म-भावना का श्रोत प्रवाहित हो चला, जिसका वर्णन करना लेखनशक्ति से बाहर है।

पर्यूषण पर्व सानन्द आराधन करने के पश्चात् सूरिजीने ज्ञानोपयोग से अपना आयुष्य निकट जानकर शिष्य-वर्ग को विशेष रूप से शिक्षा देना प्रारम्भ किया—"तुम लोग जैन शासन की उन्नति करने के साथ-साथ आत्मोन्नति में सदा कटिबद्ध रहना! गच्छ का भार आचार्य "जिनसिंहसूरि" निर्वाहेंगे, तुम लोग सदा तत्परता से उनकी आज्ञा का पालन करना! इत्यादि।

स्थानीय श्रावक, श्राविका को भी उनके उचित हित-शिक्षा देते हुए चतुर्विध सङ्घ से क्षमत-क्षामणा की। अन्य देश-देशान्तर के सङ्घ को भी पत्र द्वारा धर्मलाभ, क्षमत-क्षामणा लिखवाये। तत्पश्चात् चौरासी लक्ष जीवा योनि को शुद्ध मन से क्षमत-क्षामणा कर पापस्थानकों की निन्दा करते हुए समाधि से अनशन ग्रहण कर लिया। चार प्रहर के अनशन को पालते हुए उत्कृष्ट धर्म ध्यान में लीन होकर अपने पौद्गलिक देह को विसर्जन कर मिती आश्विन कृष्णा २ के दिन स्वर्गधाम सिधारे। +

पुस्तक के परिशिष्ट में छपा है। उसमें जिनसिंहसूरिजी का नाम नहीं है, इससे ज्ञात होता है कि उस समय वे सूरिजी के साथ नहीं थे। यदि चातुर्मास के समय गुरु महाराज के पास बालोतरा आये होंगे।

× दशमी दिन शुभमना सही, मौन निवास थाये रे।
पालिताणा नगर जिनराज गुरु गुरु रस्ता पदमाने रे ॥१३॥सुग०।

वह जगत् की ज्योति सदा के लिये विलीन हो गई। दुर्दैव कराल काल ने ऐसे महापुरुषों को भी न छोड़ा। पुद्गल की निःसारता ने आज अपना स्पष्ट परिचय दे दिया, उस सुन्दर और पूज्य देह ने सर्वदा के लिये रूखा उत्तर दे दिया। समस्त देश में विषाद और हाहाकार छा गया। सर्वत्र दिन होते हुए भी अन्धकार अनुभूत होने लगा। वह तेजमयी प्रभा सदा के लिये अदृश्य हो गई। वह दीप्त ज्ञानप्रदीप काल-वायु के उद्दंड झकोरों से अन्धकार के अन्तस्थल में जा छिपा। गुरु-विरह की दारुण ज्वाला लोगोंके हृदय में प्रज्वलित हो उठी, नेत्रों से वह ज्वाला अश्रुओं का रूप धारण कर जड़ी-सी उमड़ पड़ी। उस समय का दृश्य अति दयनीय और नेत्रों से न देखे जाने योग्य हो गया। सब लोग म्लान मुख होकर शोक-सागर में डूबने लगे।

सूरिजी की अन्त्येष्ठि क्रिया करने के लिये स्थानीय सङ्घ ने सुन्दर विमान के सदृश मंढ़ी बनाई और शोकाकुल हृदय से शवको निर्मल गंगोदक से प्रक्षालन कर चन्दनादि का विलेपन किया।

कृष्णागरके सुगन्धित धूपसे अर्चित करते हुए उसे विमानमें रखा। वाजित्रादिके साथ शवको उत्सव पूर्वक ग्रामके मध्य २ होकर ले जाने लगे। मार्ग में गुरु दर्शनार्थ लोगों की भीड़ से विस्तृत रास्ते भी संकुचित मालूम होने लगे। क्रमसे वाणगङ्गाका तट निकट

दिवस आसू वदि बीजने, ऊचरी अणसण सार रे।
सुरपुरि सुगुरु सिधारिया, सुर करे जय जयकार रे ॥१४॥
नाम समरणे नवनिधि मिले, सविफले संघनि आस रे।
आधिने व्याधि दूरे टले, संपजे लील विलास रे ॥१५॥जुग०।
केसर चन्दन कुसुमसु, चरचतां सहु गुरु पाय रे।
पुत्र सन्तान परिघल हुवे, दिन दिन तेज सवाय रे ॥१६॥जुग०।

आने पर पवित्र स्थान में सूरिजी का शव रखा गया। चन्दन की चिता सजाकर घृतादिसे देह का अग्नि संस्कार कर दिया गया। वह पुद्गल पुञ्ज सबके देखते २ क्षारके रूप मे अवतीर्ण हो गया. सूरिजीके अतिशय से उनकी मुंहपत्ति (मुखवस्त्रिका) नहीं जली* लोगोंने इस प्रकट चमत्कारको आश्चर्य सहित देखा। श्री शान्तिनाथ भगवानका नाम स्मरण करते हुए संघ वापिस स्वस्थान आया।

लोग अपने विरह दुःखको इस प्रकार प्रकट करने लगे:—"हा गुरुदेव! आप कहां चले गये? हमसे ऐसा क्या अपराध हुआ। अब हमे किसका आधार है? जैन संघ की विपत्ति अवहेलना आदि को कौन मिटावेगा। हे ज्ञाननिधान! आपके बिना अब हमारा संशय कौन दूर करेगा? हे युगप्रधान! अब हम गुरुजी कहकर किसे पुकारेंगे।" इत्यादि ×।

जिस स्थान पर सूरिजी का अग्नि संकार हुआ वहां पर बीलाड़ा के संघ ने उनके स्मारक रूपमे एक सुन्दर स्तूप बनवाया और उसमे सूरिजी की चरण पादुकाएं स्थापित कराई,+जो अद्या-

---

* देखो निर्वाण रास और नयरंग कृत पट्टावलीमें भी इस प्रकार लिखा है :—

वेश्वानर केहनउ सगउ, पण अतिशय संजोग।
नवि दाझी पूज्य मुंहपति, देखइ सगलो लोग।।

(निर्वाण रास)

येषां विशिष्टातिसयेन देहे दग्धेप्यधाक्षीन्नहि वस्त्रवासः।
प्रोद्यत् प्रभाव प्रथिता जयन्तु युगप्रधान जिनचन्द्र पूज्याः ।।२।।

× यहां तक का सारा वृत्तान्त कवि समयप्रमोद कृत "युगप्रधान निर्वाण रास" से लिया गया है। यह रास हमारी ओर से प्रकाशित "ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह" में देखना चाहिए।

वधि वाणगंगा के तट पर विद्यमान है। जिसका लेख इस प्रकार है :—

"संवत् १६७० मगसर सुदि १० गुरुवासरे सवाई युगप्रधान श्रीजिनचन्द्रसूरि चरणपादुके कारापितं श्री वीलाड़ा श्री संघेन प्र० श्री जिनसिंह सूरिभिः।"

और भी अनेक स्थानों में आपके चरण स्थापित किये गये थे, वीकानेरमें शहरके वाहर एक स्थान में आपकी चरण पादुकाएं स्थापित हैं जिसे आजकल "रेल दादाजी" कहते हैं। अनेकों भक्त लोग गुरु दर्शनार्थ नित्य, (विशेषतया सोमवारको) जाया करते हैं। दादाजी श्री जिनचन्द्रसूरिजी भक्तोंके मन वांछित पूर्ण करनेवाले हैं, अनेक चमत्कार भी सुननेमें आते हैं। वहां का पादुका लेख यह है :—

"सं० १६७३ वर्षे वैशाख मासे अक्षय तृतीयायां सोमवारे श्री खरतरगच्छे श्रीजिनमाणिक्यसूरि पट्टालंकारहार युगप्रधान श्री जिनचन्द्रसूरिणां पादुके श्री विक्रमनगर वास्तव्य समस्त श्रीसंघेन कारिते शुभम्।"

वीकानेरके नाहटोंकी गवाड़में श्री ऋषभदेव भगवानके मन्दिर में मूल गम्भारे के दाहिनी तरफ सूरिजी की पाषाण-निर्मित अति सुन्दर मूर्ति है जिसका लेख इस प्रकार है :—

"सं० १६८६ वर्षे चैत्र वदि ४ दिने श्री खरतरगच्छधीश्वर युगप्रधान श्री जिनचन्द्र सूरिणां प्रतिमा का० जयमा श्रा० प्र० श्री युगप्रधान श्री जिनराजसूरिराजैः।"

+ ये पादुकाएं अति विशाल वर्ग दादावाड़ी में स्थापित हो रही हैं।

जैसलमेरमें भी शहरके उत्तरकी ओर १ मील पर देदानसर नामक तालावके पास श्री जिनकुशल सूरिजो का स्थान है। वहां भी आपकी पादुकाएं हैं जिसका लेख इसप्रकार है :—

सं० १६७२ वर्षे वैशाख सुदि ६ सोमवारे भट्टारक सवाइ युगप्रधान श्री श्री श्री श्री। श्री जिनचन्द्रमूरि पादुका प्रतिष्ठिता।

(जैन लेख संग्रह भा० ३ By P. C. Nahar)

उसी दिनका लेख दादाजी के स्थानके पूर्व की तरफ स्थम्भके आले में निम्नोक्त लेख छः पंक्तियों मे खुदा है :—

संवत् १६७२ वर्षे वैसाख सुदि ६ दिने सोमवारे श्री जैसलमेर वास्तव्य राउल श्री कल्याणदासजी विजयराज्ये कुंवर श्री मनोहर दासजी। सवाई युगप्रधान श्री जिनचन्द्रसूरीश्वर पादुके कारिते युगप्रधान भट्टारक श्री जिनसिंहसूरि ॥ श्री खरतर संघेन तैव सर्वदा श्री संघस्य समुन्नति मुख श्रेयो वृद्धिः। वाचयेतामिती ॥ पं० उदयसिंह लिपि कृतम् ॥ श्रीः श्रीः श्री ॥

(जैन लेख संग्रह भा० ३ By P. C. Nahar)

स्तम्भ तीर्थ में भी सूरिजीके चरण पादुके विद्यमान है जिसका लेख इस प्रकार है :—

"सं० १६७७ (?) वर्षे माघ वदि १० दिने गुरुवारे युगप्रधान श्री जिनचन्द्रसूरीणां पादुके कारिते खरतरगच्छे ओस वंशे........ ....ते सं० जसराज भार्य्या जसल दे पुत्र सं० माडण केन प्रति० युगप्रधान श्री जिनसिंह सूरिवरैः।"

(जैन धातु प्रतिमा लेख संग्रह भाग २ लेखांक ८८२)

इन स्थानोंके अतिरिक्त मुलतान, अहमदावाद, वाहड़मेर,

पाटण, आदि स्थानोंमें भी आपश्री की चरण पादुकाएं और मूर्तियें प्रतिष्ठित होने का उल्लेख पाया जाता है।*

सूरिजी की स्वर्ग-तिथि मिती आश्विन कृष्णा २ (गुजराती भादवा वदि २) को अब भी बम्बई भाईखला, सूरत, भरुच, पाटण आदि नगरोंमें 'गुरु दूज' के नामसे दादा साहबके स्थान पर मेला होता है।

यद्यपि सूरिजी का नश्वर पौद्गलिक देह आज हमारे प्रत्यक्ष नहीं है तथापि उनकी मूर्तिमान् अमरआत्मा और अनुकरणीय गुण समूह आज भी हमें आदर्श मार्ग सुझाने को परम साधन-भूत है। उनके पावन कृत्य और प्रशस्त कीर्ति की गौरव-गाथा सारे विश्व में दीप्तमान आलोककी भाँति चिरस्थायी रहेगी।

कविवर समयसुन्दरजी क्या ही मार्मिक शब्दों में कहते हैं :—

मुयइ कहइ ते मूढ नर, जीवइ जिनचन्द सूरि।
जग जंपइ जस जेहनो, पुहवी कीरति पडूर ॥८॥
चतुर्विध संघ चीतारस्यइ, जां जीविस्यइ तां सीम।
बीसारया किम वीसरइ, हो निर्मल तप जप नीम ॥९॥

---

* जससमुद्र कृत गीत में :—
श्री जिनचन्द्र सूरीश्वरू, खरतर गच्छ गणधार मेरे युगवर।
थुम्भ सकल थिर थापना, विक्रमपुर सिणगार मेरे युगवर ॥१॥
कुंभकरण कृत गीतमें :—
मूलचक्क (मुलतान) में थुंभ मंडानो, परतउ सहु नउ पूरें।
कुम्भकरण जंपइ कर जोड़ी, दुष्मण करि सहुदूरें ॥३॥
हेममन्दिर कृत गुरु गीत में: —
जिहो मूल थम्भ अति सुन्दरू, दादा वीलाड़ै थिर ठाम।
जीहो राजनगर विक्रमपुरें, दादा पूरें वंछित काम ॥६॥स०॥
जीहो वाहड़मेरइ दीपतउ, दादा जेसाणइ मुलतान।
जीहो अणहिलपुर खंभाइतइं, सुर नर करइ वखाण ॥७॥स०॥

परिशिष्ट (ग)

"शाही फरमान"

सरस्वती मासिक पत्रिका (सं० १९१२ जून पृ० २९३) से उद्धृत :—

"फर्मान जलालुद्दीन मोहम्मद अकबर बादशाह गाजी—

हुक्काम किराम व जागीरदारान व करोरियान व सायर मुत्सद्दियान मुहिम्मात सूबे मुलतान बिदानंद।

"कि चूं हमगी तवज्जोह खातिर खैरंदेश दर आसूदगी जमहूर अनाम बल्क काफ़ए जांदार ममरूफ़ व मातू फ़स्त कि तबक़ात आलम दरमहाद अमन बूदा बफ़राग बाल बइबादत हज़रत एज़िद मुतआल इश्तग़ाल नुमायंद। व क़ब्ले अज़ीं मुरताज़ ख़ैर-अन्देश जैचदसूर खरतर गच्छ की बफ़ज़ मलाजिमत हज़रते माशरफ इश्रति साम याफ़्ता हक़ीक़त व ख़ुदा तलवी ओ व ज़हूर पैय (व?) स्तावूद। ओरा मशमूल मराहिम शाहंशाही फ़रमूदेम्। मुशारन् ईले है इलतिमास नमू (मू?) द कि पेश अज़ीं हीरविजयसूरि माशरफ शरफ मुलाजिमत दर्याफ्ता बूद। दर हर साल दोवाज़दह रोज़ इस्तदुआ नमूदा बूद की दरां अय्याम दर ममालिके महरुमा तम-लीक़ जांदारे न शवद। व अहदे पैरामन मुर्ग व माही व अमसाले आं न गरदद। व अज़राय मेहरबानी व जां परवरी मुलतमसे ऊ-दरजे क़बूल यापत। अवलू (नू?) उम्मेदवारम् कि यक हफ्ते दीगर ई-दूवागो मिसले आं हुक्मे आली शरफ़ सुदूर यावद्। बिनाबर उमूम य(रा?)फ़त हुक्म फ़रमूदेम् की अज़ तारीख़ नोमि ता पूरनमासी अज़ शुक्ल पक्ष असाढ़ दर हर साल तमलीक जांदारे न शवद्। व अहदे दर मक़ाम आज़ार, जांदार………मोरे नागरदद। व असल व

खुद आँनस्त कि चूं हजरते वै चूं अज़ बराए आदमी चंदीं इन्थामत-हाय गुनागूं मुहय्या करदा अस्त। दर् हेच वक्त दर् आज़ार जान-वर व शवद्। व शिकमे खुदरा गोर हैवा नात न साज़द। लेकिन बजेहत बाजे मसालह दानायान पेश तजवीज़ नमूदा अंद। दरीं-विला आचार्य जिनसिंह सूरि उर्फ मानसिंह व अरज़ अशरफ अक़-दस रसानीद की फ़रमाने कि क़त्ल अजीं बशरह सदर अज सुदूर याफ्ता बूद गुम शुदा। बिना बरॉ मुताबिक मज़मून हुआ फरमान मुजद्दद फ़रमान मरहमत फ़रमुदम्। मे बायद् कि हस्बुल मस्तूल (र?) अमल नमदा व तक़दीम रसानंद। व अज़ फरमुदह तख़ल्लुफ व इनहिराफ़ नवरजंद। दरीं बाब निहायत एतहमाम व क़दगन् अजीम लाजिम दानिस्ता तगइयुर व तबद्दुल् बकबायद आँ राह न दिहंद। तहरीरन् फीरोज़ रोज़ सी व यकुम माह खुरदाद् इलाही सन् ४९।

(१) "ब रिसालए मुक़र्रबुल हज़रत स्सुलतानी दौलतख़ाँ दर चौकी (उमदे उमरा)

(२) "ज़ुबद तुल आयान राय मनोहर दर नौबत वाक़या नवीसी ख़ाजा लालचंद"।

जोधपुर निवासी मुन्शी देवीप्रसादजीने इसका अनुवाद हिन्दी में इस तरह किया है :—

फ़रमान अकबर बादशाह ग़ाज़ीका



"सूबे मुलतानके बड़े २ हाकिम, जागीरदार, करोड़ी और सब मुत्सद्दी (कर्मचारी) जानलें कि हमारी यही मानसिक इच्छा है कि सारे मनुष्यों और जीव जन्तुओं को सुख मिले, जिससे सब लोग अमन चैन में रहकर परमात्मा की आराधना में लगे रहें। इससे पहिले शुभ-चिन्तक तपस्वी जयचन्द (जिनचंद्र) सूरि खरतर (गच्छ) हमारी सेवामें रहता था। जब उसकी भगवद्भक्ति प्रकट हुई तब हमने उसको अपनी बड़ी बादशाही की महरबानियोंमें मिला लिया। उसने प्रार्थना की कि इससे पहिले हीरविजयसूरि ने सेवामें उपस्थित होनेका गौरव प्राप्त किया था और हरसाल बारह दिन मांगे थे, जिन में बादशाही मुल्कोंमें कोई जीव मारा न जावे और कोई आदमी किसी पक्षी, मछली और उन जैसे जीवों को कष्ट न दे। उसकी प्रार्थना स्वीकार हो गई थी। अब मैं भी आशा करता हूं कि एक सप्ताहका और वैसा ही हुक्म इस शुभचिन्तक के वास्ते हो जाय। इसलिये हमने अपनी आम दया से हुक्म फरमा दिया कि आषाढ़ शुक्ला पक्ष की नवमी से पूर्णमासी तक सालमें कोई जीव मारा न जाय और न कोई आदमी किसी जानवरको सतावे। असल बात तो यह है कि जब परमेश्वरने आदमीके वास्ते-भांति भांतिके पदार्थ उपजाये हैं तब वह कभी किसी जानवरको दुःख न दे और अपने पेटको पशुओं का मरघट न बनावे। परन्तु कुछ हेतुओंसे अगले बुद्धिमानों ने वैसी तजवीज की है। इन दिनों आचार्य 'जिनसिंह' उर्फ मानसिंह ने अर्ज कराई कि पहिले जो ऊपर लिखे अनुसार हुक्म हुवा था वह खो गया है इसलिये हमने उस फरमान के अनुसार नया फरमान इनायत

किया है। चाहिये कि जैसा लिख दिया गया है वैसा ही इस आज्ञा का पालन किया जाय। इस विषय में बहुत बड़ी कोशिश और ताकीद समझ कर इसके नियमों में उलट फेर न होने दें। ता० ३१ खुरदाद इलाही। सन् ४९ ॥

हजरत बादशाह के पास रहनेवाले दौलतखाँको हुक्म पहुँचाने से उमदा अमीर और सहकारी राय मनोहर की चौकी और ख्वाजा लालचंद के वाकिया (समाचार) लिखनेकी बारीमें लिखा गया।"*

* यह फरमान लखनऊ में खरतर गच्छ के भण्डार में है। इसकी नकल 'कृपारस कोष' पृ० ३२ में भी छप चुकी है। मूल फरमान फारसी में है, और उपर शाही मुहर लगी हुई है।



॥ शाही फरमान नं० २ ॥

नकल पातसाइ परवाने री इण ठिकाने नव मोर री छाप

थी

सेत्रुंजा पर देहरा अरु किल्ला है सो तमाम जैन मारग के यात्रा का जगा है अरु भांण क्षेत्र (भानुचन्द्र?) सेवड मना करता है अरु किल्ला में देहरा मत करो। पहिला वखत में भरत चक्रवर्ती ने पा(हा)ड़ पर किल्ला अरु देहरा बनाया, दूसरी वखत सगर चक्रवर्ती सोनदेव के बेटे ने पाड पर देहरा वणाया, तीसरे वखत राजा जुधिष्ठर पांडव ने पाड पर देहरा वणाया, चोथा वखत विक्रमादित्य के एकसोआठ सन में जावड वनीये ने देहरा वणाया, पांचवा वखत १२१३ सन्में मेहता वाहडदे जयसिंहदेव के चाकर ने पाड पर देहरा वणाया, छठा वखत अलाउदीनके वखत में १३०० (१३७१?) सन् में समर वनीये ने एक मूरत नवी बनवाइ और जुने देहरे में रखी, सातवें * वखत बहादर (शाह) गुजराती के अमल में १५८७ सन् में करमांन डोसी ने जो चं प्रान ! पुनमीयें गछ का था, उसने जुने देहरे का मरमत करवाया और जुनी जुरा जरा मुरतां तुटेली थी सो भंडार कीवी और नवी मूरत जुने देहरा में थापना कीवी। आठवी वखत १५६१ सन में मजादेहखान गुजराती ने देहरे कुं तोड़ा, कितनीक

---

* इस फरमानकी नकलमें जिन सात उद्धारोंका उल्लेख है, उनका वर्णन कवि-लावण्यसमय कृत शत्रुञ्जयउद्धार स्तवनमें इस प्रकार है :—

उद्धार पहिलउ भरत केरु, बीजउ सगर सुहावए।
त्रीजउ ति पाण्डव राय युधिष्टर, पृहवी प्रगट करावए।
चुउथउ ति जावड सनद वाहड, कराव्युं जग जाणीयइ।
उद्धार छट्ठो साहं समरा, सातउ करमिय वखाणिमए॥

मूरतां तोड़ी। पीछे करमान डोसीने ऊपुर नु आकर देहरा कुं मूरतां को मरम्मत किया। १५९२ सन् में राजकाज युक्त हुमायु वादशा गुजरात में आये, १५९३ सन् में वादर गुजराती कुं फिरंगी ने मारा, सुलतान अहमद पातस्या हुआ अरु इस महमद के अमल में ॥ (आधा) वरसतक सोरठ (देश) के मुलक में दंगा रह्या, उस पीछे एकहजार पांचसौच्यार (में) सैत्रुंजा मजादाहखान कुं जागीरी में मिला। उस पीछे अञ्चलगच्छ के जसवन्त पसारी वहुत आताजाता, मजाहीदखान का जागीरी में उस अपने साहिव कुं वीनति किया, फागुण सुदि ३ सुकरवार के दिन अमारत शुरू करी एक वड़ा देवल वनाया ३५ छोटे वनाए, अरु खरतर गच्छके वनिया ने २२ देहरा वनाया अरु किल्लामें अंवारथ (त?) भी कराया। कर (ड) वामती के गच्छ के वनिये ने किल्ले के दरम्यान अम्वारत (इमारत?) करके २ देहरे वनाए, पायचंद गच्छ के वनिये ने किल्ले में अम्वारत करके देहरा ३ वनाया अञ्चलगच्छ के वनियेने वोहट अस (अरु?) ववरुवालने ३ वरस तलक किल्लामें अम्वारत किया, वड़े देहरे ३(तीन) वनाए और छोटे ९ वनाए इलाहीके आठमें सनमें राजकाज युक्त पातशाहके १३ सन् में पदमो(?) डोसी अरु हुंमान मोहते ओसवाल खरतरान गच्छके थे, उनहीं ने अम्वारत करके ५ वरस तक टूटे हुवे देहराकी मरम्मत करवाई,

---

इस तीर्थ मालामें उपरोक्त ६ उद्धारके वर्णनके पश्चात् सातवां उद्धार करमा शाह डोसी ने सं० १५८७ में कराया जिसका वर्णन है। जावड़शाह का चौथा उद्धार होना कवि 'देपाल' कृत 'जावड़ भावड़ रास' से भी सिद्ध होता है। यथा —

जावड़ प्राग-वंश सिणगार, सोरठिउ सहजिइ सुविचार।
जेहनउ शत्रुंजि चउथु उद्धार, तसु गुण पुहवी न लाभइ पार ॥१०८॥
(उक्त रासकी नकल हमारे संग्रह में है)

जयसोमजी कृत कर्मचन्द्र मंत्री वंश प्रवन्धमें भी :—

उद्धारान् स त चैत्यानां कारणाद्विदधुः पुरा।

रामजी तपाने किल्लामें देहरा वनाया, इलाहीके १६ सन् में गुजरात के मुलक में काल पड्या, इस वास्ते४ (चार) वरसतलक सेत्तुंजा उजड़ रहा। उस पीछे इलाहीके २२ सन् में.............................आवादान हुआ अरु अल्लाही के २५ सन् में तपागच्छ के जसू बनिये ने देहरा वनाया। फते इलाहीके ३० सन् में खरतरान के सीस मेहता सारंग लाहौरमे पातस्याहके कदंवो से हुवा था। उसने रायण के भाडके.... नीचे ४ वड़े देवल किल्ले में करवाये। अल्लाही के ३६ सन में सहरयूर महीनेमें पातसा ने गिरनार सत्रुंजा और पालीताणे के देहरे सम्पूर्ण कृपासे महता कर्मचंद कुं कृपादान किया और इस वाव(त)में फरमान मूहर वाला कर दिया। अव करमान मेहताने भलमणसाइ करके जैन मारग के तमाम गच्छ के लोगां कुं सव देहरे दे डाले। इस वास्ते के मुझे तो पातसाने कृपाकर दए,हमे सेत्रुंजा के सव देहरे तवाव(तमाम) जैन मारग के टोला के है। मुझे एकला कुं राखणे लायक नहीं, अरु तेहुत्तर वरस हुवे के छोटे तपागच्छ ने हीरविजय सूर तपा के गच्छ कुं अपनेसे जुदा किया अरु हीरविजयसूर के चेले भाणचन्द कुं पूछणा चाहियें के आदिनाथके देहरा अरु किल्ला ७३ वर्ष पहले तुमारा था के ७३ वरस पीछे तुमारा हुवा, अगर भाणचंद केहेवे ७३ वरस पहला किल्ला हमारा था तो छोटे तपागच्छका लिखा हुआ त (?) को किससे हीरविजेसूर का गंच्छ जुदा हुवा लिखा हुआ अपने हाथमें है के सतरुंजा अरु आदिनाथका देहरा किलातमाम जैन मारगका है, अगहर कोइ दावा हरकत करे सो भूठा, अगर कोई तपा मतके कहते हैं, सेत्रुंजा हमारा है सो विचार कर तजवीज करेगा, सेत्रुंजा तमाम जैन मारग का है, कृपादान परवाना 'कर्मचन्द' का है।×

× मूल फरमान का यह अनुवाद, विकानेर के (वड़े उपाश्रयमें) तभंडारस्थ १६ वी शताब्दी लिखित १ पत्र की तद्वत नकल करके प्रकाशित किया गया है, अनुवादकर्ता की असावधानी के कारण [illegible] कई भूलें रह गयी ज्ञात होती हैं।

अल्लाह अकबर

नकल प्रतिभाशाली (चमकदार) फरमान जिसपर मुहर "अल्लाह अकबर" लगी हुई है।

तारीख शहरयूर ४ माह महर आलही सन् ३७

चूंकि उमदतूल मुल्क रुकनूस सल्तनत उल काहेरात उजदूद-दौला निजामुद्दीन सइदखां जो वादशाह का कृपापात्र हैं, मालुम हो चूकि मेरा (वादशाह का) पूर्ण हृदय तमाम जनता यथा सारे जानदारों (जीवधारियों) के शान्ति के लिए लगा है कि समस्त संसार के निवासी शान्ति और सुख के पालने में रहें। इन दिनों में ईश्वर भक्त व ईश्वर के विषय में मनन करने वाले जिनचन्द्रसूरि खरतर भट्टारकको मेरे मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। उसकी ईश्वर भक्ति प्रगट हुई, मैंने उसको वादशाही मिहरवानियों से परिपूर्ण कर दिया उसने प्रार्थना की कि इससे पहिले ईश्वर-भक्त हीरविजयसूरि तपसाने (हजूरके) मिलने का सौभाग्य प्राप्त किया था उसने प्रार्थना की थी कि हरसाल वारह दिन साम्राज्य में वध न हो और किसी चिड़िया या मच्छी के पास न जाय (न सतावें) उसकी प्रार्थना कृपाकी दृष्टि से व जीव वचाने की दृष्टि से स्वीकार हुई थी अब मैं आशा करता हूं कि मेरे लिए (एक) सप्ताह भर के लिए उसी तरह से (वादशाहका) हुक्म हो जाय। इसलिए हमने पूर्ण दया से हुक्म किया कि आषाढ मास के शुक्लपक्ष में सातदिन जीव वध न हो और न सताने वाले (गैर मूजी) पशुओं को कोई न सतावे, उसकी तफसील यह हैं :—नवमी, दसमी, एकादशी, द्वादशी, त्रयोदशी, और पूर्णमासी। वास्तव में वात यह है कि चूंकि आदमी ईश्वर ने भिन्न भिन्न अच्छे पदार्थ दिए हैं अतः उसे पशु सताना चाहिए और अपने पेट को पशुओं की कब्र न

अष्टाह्निकामादि शाही फरमान नं० १